इस्लाही ख़ुतबात

9

जस्टिस मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी

इस्लाही ख़ुतबात

(9)

जस्टिस मौलाना मुफ़्ती
मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी

अनुवादक

मुहम्मद इमरान क़ासमी एम०ए० (अलीग)

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो प्रा० लि०
422, मटिया महल, ऊर्दू मार्किट, जामा मस्जिद देहली 6
फोन आफ़िस, 3289786,3289159, आवास, 3262486

☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆

नाम किताब	इस्लाही खुतबात जिल्द (9)
ख़िताब	मौलाना मुहम्मद तक़ी उस्मानी
अनुवादक	मुहम्मद इमरान क़ासमी
संयोजक	मुहम्मद नासिर ख़ान
तायदाद	2100
प्रकाशन वर्ष	अप्रैल 2002
कम्पोज़िंग	इमरान कम्प्यूटर्स मुज़फ़्फ़र नगर (0131-442408)

>>>>>>>>>>>>

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो प्रा० लि०

422, मटिया महल, ऊर्दू मार्किट, जामा मस्जिद देहली 6

फ़ोन आफ़िस, 3289786,3289159, आवास, 3262486

मुख़्तसर फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

तफ़्सीली फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

(85) इस्लाम का मतलब क्या है?

(87) क्या आपको ख़्यालात परेशान करते हैं?

पेश लफ़्ज़

हज़रत मौलाना मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी

بسم اللہ الرحمن الرحیم

الحمد لله وكفى وسلام على عباده الذين اصطفى، امابعد

अपने बाज़ बुज़ुर्गों के इर्शाद की तामील में अह्क़र कई साल से जुमे के दिन अ़सर के बाद जामा मस्जिद बैतुल मुकर्रम गुलशन इक़बाल कराची में अपने और सुनने वालों के फ़ायदे के लिए कुछ दीन की बातें किया करता है। इस मज्लिस में हर तब्क़ा–ए–ख़्याल के हज़रात और औरतें शरीक होते हैं। अल्हम्दु लिल्लाह! अह्क़र को ज़ाती तौर पर भी इसका फ़ायदा होता है और अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल से सुनने वालों भी फ़ायदा महसूस करते हैं। अल्लाह तआ़ला इस सिलसिले को हम सब की इस्लाह का ज़रिया बनाएं, आमीन।

अह्क़र के ख़ुसूसी मददगार मौलाना अ़ब्दुल्लाह मेमन साहिब सल्ल–महू ने कुछ मुद्दत से अह्क़र के उन बयानात को टेप रिकार्डर के ज़रिये महफ़ूज़ करके उनके कैसिट तैयार करने और उनको शाया करने का एहतिमाम किया, जिसके बारे में दोस्तों से मालूम हुआ के अल्लाह के फ़ज़्ल से उनसे भी मुसलमानों को फ़ायदा पहुंच रहा है।

उन कैसिटों की तायदाद अब दो सौ से ज़ायद हो गयी है, उन्हीं में से कुछ कैसिटों की तक़रीरें मौलाना अ़ब्दुल्लाह मेमन साहिब सल्ल–महू ने क़लम बन्द भी फ़रमा लीं, और उनको छोटे छोटे रिसालों की शक्ल में शाया किया। अब वह उन तक़रीरों का मजमूआ "इस्लाही ख़ुतबात" के नाम से शाया कर रहे हैं।

इनमें से बाज़ तक़रीरों को अह्क़र ने देखा भी है, और मौसूफ़ ने उन पर एक मुफ़ीद काम भी किया है, कि तक़रीरों में जो हदीसें आती हैं उनको असल किताबों से निकाल करके उनके हवाले भी

दर्ज कर दिए हैं, और इस तरह उनका फायदा और ज़्यादा बढ़ गया है।

इस किताब के मुताले के वक़्त यह बात ज़ेहन में रहनी चाहिए कि यह कोई बाक़ायदा तसनीफ़ नहीं है, बल्कि तक़रीरों का ख़ुलासा है जो कैसिटों की मदद से तैयार किया गया है। इसलिये इसका अन्दाज़ तहरीरी नहीं बल्कि ख़िताबी है। अगर किसी मुसलमान को इन बातों से फ़ायदा पहुंचे तो यह महज़ अल्लाह तआला का करम है, जिस पर अल्लाह तआला का शुक्र अदा करना चाहिए, और अगर कोई बात ग़ैर मोह्तात या ग़ैर मुफ़ीद है तो वह यक़ीनन अह्क़र की किसी गलती या कोताही की वजह से है। लेकिन अल्हम्दु लिल्लाह! इन बयानात का मक़सद तक़रीर बराय तक़रीर नहीं, बल्कि सब से पहले अपने आपको और फिर सुनने वालों को अपनी इस्लाह की तरफ़ मुतवज्जह करना है।

अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल व करम से इन खुतबात को खुद अह्क़र की और तमाम पढ़ने वालों की इस्लाह का ज़रिया बनायें, और ये हम सब के लिए ज़ख़ीरा–ए–आख़िरत साबित हों। अल्लाह तआला से मज़ीद दुआ है कि वह इन खुतबात के मुरत्तिब और नाशिर को भी इस ख़िदमत का बेहतरीन सिला अता फ़रमाएं, आमीन।

मुहम्मद तक़ी उस्मानी

بسم الله الرحمٰن الرحيم

अर्ज़ि नाशिर

अल्हम्दु लिल्लाह "इस्लाही ख़ुतबात" की नवीं जिल्द आप तक पहुंचाने की हम सआदत हासिल कर रहे हैं। आठवीं जिल्द की मक़बूलियत और इफ़ादियत के बाद मुख़्तलिफ़ हज़रात की तरफ़ से नवीं जिल्द को जल्द से जल्द शाया करने का शदीद तक़ाज़ा हुआ, और अब अल्हम्दु लिल्लाह, दिन रात की मेहनत और कोशिश के नतीजे में सिर्फ़ चन्द माह के अन्दर यह जिल्द तैयार होकर सामने आ गयी। इस जिल्द की तैयारी में बिरादरे मुकर्रम मौलाना अ़ब्दुल्लाह मेमन साहिब ने अपनी मसरूफ़ियात के साथ साथ इस काम के लिए अपना क़ीमती वक़्त निकाला, और दिन रात की अंथक मेहनत और कोशिश करके नवीं जिल्द के लिए मवाद तैयार किया। अल्लाह तआ़ला उनकी सेहत और उम्र में बर्कत अ़ता फ़रमाए, और मज़ीद आगे काम जारी रखने की हिम्मत और तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन।

हम जामिया दारुल उलूम कराची के उस्तादे हदीस जनाब मौलाना मह्मूद अशरफ़ उस्मानी साहिब मद्दज़िल्लहुम और मौलाना अ़ज़ीज़ुर्रहमान साहिब मद्दज़िल्लहुम के भी शुक्रगुज़ार हैं, जिन्होंने अपना क़ीमती वक़्त निकाल कर इस पर नज़रे सानी फ़रमाई, और मुफ़ीद मश्विरे दिए, अल्लाह तआ़ला दुनिया व आख़िरत में उन हज़रात को बेहतरीन अज्र अ़ता फ़रमाए, आमीन।

तमाम पढ़ने वालों से दुआ की दरख़्वास्त है कि अल्लाह तआ़ला इस सिलसिले को और आगे जारी रखने की हिम्मत और तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, और इसके लिए वसाइल और अस्बाब में आसानी पैदा फ़रमाए। इस काम को इख़्लास के साथ जारी रखने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए।

नाशिर

بسم الله الرحمن الرحيم

कामिल ईमान की चार निशानियां

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

من اعطى لله ومنع لله واحب لله وابغض لله فقد استكمل ايمانه

(ترمذی شریف، باب نمبر۶۱)

जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया "जो शख़्स किसी को कुछ दे तो अल्लाह तआला के लिए दे, और किसी को देने से मना करे तो अल्लाह के लिए मना करे। अगर किसी से मुहब्बत करे तो अल्लाह के लिए करे, और अगर किसी से बुग्ज़ और दुश्मनी रखे तो अल्लाह के लिए रखे। तो उस शख़्स का ईमान कामिल हो गया। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसके ईमान के कामिल होने की गवाही दी।

पहली निशानी

कामिल ईमान की पहली निशानी यह बयान फ़रमाई कि वह दे तो अल्लाह के लिए दे। इसका मतलब यह है कि अगर कोई शख़्स किसी मौक़े पर कुछ ख़र्च कर रहा है तो उस ख़र्च करने में अल्लाह तआला को राज़ी करने की नियत हो। इन्सान अपनी ज़ात पर भी ख़र्च करता है, अपने अह्ल व अयाल (बाल बच्चों और घर वालों) पर

भी खर्च करता है, और सदका खैरात भी करता है, तो इन तमाम मौकों पर ख़र्च करते वक्त अल्लाह तआला को राज़ी करने की नियत हो। सदका खैरात में तो यह बात वाज़ेह है कि उसको देते वक्त यह नियत होनी चाहिए कि मैं अल्लाह तआला को राज़ी करने के लिए सदका दे रहा हूं, और अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल व करम से इसका सवाब मुझको अता फ़रमा दें। उस सदके में एहसान जताना मक़सूद न हो, नाम नमूद मक़सूद न हो, दिखावा मक़सूद न हो, तो यह देना अल्लाह तआला के लिए हुआ।

ख़रीद व बेच के वक्त यह नियत कर लें

सदका ख़ैरात के अलावा भी जहां ख़र्च करो तो वहां भी अल्लाह तआला को राज़ी करने की नियत कर लो। जैसे फ़र्ज़ करें कि आपने कोई चीज़ ख़रीदी और दुकानदार को पैसे दे दिए। अब बज़ाहिर तो यह एक दुनियावी मामला है, लेकिन अगर वह चीज़ जैसे गोश्त, तरकारी ख़रीदते वक्त यह नियत कर ली कि अल्लाह तआला ने मेरे अह्ल व अयाल के जो हुकूक मेरे ज़िम्मे आयद कर रखे हैं, उन हुकूक की अदाएगी के लिए यह ख़रीदारी कर रहा हूं। और अगर इसी तरह दूसरी नियत यह कर ली कि मैं दुकानदार के साथ ख़रीद व बेच का जो मामला कर रहा हूं वह अल्लाह तआला के बताए हुए उस हलाल तरीके के मुताबिक कर रहा हूं जो तरीका अल्लाह तआला ने मेरे लिए जायज़ किया है, और हराम तरीके से मामला नहीं कर रहा हूं, तो इन दो नियतों के साथ ख़रीदारी का जो मामला किया और दुकानदार को जो पैसे दिए, यह देना अल्लाह के लिए हुआ। अगरचे बज़ाहिर यह नज़र आ रहा है कि तुमने एक दुनियावी लेन देन का मामला किया, और गोश्त ख़रीदा या कपड़ा ख़रीदा या तरकारी ख़रीदी लेकिन यह देना अल्लाह के लिए हुआ।

सिर्फ़ नुक्ता-ए-निगाह बदल लो

हमारे हज़रत डॉ. अब्दुल हई साहिब रह. फ़रमाया करते थे कि

दीन और दुनिया में सिर्फ़ नुक्ता-ए-निगाह का फ़र्क़ है। अगर नुक्ता-ए-निगाह बदल लो तो वही दुनिया तुम्हारे हक़ में दीन बन जायेगी। इसका तरीक़ा यह है कि तुम दुनिया के अन्दर जो कुछ काम कर रहे हो, सोना, जागना, उठना, बैठना, खाना, पीना। ये सब करते रहो, मगर ज़रा सा नुक्ता-ए-निगाह बदल लो। जैसे खाना खाना एक दुनियावी काम है, लेकिन खाना खाते वक़्त ज़रा यह सोच लो कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः

ان لنفسك عليك حقا (صحيح بخاری)

यानी तुम्हारे नफ़्स का भी तुम्हारे ऊपर कुछ हक़ है। उस हक़ की अदाएगी के लिए यह खाना खा रहा हूं। और यह सोच लो कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने जब खाना आता तो आप उसको अल्लाह तआ़ला की नेमत समझ कर उस पर शुक्र करते हुए खाना तनावुल फ़रमा लिया करते थे। मैं भी आपकी इसी सुन्नत की इत्तिबा में खाना खा रहा हूं। तो अब यही दुनियावी काम दीन का काम बन गया। इसलिए वे सारे काम जिनको हम दुनियावी काम समझते हैं, उनमें कोई भी काम ऐसा नहीं है जिसको हम नुक़्ता-ए-निगाह की तब्दीली से दीन न बना सकें, और उसको अल्लाह के लिए न बना सकें। सुबह से लेकर शाम तक की ज़िन्दगी में जितने काम हम करते हैं उनके बारे में ज़रा सोचें कि मैं उनके अन्दर नुक़्ता-ए-निगाह बदल कर किस तरह उनको दीन बना सकता हूं।

हर नेक काम सदक़ा है

लोग समझते हैं कि सदक़ा करना सिर्फ़ इसका नाम है कि आदमी किसी ज़रूरत मन्द को पैसे दे दे, या किसी ग़रीब को खाना खिला दे, वग़ैरह। बस यह काम सदक़ा है, इसके अ़लावा कोई काम सदक़ा नहीं। लेकिन हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हर नेक काम जो नेक नियत से किया जाए

व सदक़ा है, यहां तक फ़रमाया कि खाने का वह लुक्मा जो इन्सान अपनी बीवी के मुंह में डाले, यह भी सदक़ा है। यह सदक़ा इसलिये है कि आदमी यह काम इसलिए कर रहा है कि अल्लाह तआ़ला ने मेरे ज़िम्मे यह हक़ आयद किया है। इस हक़ की अदाएगी के लिए यह काम कर रहा हूं, तो अल्लाह तआ़ला उसको उस काम पर सदक़े का अज्र व सवाब अ़ता फ़रमायेंगे। ये सब काम अल्लाह के लिए देने में दाख़िल हैं।

दूसरी निशानी

दूसरी निशानी यह बयान फ़रमाई कि अगर रोके और मना करे तो अल्लाह तआ़ला के लिए रोके। जैसे किसी जगह पर पैसा ख़र्च करने से बचाया तो वह बचाना भी अल्लाह के लिए हो। चूंकि अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि फ़ुज़ूल ख़र्ची न करो। उस फ़ुज़ूल ख़र्ची से बचने के लिए मैं अपना पैसा बचा रहा हूं। तो यह बचाना और रोकना अल्लाह के लिए है। या जैसे कोई शख़्स आप से ऐसे काम के लिए पैसों का मुतालबा कर रहा है जो काम शरीअ़त के एतिबार से मना है। अब आपने उस काम के लिए उसको पैसे नहीं दिए तो यह न देना अल्लाह के लिए हुआ।

रस्म के तौर पर हदिया देना

हमारे समाज में न जाने कैसे कैसे रस्म व रिवाज पड़ गए हैं, कि उस मौक़े पर फ़लां तोह्फ़ा दिया जाता है, उस मौक़े पर फ़लां तोह्फ़ा दिया जाता है, उस मौक़े पर यह रस्म है। अगर उस मौक़े पर नहीं देंगे तो नाक कट जायेगी। अब उस मौक़े पर तोह्फ़ा देने का न तो शरीअ़त ने कोई हुक्म दिया और न अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कोई हुक्म दिया। जैसे तक़रीबात और शादियों में "न्यौता" दिया जाता है। इसको इस क़द्र लाज़मी समझा जाता है कि चाहे किसी के पास पैसे हों या न हों।

चाहे वह कर्ज़ ले, चाहे वह हराम तरीके से कमा कर दे या रिश्वत लेकर दे, लेकिन यह "न्यौता" ज़रूर दे। अगर नहीं देगा तो समाज में नाक कट जायेगी। अब एक शख़्स के पास देने के लिए पैसे मौजूद हैं, और समाज की तरफ़ से देने का मुतालबा भी है, लेकिन वह शख़्स सिर्फ़ इसलिये नहीं दे रहा है कि चाहे समाज के अन्दर नाक कट जाए लेकिन मेरा अल्लाह तआला तो राज़ी होगा, अब यह रोकना अल्लाह के लिए होगा। यह भी कामिल ईमान की निशानी है।

तीसरी निशानी

तीसरी निशानी यह बयान फ़रमाई कि अगर मुहब्बत करे तो अल्लाह के लिए मुहब्बत करे। देखिए एक मुहब्बत तो बग़ैर किसी शायबे के ख़ालिस तौर पर अल्लाह के लिए होती है। जैसे किसी अल्लाह वाले से मुहब्बत है, ज़ाहिर है कि उस से मुहब्बत इस वजह से नहीं होती कि उस से पैसे कमायेंगे, बल्कि उस से मुहब्बत इसलिये होती है कि उस से मुहब्बत और ताल्लुक़ रखेंगे तो हमारे दीन का फ़ायदा होगा और अल्लाह तआला राज़ी होंगे। यह मुहब्बत अल्लाह के लिए है और बड़ी बर्कत की और बड़े फ़ायदे की चीज़ है।

दुनिया की ख़ातिर अल्लाह वालों से ताल्लुक़

कभी कभी शैतान और इन्सान का नफ़्स उस मुहब्बत में भी सही रास्ते से गुमराह कर देता है। जैसे अल्लाह के वलियों से उस ताल्लुक़ के वक़्त शैतान यह नियत दिल में डाल देता है कि अगर हम उनके क़रीबी बनेंगे तो दुनिया वालों की निगाह में भी हमारी क़द्र व क़ीमत बढ़ जायेगी। अल्लाह अपनी पनाह में रखे। या जैसे लोग यह कहेंगे: यह साहिब तो फ़लां बुज़ुर्ग के ख़ास आदमी हैं। इसका नतीजा यह होता है कि जो मुहब्बत ख़ालिस अल्लाह के लिए होनी चाहिए थी वह अल्लाह के लिए नहीं होती, बल्कि वह मुहब्बत दुनिया दारी का ज़रिया बन जाती है। या बाज़ लोग किसी अल्लाह वाले के साथ इसलिए राबता जोड़ते हैं कि उनके पास हर क़िस्म के लोग

आते हैं। ओहदे वाले और इक़्तिदार वाले भी आते हैं और बड़े बड़े मालदार लोग भी आते हैं। जब हम उन बुज़ुर्ग के पास जायेंगे तो उन लोगों से भी ताल्लुक़ात क़ायम होंगे, और फिर उस ताल्लुक़ के ज़रिये उनसे अपनी ज़रूरियात और अपने मक़ासिद पूरे करेंगे। अल्लाह की पनाह। इसका नतीजा यह होता है कि जो मुहब्बत अल्लाह के लिए होनी थी वह दुनिया हासिल करने के लिए हो गयी। लेकिन अगर कोई शख़्स किसी अल्लाह वाले के पास या किसी उस्ताद के पास या किसी शैख़ के पास दीन हासिल करने के लिए जा रहा है, तो यह मुहब्बत ख़ालिस अल्लाह के लिए है, और 'हुब फ़िल्लाह' में दाख़िल है, और उस मुहब्बत पर अल्लाह तआला ने बड़े फल और अज्र व सवाब का वायदा फ़रमाया है।

दुनियावी मुहब्बतों को अल्लाह के लिए बना दो

लेकिन उस मुहब्बत के अलावा जो दुनियावी मुहब्बतें कहलाती हैं, जैसे मां से मुहब्बत है या बाप से मुहब्बत है, या भाई बहन से मुहब्बत है, या बीवी बच्चों से मुहब्बत है, रिश्तेदारों से मुहब्बत है, दोस्तों से मुहब्बत है। अगर इन्सान ज़रा सा नुक़्ता-ए-निगाह बदल ले तो ये मुहब्बतें भी अल्लाह तआला के लिए हो जाती हैं। जैसे अगर कोई शख़्स मां बाप से मुहब्बत इस नियत से करता है कि अल्लाह और अल्लाह के रसूल जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हुक्म दिया है कि मां बाप से मुहब्बत करो। यहां तक फ़रमा दिया कि अगर कोई शख़्स मां बाप पर मुहब्बत से एक नज़र डाल ले तो अल्लाह तआला उस शख़्स को एक हज और एक उमरे का सवाब अ़ता फ़रमायेंगे। अब बज़ाहिर देखने में वह शख़्स तबई तक़ाज़े के नतीजे में मां बाप से मुहब्बत कर रहा है लेकिन हक़ीक़त में वह मुहब्बत अल्लाह के लिए है।

बीवी से मुहब्बत अल्लाह के लिए हो

बीवी से मुहब्बत है। अब बज़ाहिर तो यह मुहब्बत नफ़्सानी

तकाज़े से है। लेकिन इस मुहब्बत में अगर आदमी यह नियत कर ले कि अल्लाह और अल्लाह के रसूल जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस मुहब्बत का हुक्म दिया है, और मैं हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत की इत्तिबा में बीवी से मुहब्बत कर रहा हूं, तो यही मुहब्बत अब अल्लाह के लिए हो गयी। अब अगर एक शख़्स अल्लाह के लिए बीवी से मुहब्बत कर रहा है, और दूसरा शख़्स अपनी नफ़्सानी ख़्वाहिशों के लिए बीवी से मुहब्बत कर रहा है, तो बज़ाहिर देखने में दोनों की मुहब्बतें एक जैसी नज़र आयेंगी, कोई फ़र्क़ मालूम नहीं होगा, लेकिन दोनों मुहब्बतों में ज़मीन व आसमान का फ़र्क़ है। हदीसों में यह बात साबित है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अपनी पाक बीवियों से बड़ी मुहब्बत फ़रमाते थे, और उनकी दिलदारी के लिए कोई दक़ीक़ा नहीं छोड़ते थे। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अपनी पाक बीवियों के साथ ऐसे ऐसे मामलात नज़र आते हैं कि जो कभी कभी हम जैसे लोगों को आश्चर्य जनक मालूम होते हैं। जैसे हदीस शरीफ़ में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक बार हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा को ग्यारह औरतों की कहानी सुनाई कि ग्यारह औरतें एक जगह जमा हुईं और उन्होंने आपस में यह तय किया कि हर औरत अपने अपने शौहर का हाल बयान करेगी। फिर एक औरत ने यह कहा, दूसरी औरत ने यह कहा, तीसरी ने यह कहा, चौथी ने यह कहा, वग़ैरह। अब जिस ज़ाते ग्रामी पर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से 'वही' नाज़िल हो रही है, और जिस ज़ाते ग्रामी का हर वक़्त अल्लाह तआ़ला से राबता क़ायम है, वह ज़ाते ग्रामी अपनी बीवी को ग्यारह औरतों का क़िस्सा सुना रहे हैं। हदीस शरीफ़ में आता है कि एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सफ़र पर तशरीफ़ लेजा रहे थे, हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा साथ थीं, रास्ते में एक खुला मैदान आया तो आपने हज़रत आयशा से फ़रमाया कि दौड़ लगाओगी? उन्होंने अ़र्ज़

किया कि हां! चुनांचे आपने हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा के साथ उस मैदान में दौड़ लगाई। वहां बेपर्दगी का कोई एहतिमाल नहीं था। इसलिये कि जंगल था और कोई दूसरा शख़्स साथ नहीं था।

हमारे काम नफ़्सानी ख़्वाहिश के ताबे

अब बज़ाहिर ये काम ऐसे हैं जिनका अल्लाह तआला से या अल्लाह की इबादत से कोई ताल्लुक़ नज़र नहीं आता। इसी तरह हम में से कोई शख़्स बीवी की दिलदारी और उसकी दिलजोई के लिए इस क़िस्म का कोई तफ़रीह का काम करता है तो वह भी बज़ाहिर ऐसा ही लगता है जैसे हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दिलजोई का मामला फ़रमाया करते थे। लेकिन हमारे इस काम में और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के उस काम में ज़ीमन व आसमान का फ़र्क़ है। हम इस काम को अपनी नफ़्सानी ख़्वाहिश और नफ़्सानी तक़ाज़े की बुनियाद पर करते हैं, और जनाब मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपने बुलन्द मक़ाम से नीचे उतर कर इस काम को इसलिए कर रहे थे कि अल्लाह तआला ने हुक्म दिया है कि बीवी की दिलदारी करो।

"आरिफ़" कौन होता है?

सूफ़िया-ए-किराम ने फ़रमाया कि "आरिफ़" यानी जो अल्लाह की मारफ़त और शरीअत व तरीक़त की मारफ़त रखता हो, वह "आरिफ़" विभिन्न सिफ़तों का मजमूआ होता है। यानी उसकी ज़ात में और उसके अमल में ऐसी चीज़ें जमा होती हैं जो बज़ाहिर देखने में एक दूसरे की ज़िद और मुख़ालिफ़ मालूम होती हैं। जैसे एक तरफ़ उसका राबता अल्लाह तआला से भी जुड़ा हुआ है। अल्लाह के साथ भी ताल्लुक़ हासिल है, और याददाश्त का मलका भी हासिल है। यानी हर वक़्त अल्लाह तआला का ज़िक्र व फ़िक्र और उसकी याद दिल में बसी हुई है, और दूसरी तरफ़ लोगों के साथ और घर वालों

के साथ हंस रहा है, और बोल भी रहा है, खा भी रहा है, पी भी रहा है। इसलिये ऐसा शख़्स मुख़्तलिफ़ और विभिन्न सिफ़तों का मजमूआ होता है।

मुब्तदी और मुन्तही के दरमियान फ़र्क़

इसी तरह सूफ़िया–ए–किराम ने फ़रमाया कि जो आदमी मुब्तदी होता है। यानी जिसने अभी तसव्वुफ़ के रास्ते पर चलना शुरू किया है, और दूसरा आदमी जो मुन्तही होता है, यानी जो तसव्वुफ़ का पूरा रास्ता तय करके आख़री अन्जाम तक पहुंच गया है। इन दोनों की ज़ाहिरी हालत एक जैसी होती है। बज़ाहिर दोनों एक जैसे नज़र आते हैं, और जो आदमी दरमियान में होता है उसकी हालत अलग होती है।

जैसे एक शख़्स हम जैसा मुब्तदी है, जिसने अभी दीन के रास्ते पर चलना शुरू किया है, तो वह दुनिया के सारे काम कर रहा है, खा रहा है, पी रहा है, हंस रहा है, ख़रीद व बेच कर रहा है, बीवी के साथ हंसी मज़ाक़ कर रहा है। दूसरी तरफ़ हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हैं कि आप बाज़ार में ख़रीद व बेच भी कर रहे हैं, मज़दूरी भी कर रहे हैं, बीवी बच्चों के साथ हंस बोल भी रहे हैं। जब कि आप मुन्तही हैं। अब बज़ाहिर मुब्तदी और मुन्तही की हालत एक जैसी नज़र आ रही है। लेकिन हक़ीक़त में दोनों में ज़मीन आसमान का फ़र्क़ है। और एक तीसरा आदमी है जो मुब्तदी से ज़रा आगे बढ़ गया है, और दरमियान रास्ते में है। उसकी हालत अलग होती है। वह यह कि न तो वह बाज़ार में जाता है, न बीवी बच्चों के साथ हंसता बोलता है, और हर वक़्त अल्लाह की याद और ग़ौर व फ़िक्र में लगा हुआ है। सुबह से शाम तक इसके अ़लावा उसका कोई मश्ग़ला नहीं है। यह दरमियान वाला शख़्स है।

मुब्तदी और मुन्तही की मिसाल

हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अ़ली साहिब थानवी

रह्मतुल्लाहि अलैहिं ने इन तीनों शख़्सों को एक मिसाल के ज़रिये समझाते हुए फ़रमाया कि: जैसे एक दरिया है, एक आदमी दरिया के किनारे पर खड़ा है, और दूसरा आदमी दरिया पार करके दूसरे किनारे पर खड़ा है, और तीसरा आदमी दरिया के अन्दर है, दरिया पार कर रहा है, और हाथ पांव चला रहा है। और अब बज़ाहिर वह शख़्स जो उस किनारे पर खड़ा है, और यह शख़्स जो इस किनारे पर खड़ा है, दोनों की ज़ाहिरी हालत एक जैसी है। यह भी किनारे पर खड़ा है, और वह भी किनारे पर खड़ा है, लेकिन जो इस किनारे पर खड़ा है वह अभी तक दरिया में दाख़िल नहीं हुआ, और अभी तक उसने दरिया की मौजों का मुक़ाबला नहीं किया है। लेकिन जो शख़्स दूसरे किनारे पर खड़ा है वह दरिया पार करके और दरिया की मौजों का मुक़ाबला करके दूसरे किनारे पर पहुंच चुका है। और तीसरा शख़्स अभी दरिया में ग़ोते लगा रहा है, और दूसरे किनारे पर पहुंचने की कोशिश कर रहा है, और मौजों से लड़ रहा है, अब बज़ाहिर यह नज़र आ रहा है कि यह तीसरा शख़्स बड़ा बहादुर है जो दरिया की मौजों से खेल रहा है, और तूफ़ानों का मुक़ाबला कर रहा है, लेकिन हक़ीक़त में बहादुर वह है जो उन मौजों और तूफ़ानों का मुक़ाबला करके दूसरे किनारे पर पहुंच चुका है। और अब उसकी हालत उस शख़्स जैसी हो गयी जो अभी तक दरिया में दाख़िल ही नहीं हुआ। इस वजह से मुब्तदी और मुन्तही की हालत एक जैसी नज़र आती है। लेकिन हक़ीक़त में दोनों के दरमियान ज़मीन व आसमान का फ़र्क़ होता है।

अल्लाह के लिए मुहब्बत करने की मश्क़ की ज़रूरत

अब यह कि दुनियावी मुहब्बतें भी अल्लाह के लिए हो जाएं, यह दर्जा हासिल करने के लिए इन्सान को कुछ मश्क़ करनी पड़ती है। और बुज़ुर्गाने दीन और सूफ़िया–ए–किराम के पास जब कोई शख़्स अपनी इस्लाह कराने के लिए जाता है तो ये हज़रात मश्क़ कराते हैं

कि ये सारी मुहब्बतें उसी तरह रहें, लेकिन उन मुहब्बतों का नुक़्ता-ए-निगाह बदल जाए और उनका तरीक़ा इस तरह बदल जाए कि ये मुहब्बतें हक़ीक़त में अल्लाह के लिए हो जाएं। हमारे हज़रत डॉ० अ़ब्दुल हई साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि मैंने इन मुहब्बतों को बदलने की सालों मश्क़ की है, तब जाकर इसमें कामयाबी हुई, और इस तरह मश्क़ की है कि जैसे घर में दाख़िल हुए, खाने का वक़्त है, भूख लगी हुई है, अब खाना खाने के लिए बैठे और खाना सामने आया। अब दिल चाह रहा है कि जल्दी से खाना शुरू कर दें, लेकिन एक लम्हे के लिए रुक गये और दिल में यह ख़्याल लाये कि नफ़्स के तक़ाज़े से खाना नहीं खायेंगे। फिर यह सोचा कि अल्लाह तआ़ला ने मेरे नफ़्स का मुझ पर हक़ रखा है, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की आ़दत यह थी कि आपके सामने जब खाना आता तो आप शुक्र अदा करते हुए और खाने की तरफ़ अपनी ज़रूरत ज़ाहिर करते हुए खाना खा लिया करते थे। मुझे आपकी इस सुन्नत की इत्तिबा करनी चाहिए। इसलिये आपकी इत्तिबा में खाना खाता हूं। फिर खाना शुरू किया। इस तरह नुक़्ता-ए-निगाह बदल दिया।

बच्चों के साथ अल्लाह के लिए मुहब्बत

इसी तरह घर में दाख़िल हुए। देखा कि बच्चा खेल रहा है, और वह बच्चा खेलता हुआ अच्छा लगा, और दिल चाहा कि उसको उठा कर प्यार करूं, उसके साथ खेलूं। लेकिन एक लम्हे के लिए रुक गए और यह सोचा कि अपने नफ़्स के तक़ाज़े से बच्चे से प्यार नहीं करेंगे। फिर दूसरे लम्हे दिल में ख़्याल लाए कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत यह थी कि आप बच्चों से मुहब्बत फ़रमाया करते थे। एक बार आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जुमा के दिन मस्जिदे नबवी में जुमा का ख़ुतबा दे रहे थे, इतने में हज़रत हसन या हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हुमा गिरते

पड़ते मस्जिदे नबवी में पहुंच गए। जब आपने उनको आता देखा तो फ़ौरन मिम्बर से उतरे और उनको गोद में उठा लिया। एक बार आप नवाफ़िल पढ़ रहे थे, हज़रत उमामा रज़ियल्लाहु अन्हा जो बच्ची थीं, वह आकर आपके कन्धे पर किसी तरह सवार हो गयीं। जब आप रुकू में जाने लगे तो आपने उनको आहिस्ता से उठा कर नीचे उतार दिया। जब आप सज्दे में गये तो फिर वह आपके ऊपर सवार हो गईं। बहर हाल, बच्चों के साथ प्यार करना, मुहब्बत करना, उनके साथ खेलना, यह हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत है। इस सुन्नत की इत्तिबा में मैं भी बच्चे से प्यार करता हूं, और उनके साथ खेलता हूं। यह ख़्याल करके बच्चे को उठा लिया और सुन्नत का ख़्याल कर लिया। शुरू शुरू में आदमी तकल्लुफ़ से यह काम करता है, लेकिन बार बार करने के नतीजे में तकल्लुफ़ बाक़ी नहीं रहता, बल्कि वह काम तबीयत बन जाता है, और फिर उसके बाद सारी मुहब्बतें अल्लाह के लिए हो जाती हैं। चाहे बीवी से मुहब्बत हो, बच्चों से मुहब्बत हो या मां बाप से मुहब्बत हो।

यह नुस्ख़ा तो बहुत आसान है। इस से ज़्यादा आसान नुस्ख़ा और क्या होगा कि सब काम जो तुम करते हो, इसी तरह करते रहो, सिर्फ़ नुक़्ता–ए–निगाह बदल लो, और नियतों के अन्दर बदलाव ले आओ। लेकिन इस आसान नुस्ख़े पर अमल उस वक़्त होगा जब इन्सान इसके लिए थोड़ी सी मेहनत और मशक़्क़त करे, और हर हर क़दम पर इस मश्क़ को करने की कोशिश करे। फिर एक वक़्त ऐसा आयेगा कि ये सारी मुहब्बतें अल्लाह के लिए हो जायेंगी।

अल्लाह के लिए मुहब्बत होने की निशानी

अब देखना यह है कि अल्लाह के लिए मुहब्बत होने की निशानी क्या है? उसकी निशानी यह है कि अगर किसी वक़्त अल्लाह की मुहब्बत का तक़ाज़ा यह हो कि मैं उन मुहब्बतों को छोड़ दूं तो उस वक़्त इन्सान की तबीयत पर ना क़ाबिले बर्दाश्त बोझ न हो। यह इस

बात की निशानी है कि यह मुहब्बत अल्लाह के लिए है।

हज़रत थानवी रह. का एक वाक़िआ

हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि की एक बात याद आ गयी। वह यह कि एक बार आपने मज्लिस में मौजूद लोगों से फ़रमाया कि आज अल्लाह तआ़ला ने अपने इम्तिहान का एक अजीब मौक़ा अ़ता फ़रमाया। वह यह कि जब मैं घर गया और अहलिया (बीवी) से बात हुई तो अहलिया ने कड़वे लहजे में कोई बात कह दी। उस वक़्त मेरे मुंह से यह निकला कि "बीबी मुझे इस लहजे की बर्दाश्त नहीं, और अगर तुम कहो तो मैं यह करने के लिए तैयार हूं कि अपनी चारपाई उठा कर ख़ानक़ाह में डाल लूं और सारी उम्र वहीं गुज़ार दूं। लेकिन मुझे इस लहजे की बर्दाश्त नहीं। हज़रत ने फ़रमाया कि मैंने अपनी बीवी से यह बात कह तो दी लेकिन बाद में मैंने सोचा और अपना जायज़ा लिया कि बड़ी बात कह दी कि चारपाई उठा कर ख़ानक़ाह में डाल दूं और सारी उम्र इस तरह गुज़ार दूं। क्या तुम इस काम के करने पर क़ादिर भी हो? अगर बीवी कह दे कि चलो ऐसा कर लो तो क्या ऐसा कर लोगे? और सारी उम्र ख़ानक़ाह में गुज़ार दोगे? या वैसे ही झूठा दावा कर दिया? लेकिन जायज़ा लेने के बाद यह महसूस हुआ कि अल्हम्दु लिल्लाह इस काम पर क़ादिर हूं। चूंकि सारी मुहब्बतें अल्लाह के लिए हो गयी हैं, इसलिये अब अगर किसी वक़्त अल्लाह की मुहब्बत की ख़ातिर दूसरी मुहब्बत को छोड़ना पड़े तो उस वक़्त ना क़ाबिले बर्दाश्त बोझ नहीं होगा। क्योंकि वह मुहब्बत तब्दील होकर अल्लाह के लिए मुहब्बत बन गयी है।

लेकिन यह मक़ाम इतनी आसानी से हासिल नहीं होता, बल्कि इसके लिए मेहनत और मश्क़ करनी पड़ती है, और यह मेहनत और मश्क़ ऐसी चीज़ नहीं है जो ना मुम्किन हो, बल्कि हर इन्सान कर सकता है। फिर इस मेहनत और मश्क़ के नतीजे में अल्लाह तआ़ला मक़ाम अ़ता फ़रमा देते हैं। वह करके देखने की बात है। यह सब

"हुब लिल्लाह" अल्लाह के लिए मुहब्बत में दाखिल है।

चौथी निशानी

चौथी निशानी यह है कि बुग्ज़ और गुस्सा भी अल्लाह के लिए हो। यानी जिस आदमी पर गुस्सा है या जिस आदमी से बुग्ज़ है वह उसकी ज़ात से नहीं है, बल्कि उसके किसी बुरे अमल से है, या उसकी किसी ऐसी बात से है जो मालिके हकीकी की नाराज़गी का सबब है। तो यह गुस्सा और नाराज़गी अल्लाह तआला ही के लिए है।

ज़ात से नफ़रत न करें

इसलिये बुज़ुर्गों ने एक बात फ़रमाई है जो हमेशा याद रखने की है। वह यह कि नफ़रत और बुग्ज़ काफ़िर से नहीं बल्कि उसके "कुफ़्र" से है। "फ़ासिक" से बुग्ज़ नहीं बल्कि उसके "फ़िस्क" से बुग्ज़ है। नफ़रत और बुग्ज़ गुनाहगार से नहीं बल्कि उसके गुनाह से है। जो आदमी बुराइयों और गुनाह के अन्दर मुब्तला है, उसकी ज़ात गुस्सा का महल नहीं है बल्कि उसका फ़ेल गुस्से का महल है। इसलिये कि ज़ात तो काबिले रहम है। वह बेचारा बीमार है। कुफ़्र की बीमारी में मुब्तला है, बुराइयों की बीमारी में मुब्तला है, और नफ़रत बीमार से नहीं होती बल्कि बीमारी से होती है। इसलिये कि अगर बीमार से नफ़रत करोगे तो फिर उसकी कौन देख भाल करेगा? इसलिये बुराइयों, गुनाहों और कुफ़्र से नफ़रत होगी, उसकी ज़ात से नफ़रत नहीं होगी। यही वजह है कि अगर उसकी ज़ात बुराइयों और गुनाहों से बाज आ जाए तो वह ज़ात गले लगाने के लायक़ है। इसलिये कि ज़ात के एतिबार से उस से कोई झगड़ा और कोई ज़िद नहीं।

इस बारे में हुज़ूर सल्ल. का तर्ज़े अमल

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अमल को देखिए। वह ज़ात जिसने आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के महबूब चचा

हज़रत हमज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु का कलेजा निकाल कर चबाया था, यानी हज़रत हिन्दा और जो उसके सबब बने, यानी हज़रत वह्शी रज़ियल्लाहु अन्हु जब ये दोनों इस्लाम के दायरे में दाख़िल हो गए और इस्लाम कबूल कर लिया तो अब वे आपके इस्लामी बहन और भाई बन गए। आज हज़रत वह्शी के नाम के साथ "रज़ियल्लाहु अन्हु" कहते हैं। हिन्दा जिन्होंने कलेजा चबाया था, आज उनके नाम के साथ "रज़ियल्लाहु अन्हा" कहा जाता है। बात असल यह थी कि उनकी ज़ात से कोई नफ़रत नहीं थी, बल्कि उनके फ़ेल और उनके एतिक़ाद से नफ़रत थी, और जब वह बुरा फ़ेल और बुरा एतिक़ाद ख़त्म हो गया, तो अब उनसे नफ़रत का सवाल ही पैदा नहीं होता।

ख़्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया रह. का एक वाक़िआ

हज़रत ख़्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ऊंचा मक़ाम रखते हैं। उनके ज़माने में एक बड़े आ़लिम और फ़कीह मौलाना हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि मौजूद थे। हज़रत ख़्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया रह्मतुल्लाहि अ़लैहि बहैसियत "सूफ़ी" के मश्हूर थे, और यह बड़े आ़लिम "मुफ़्ती और फ़कीह" की हैसियत से मश्हूर थे। और हज़रत ख़्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया रह्मतुल्लाहि अ़लैहि "सिमा" को जायज़ कहते थे। बहुत से सूफ़िया के यहां सिमा का रिवाज था। "सिमा" का मतलब यह है कि मौसीकी के आलात के बग़ैर हम्द व नअ़त वग़ैरह के उम्दा मज़ामीन के शेर तरन्नुम से या बग़ैर तरन्नुम के महज़ अच्छी आवाज़ से किसी का पढ़ना और दूसरों का उसे अच्छे अक़ीदे और मुहब्बत से सुनना। बाज़ सूफ़िया इसकी इजाज़त देते थे, और बहुत से फ़ुक़हा और मुफ़्ती हज़रात इस सिमा को भी जायज़ नहीं कहते थे, बल्कि "बिद्अ़त" क़रार देते थे। चुनांचे उनके ज़माने के मौलाना हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब ने भी "सिमा" के ना जायज़ होने का फ़तवा दिया था और हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया रह्मतुल्लाहि अ़लैहि "सिमा" सुनते थे।

जब मौलाना हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि की वफ़ात का वक़्त क़रीब आया तो हज़रत ख़्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया रहमतुल्लाहि अलैहि उनकी इयादत और मिज़ाज पुर्सी के लिए तशरीफ़ ले गए, और यह इत्तिला कराई कि जाकर हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब से अर्ज़ किया जाए कि निज़ामुद्दीन मिज़ाज पूछने के लिए हाज़िर हुआ है। अन्दर से हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब ने जवाब भिजवाया कि उनको बाहर रोक दें, मैं मरने के वक़्त किसी बिद्अती की सूरत देखना नहीं चाहता। ख़्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया रहमतुल्लाहि अलैहि ने जवाब भिजवाया कि उनसे अर्ज़ कर दो कि बिद्अती, बिद्अत से तौबा करने के लिए हाज़िर हुआ है। उसी वक़्त मौलाना हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि ने अपनी पगड़ी भेजी कि इसे बिछा कर ख़्वाजा साहिब इसके ऊपर क़दम रखते हुए आयें और जूते से क़दम रखें, नंगे पांव न आयें। ख़्वाजा साहिब ने पगड़ी को उठा कर सर पर रखी कि यह मेरे लिए दस्तारे फ़ज़ीलत है। इसी शान से अन्दर तशरीफ़ ले गए। आकर मुसाफ़ा किया और बैठ गए, और हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि की तरफ़ मुतवज्जह हुए। फिर ख़्वाजा साहिब की मौजूदगी में हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब की वफ़ात का वक़्त आ गया। ख़्वाजा साहिब ने फ़रमाया कि अल्हम्दु लिल्लाह, हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब को अल्लाह तआला ने क़बूल फ़रमा लिया है कि रुतबों की तरक़्क़ी के साथ उनका इन्तिक़ाल हुआ।

गुस्सा भी अल्लाह के लिए हो

बहर हाल जो बुग़्ज़ और ग़ुस्सा अल्लाह के लिए होता है, वह कभी ज़ाती दुश्मनियां पैदा नहीं करता, और वह अदावतें पैदा नहीं करता, वह फ़ितने पैदा नहीं करता। क्योंकि जिस आदमी से बुग़्ज़ किया जा रहा है, जिस पर ग़ुस्सा किया जा रहा है, वह भी जानता है कि उसको मेरी ज़ात से दुश्मनी नहीं है, बल्कि मेरे ख़ास फ़ेल से और ख़ास हर्कत से है। इस वजह से लोग उसकी बात का बुरा नहीं

मानते। इसलिये कि जानते हैं कि यह जो कुछ कह रहा है, अल्लाह के लिए कह रहा है। इसको फ़रमाते हैं:

"مَنْ اَحَبَّ لِلّٰهِ وَاَبْغَضَ لِلّٰهِ"

यानी जिस से ताल्लुक और मुहब्बत है तो वह भी अल्लाह के लिए है, और जिस से बुग्ज़ और नफ़रत है, तो वह भी अल्लाह के लिए है। तो यह गुस्से का बेहतरीन मौक़ा और महल है। बशर्ते कि यह गुस्सा शरई हद के अन्दर हो। अल्लाह तआला यह नेमत हमको अता फ़रमा दे कि मुहब्बत हो तो अल्लाह तआला के लिए हो, गुस्सा और बुग्ज़ हो तो वह भी अल्लाह के लिए हो।

लेकिन यह गुस्सा ऐसा होना चाहिए कि उसके मुंह में लगाम पड़ी हुई हो, जहां अल्लाह तआला के लिए गुस्सा करना है, वहां तो हो, और जहां गुस्सा नहीं करना है वहां लगाम डाल कर उसको रोक दो।

हज़रत अली रज़ि. का वाक़िआ

हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु को देखिए। एक यहूदी ने आपके सामने हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की शान में गुस्ताख़ी की बात कह दी। अल्लाह अपनी पनाह में रखे। हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु कहां बर्दाश्त कर सकते थे। फ़ौरन उसको पकड़ कर ऊपर उठाया और फिर ज़मीन पर पटख़ दिया और उसके सीने पर सवार हो गए। यहूदी ने जब यह देखा कि अब मेरा क़ाबू तो इनके ऊपर नहीं चल रहा है। उसने लेटे लेटे हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु के मुंह पर थूक दिया। जैसे कहावत है कि "खिसयानी बिल्ली खम्बा नोचे" लेकिन जैसे ही उस यहूदी ने थूका, आप फ़ौरन उसको छोड़ कर अलग हो गए। लोगों ने आप से कहा कि हज़रत! उसने और ज़्यादा गुस्ताख़ीह का काम किया कि आपके मुंह पर थूक दिया, ऐसे में आप उसको छोड़ कर अलग क्यों हो गए? हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया: बात असल में यह है कि पहले उस पर जो मैंने हमला किया था, और उसको मारने का इराद

किया था। वह हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत में किया था। उसने आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की शान में गुस्ताख़ी की, जिसकी वजह से मुझे गुस्सा आ गया, और मैंने उसको गिरा दिया। लेकिन जब उसने मेरे मुंह पर थूक दिया, अब मुझे और गुस्सा आया, लेकिन अब अगर मैं उस गुस्से पर अमल करते हुए उस से बदला ले लेता तो यह बदला लेना हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिए न होता बल्कि अपनी ज़ात के लिए होता, और इसी वजह से होता कि चूंकि उसने मेरे मुंह पर थूका है इसलिये मैं उसको और ज़्यादा मारूं। तो इस सूरत में यह गुस्सा अल्लाह के लिए न होता, बल्कि अपनी ज़ात के लिए होता। इस वजह से मैं उसको छोड़ कर अलग हो गया।

यह हकीकत में इस हदीसः

"مَنْ اَحَبَّ لِلّٰهِ وَاَبْغَضَ لِلّٰهِ"

पर अमल फ़रमा कर दिखा दिया। गोया कि गुस्से के मुंह में लगाम दे रखी है, कि जहां तक इस गुस्से का शरई और जायज़ मौक़ा है, बस वहां तक तो गुस्सा करना है, और जहां इस गुस्से का जायज़ मौक़ा ख़त्म हो जाए तो उसके बाद आदमी इस गुस्से से इस तरह दूर हो जाए कि जैसे कि इस से कोई ताल्लुक़ ही नहीं। उन्हीं हज़रात के बारे में यह कहा जाता है:

"كَانَ وَقَّافًا عِنْدَ حُدُوْدِ اللّٰهِ"

यानी ये अल्लाह की हदों के आगे ठहर जाने वाले लोग थे।

हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ि. का वाकिआ

हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु एक बार मस्जिदे नबवी में दाख़िल हुए। देखा कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चचा हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु के घर का परनाला मस्जिदे नबवी की तरफ़ लगा हुआ है, बारिश वग़ैरह का पानी मस्जिदे नबवी की तरफ़ गिरता था। गोया कि मस्जिद की फ़िज़ा में वह परनाला लगा हुआ था। हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने सोचा कि

मस्जिद तो अल्लाह तआ़ला का घर है, और किसी शख़्स के ज़ाती घर का परनाला मस्जिद के अन्दर आ रहा हो तो यह अल्लाह के हुक्म के ख़िलाफ़ है। चुनांचे आपने उस परनाले को तोड़ने का हुक्म दे दिया, और वह तोड़ दिया गया।

अब देखिए कि आपने उस परनाले को तोड़ने का जो हुक्म दिया है यह गुस्से की वजह से तो दिया, और गुस्सा इस बात पर आया कि यह काम मस्जिद के अहकाम और आदाब के ख़िलाफ़ है। जब हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु को पता चला कि मेरे घर का परनाला तोड़ दिया गया है तो हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु के पास आए, उनसे फ़रमाया कि आपने यह परनाला क्यों तोड़ दिया? हज़रत फ़ारूके आज़म ने फ़रमाया कि यह जगह तो मस्जिद की है, किसी की ज़ाती नहीं है। मस्जिद की जगह में परनाला आना शरीअत के हुक्म के ख़िलाफ़ था, इसलिये मैंने तोड़ दिया। हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया: आपको पता भी है कि यह परनाला यहां पर किस तरह लगा था? यह परनाला हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में लगा था, और आपकी ख़ास इजाज़त से मैंने लगाया था। आप उसको तोड़ने वाले कौन होते हैं? हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि: क्या हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इजाज़त दी थी? उन्होंने फ़रमाया कि हां! इजाज़त दी थी। हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से फ़रमाया कि ख़ुदा के लिए मेरे साथ आओ। चुनांचे उस परनाले की जगह के पास गए। वहां जाकर ख़ुद रुकू की हालत में खड़े हो गए और हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से फ़रमाया कि अब मेरी कमर पर खड़े होकर यह परनाला दोबारा लगाओ। हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि मैं दूसरों से लगवा लूंगा। हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि उमर (रज़ियल्लाहु अ़न्हु) की यह मजाल कि वह मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के

लगाए हुए परनाले को तोड़े। मुझ से यह इतना बड़ा जुर्म सर्जद हुआ। इसकी कम से कम सज़ा यह है कि मैं रुकू में खड़ा होता हूं और तुम मेरी कमर पर खड़े होकर यह परनाला लगाओ।

चुनांचे हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने उनकी कमर पर खड़े होकर वह परनाला उसकी जगह पर लगा दिया। वह परनाला आज भी मस्जिदे नबवी में लगा हुआ है। अल्लाह तआला उन लोगों को जज़ाए ख़ैर दे, जिन लोगों ने मस्जिदे नबवी की तामीर की है, उन्होंने अब भी उस जगह पर परनाला लगा दिया है। अगरचे अब उस परनाले का बज़ाहिर कोई मस्रफ़ नहीं है, लेकिन यादगार के तौर पर लगा दिया है। यह हक़ीक़त में इस हदीस पर अमल है कि:

"من احبَّ للّٰه وابغض للّٰه"

पहले जो गुस्सा और बुग्ज़ हुआ था वह अल्लाह के लिए हुआ था, और अब जो मुहब्बत है वह भी अल्लाह के लिए है। जो शख़्स यह काम कर ले उसने अपना ईमान कामिल बना लिया। यह ईमान के कामिल होने की निशानी है।

बनावटी गुस्सा करके डांट लें

बहर हाल! इस "अल्लाह के लिए नफ़रत" की वजह से भी कभी गुस्से का इज़हार करना पड़ता है। ख़ास तौर से उन लोगों पर इज़हार करना पड़ता है, जो ज़ेरे तर्बियत होते हैं। जैसे उस्ताद है, उसको अपने शागिर्द पर गुस्सा करना पड़ता है। बाप को अपनी औलाद पर गुस्सा करना पड़ता है, शैख़ को अपने मुरीदों पर गुस्सा करना पड़ता है। लेकिन यह गुस्सा इस हद तक होना चाहिए, जितना उसकी इस्लाह के लिए ज़रूरी हो। इस से आगे न बढ़ें। जैसा कि अभी अर्ज़ किया कि इसका तरीका यह है कि जब इन्सान की तबीयत में इश्तिआल और उत्तेजना पैदा हो उस इश्तिआल और गुस्से के वक़्त डांट डपट और मार पीट न करे, बल्कि जब तबीयत में वह इश्तिआल और गुस्सा ख़त्म हो जाए, उस वक़्त मसनूई गुस्सा करके डांट डपट कर ले ताकि यह डांट डपट हद से आगे न हो।

यह काम ज़रा मुश्किल है, क्योंकि इन्सान गुस्से के वक्त बेकाबू हो जाता है। लेकिन जब तक इसकी मश्क नहीं करेगा उस वक्त तक इस गुस्से की ख़राबियों और बुराइयों से नजात नहीं मिलेगी।

छोटों पर ज़्यादती का नतीजा

और फिर जो ज़ेरे तर्बियत अफ़राद होते हैं, जैसे औलाद, शागिर्द, मुरीद, उन पर गुस्से के वक्त हद से आगे निकल जाए तो बाज़ सूरतों में यह बात बड़ी ख़तरनाक हो जाती है, क्योंकि जिस पर गुस्सा किया जा रहा है वह अगर आप से बड़ा है, या बराबर का है तो आपके गुस्सा करने के नतीजे में उसको जो नागवारी होगी उसका इज़्हार भी कर देगा। और वह बता देगा कि तुम्हारी यह बात अच्छी नहीं लगी, या कम से कम बदला ले लेगा। लेकिन जो तुम्हारा मातहत और छोटा है वह तुम से बदला लेने पर तो क़ादिर नहीं, बल्कि अपनी नागवारी के इज़्हार पर भी क़ादिर नहीं। चुनांचे कोई बेटा अपने बाप से, या शागिर्द उस्ताद से, या मुरीद अपने शैख़ से यह नहीं कहेगा कि आपने फ़लां वक्त जो बात कही थी वह मुझे नागवार हुई। इसलिये आपको पता नहीं चलेगा कि आपने उसका कितना दिल दुखाया है। और जब पता नहीं चलेगा तो माफ़ी मांगना भी आसान नहीं होगा। इसलिये यह बहुत नाज़ुक मामला है, और ख़ास तौर से जो छोटे बच्चों को पढ़ाने वाले उस्ताद होते हैं, उनके बारे में हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि उनका मामला बहुत ही नाज़ुक है, इसलिये कि वे ना बालिग़ हैं, और ना बालिग़ का मामला यह है कि अगर वह माफ़ भी कर दे तो माफ़ी नहीं होती। क्योंकि ना बालिग़ की माफ़ी मोतबर नहीं।

ख़ुलासा

बहर हाल, आजकी मज्लिस का ख़ुलासा यह है कि अपने गुस्से पर क़ाबू पाने की कोशिश करनी चाहिए। इसलिये कि यह गुस्सा बेशुमार बुराइयों की जड़ है, और इसके ज़रिये बेशुमार बातिनी

बीमारियां पैदा होती हैं। इब्तिदा में तो यह कोशिश करे कि गुस्से का इज़हार बिल्कुल न हो, बाद में जब यह गुस्सा क़ाबू में आ जाए तो उस वक़्त यह देखे कि कहां गुस्से का मौक़ा है, कहां गुस्से का मौक़ा नहीं है। जहां गुस्से का जायज़ महल और मौक़ा हो, बस वहां जायज़ हद तक गुस्सा करे, इस से ज़्यादा न करे।

गुस्से का ग़लत इस्तेमाल

जैसा कि अभी मैंने बताया कि अल्लाह के लिए तो गुस्सा करना चाहिए। लेकिन बाज़ लोग इसका इन्तिहाई ग़लत इस्तेमाल करते हैं। चुनांचे ज़बान से तो यह कहते हैं कि हमारा यह गुस्सा अल्लाह के लिए है, लेकिन हक़ीक़त मैं वह गुस्सा नफ़सानियत और तकब्बुर और दूसरे की हक़ारत की वजह से होता है। जैसे जब अल्लाह तआला ने ज़रा सी दीन पर चलने की तौफ़ीक़ दे दी और दीन पर अभी चलना शुरू किया तो अब सारी दुनिया के लोगों को हक़ीर समझने लगे। मेरा बाप भी हक़ीर, मेरी मां भी हक़ीर, मेरा भाई भी हक़ीर, मेरी बहन भी हक़ीर, मेरे सारे घर वाले हक़ीर हैं। उन सब को हक़ीर समझना शुरू कर दिया, और यह समझने लगा कि ये सब तो जहन्नमी हैं, मैं जन्नती हूं। और मुझे अल्लाह तआला ने इन जहन्नमियों की इस्लाह के लिए पैदा किया है। अब उनकी इस्लाह के लिए उन पर गुस्सा करना और उनके लिए ना मुनासिब अल्फ़ाज़ का इस्तेमाल करना और उनका अपमान करना और उनके हुक़ूक़ ज़ाया करना शुरू कर दिया, और फिर शैतान यह सबक़ पढ़ाता है कि मैं जो कुछ कर रहा हूं यह बुग़ज़ अल्लाह के लिए है। हालांकि हक़ीक़त में यह सब नफ़सानियत के तहत करता है।

चुनांचे जो लोग दीन पर नए नए चलने वाले होते हैं। शैतान उनको इस तरह बहकाता है कि उनको "बुग़ज़ फ़िल्लाह" का सबक़ पढ़ा कर उनसे लड़ाइयां, झगड़े और फ़साद होते हैं। बात बात पर लोगों पर गुस्सा करते हैं। बात बात पर लोगों को टोक देते हैं, इसके नतीजे में फ़साद फैल रहा है।

अल्लामा शब्बीर अहमद उस्मानी रह. का एक जुम्ला

हज़रत अल्लामा शब्बीर अहमद उस्मानी रहमतुल्लाहि अलैहि का एक जुम्ला हमेशा याद रखना चाहिए। वह फ़रमाया करते थे कि हक़ बात, हक़ नियत से, हक़ तरीक़े से कही जाए, तो वह कभी बे असर नहीं रहती, और कभी फ़ितना व फ़साद पैदा नहीं करती। गोया कि तीन शर्तें बयान फ़रमा दीं। नम्बर एक, बात हक़ हो, नम्बर दो नियत हक़ हो, नम्बर तीन तरीक़ा हक़ हो। जैसे एक शख़्स किसी बुराई के अन्दर मुब्तला है, अब उस पर तरस खाकर नर्मी, शफ़्क़त से उसको समझाए, ताकि वह इस बुराई से किसी तरह निकल जाए। यह नियत हो। अपनी बड़ाई मक़सद न हो, और दूसरों को ज़लील करना मक़सद न हो। और तरीक़ा भी हक़ हो। यानी नर्मी और मुहब्बत से बात कहे। अगर ये तीन शर्तें पाई जायें तो आम तौर पर फ़ितना पैदा नहीं होता, और जहां कहीं यह देखो कि हक़ बात कहने के नतीजे में फ़ितना खड़ा हो गया तो ग़ालिब गुमान यह है कि इसका सबब यह है कि इन तीनों बातों में से कोई एक मौजूद नहीं थी। या तो बात हक़ नहीं, या नियत हक़ नहीं, या तरीक़ा हक़ नहीं था।

तुम ख़ुदाई फ़ौजदार नहीं हो

यह बात याद रखें कि तुम ख़ुदाई फ़ौजदार बन कर दुनिया में नहीं आए। तुम्हारा काम सिर्फ़ इतना है कि हक़ बात, हक़ नियत और हक़ तरीक़े से दूसरों को पहुंचाओ और मुनासिब तरीक़े से लगातार पहुंचाते रहो। इस काम से कभी मत उक्ताओ, लेकिन ऐसा काम मत करो जिस से फ़ितना पैदा हो।

अल्लाह तआला अपनी रहमत से और अपने फ़ज़्ल व करम से हम सब को इन बातों पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

मुसलमान ताजिर के फ़राइज़

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ۔

وَابْتَغِ فِيْمَآ اٰتٰكَ اللّٰهُ الدَّارَ الْاٰخِرَةَ وَلَا تَنْسَ نَصِيْبَكَ مِنَ الدُّنْيَا وَاَحْسِنْ كَمَآ اَحْسَنَ اللّٰهُ اِلَيْكَ وَلَا تَبْغِ الْفَسَادَ فِى الْاَرْضِ۔ (سورۃ القصص:۷۷)

اٰمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظيم وصدق رسوله النبى الكريم، ونحن على ذالك من الشاهدين والشاكرين والحمد للّٰه رب العالمين۔

तम्हीद

मुअज़्ज़ज़ हाज़िरीने किराम! यह मेरे लिए ख़ुशी और सम्मान का बाइस है कि आज आप हज़रात से एक दीनी मौज़ू पर गुफ़्तगू करने का मौक़ा मिल रहा है। आपका यह इदारा जिसको "ऐवाने सनअ़त व तिजारत" कहा जाता है, यहां आ़म तौर पर जिन लोगों को ख़िताब करने की दावत दी जाती है, वे लोग यहां आकर या तो तिजारत के मौज़ू पर ख़िताब करते हैं या सियासत के मौज़ू पर ख़िताब करते हैं। मेरा मामला यह है कि मेरा सियासत से भी अ़मली तौर पर कोई ताल्लुक़ नहीं है, और तिजारत से भी कोई अ़मली राबता नहीं है। मैं दीन का तालिबे इल्म हूं और जहां कहीं कोई बात करने का मौक़ा मिलता है तो उसका मौज़ू दीन ही से मुताल्लिक़ होता है। इसलिये आजकी इस नशिस्त में इसी मौज़ू पर चन्द गुज़ारिशात आपकी ख़िदमत में अ़र्ज़ करना चाहता हूं। और दीन ऐसी चीज़ है कि ज़िन्दगी का कोई गोशा और कोई शोबा ऐसा नहीं है जिसके बारे में

इसमें कोई बात न कही गयी हो।

आजका मौज़ू

अल्लाह तबारक व तआला ने जो दीन हमें अता फ़रमाया है वह सिर्फ़ मस्जिद और इबादत गाहों की हद तक महदूद और सीमित नहीं, बल्कि वह ज़िन्दगी के हर शोबे और हर गोशे पर हावी है। चुनांचे आजकी गुफ़्तगू के लिए मुझ से यह फ़रमाइश की गयी है कि मैं "मौजूदा दौर में मुसलमान ताजिर के फ़राइज़" के मौज़ू पर गुफ़्तगू करूं। चुनांचे इसी मौज़ू पर चन्द गुज़ारिशात आपकी ख़िदमत में अर्ज़ करना चाहता हूं। और अल्लाह तआला से दुआ है कि अल्लाह तआला इख़्लास के साथ सही बात, हक़ तरीक़े से, हक़ नियत से कहने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

दीन सिर्फ़ मस्जिद तक सीमित नहीं

बात असल में यह है कि जब से हमारी उम्मत के सियासी और समाजी ज़वाल (पतन) का आग़ाज़ हुआ, उस वक़्त से यह अजीब व ग़रीब फ़िज़ा बन गयी कि दीन को हमने दूसरे धर्मों की तरह सिर्फ़ चन्द इबादतों की हद तक महदूद (सीमित) कर दिया है, जब तक हम मज्सिद में हैं, या अपने घर में इबादत अन्जाम दे रहे हैं, उस वक़्त तक तो हमें अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अहकाम याद आ जाते हैं, लेकिन जब हम ज़िन्दगी की अमली कशाकशी में दाख़िल होते हैं और बाज़ार में पहुंचते हैं, या सियासत के ऐवानों में पहुंचते हैं, या समाज के दूसरे अमली गोशों में दाख़िल होते हैं तो उस वक़्त दीन के अहकाम और दीन की तालीमात हमारे ज़ेहनों में नहीं रहतीं।

कुरआने करीम की तिलावत से आग़ाज़

हमारे दरमियान यह बड़ा अच्छा रिवाज जारी है कि हमारी उम्मत मुस्लिमा की हर मज्लिस का आग़ाज़ तिलावते कुरआने करीम से होता है, वह चाहे एसम्बली की महफ़िल हो, या इक़्तिदार की तक़रीब

हो, या ऐवान सन्अत व तिजारत की कोई तकरीब हो। अल्हम्दु लिल्लाह सब से पहले अल्लाह का कलाम पढ़ा जाता है। लेकिन यह कितनी सितम ज़रीफ़ी है कि जिस वक़्त वह कलाम पढ़ा जा रहा है उस वक़्त तक तो उसके एहतिराम और उसकी ताज़ीम व तकरीम का ख़्याल ज़ेहन में आता है, लेकिन जैसे ही उस कुरआने करीम की तिलावत ख़त्म होती है और उसके बाद अमली कोशिश का आग़ाज़ होता है, उस मर्हले पर वह कुरआने करीम याद नहीं रहता।

कुरआने करीम हम से फ़रियाद कर रहा है

हमारे दौर के एक शायर गुज़रे हैं "माहिरुल क़ादरी साहिब मर्हूम" उन्होंने कुरआने करीम की फ़रियाद पर एक नज़्म कही है, उस नज़्म में उन्होंने कुरआने करीम को एक फ़रियादी की शक्ल में दिखाया है, वह इस तरह फ़रियाद कर रहा है कि:

ताक़ों में सजाया जाता हूं
ख़ुशबू में बसाया जाता हूं
जब क़ौल व क़सम लेने के लिए
तकरार की नौबत आती है
फिर मेरी ज़रूरत पड़ती है
हाथों में उठाया जाता हूं

यानी मुझे हर वक़्त ताक़ों में सजा कर रखा हुआ है, ख़ुशबू बसा कर रखा हुआ है, और हर मज्लिस का आग़ाज़ मेरी तिलावत से होता है, मुझ से बर्कत हासिल की जाती है, और जब लोगों के दरमियान झगड़े पेश आते हैं तो फिर मुझे हाथों में उठा कर क़स्में दी जाती हैं। मेरे साथ यह सब सुलूक हो रहा है, और ज़बान से मेरी मुहब्बत और ताज़ीम के दावे किये जा रहे हैं, लेकिन जिस क़ानून पर लोग चल रहे हैं और ज़िन्दगी के जिस अन्दाज़ को इख़्तियार किया हुआ है, वह पुकार पुकार कर कह रहा है कि ऐ कुरआन! "अल्लाह की पनाह" तेरी हिदायत की हमें ज़रूरत नहीं।

इस्लाम में पूरे दाख़िल हो जाओ

जिन साहिब ने इस वक़्त जिन आयतों की तिलावत फ़रमाई है, वह मौक़े के एतिबार से बहुत मुनासिब तिलावत की हैं, इन आयतों में इर्शाद है कि:

"يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا ادْخُلُوْا فِى السِّلْمِ كَآفَّةً" (سورة البقرة:٢٠٨)

ऐ ईमान वालो! इस्लाम में पूरे के पूरे दाख़िल हो जाओ। यह न हो कि मस्जिद में जब तक हो, उस वक़्त तक तो तुम मुसलमान हो और बाज़ार में मुसलमान न हो, और इक़्तिदार के ऐवानों में मुसलमान न हो, बल्कि तुम हर जगह मुसलमान हो।

बहर हाल, आजकी नशिस्त का मौज़ू यह तजवीज़ किया गया था कि मौजूदा दौर में मुसलमान ताजिर के फ़राइज़ क्या हैं। इस मौज़ू के सिलसिले में मैंने आपके सामने कुरआने करीम की एक आयत तिलावत की है, उसकी थोड़ी सी तश्रीह पेश करना चाहता हूं। लेकिन तश्रीह करने से पहले मौजूदा दौर का एक तम्हीदी जायज़ा लेना मुनासिब होगा। अगर मौजूदा हालात के पसे मन्ज़र में जब इस आयत की तश्रीह समझने की कोशिश की जायेगी तो शायद ज़्यादा फ़ायदा होगा।

दो इकॉनॉमिक नज़रिये

हम और आप इस वक़्त एक ऐसे दौर में जी रहे हैं जिसमें यह कहा और समझा जा रहा है कि इन्सान की ज़िन्दगी का सब से बुनियादी मसला "रोज़गार का मसला" है, और इसी बुनियाद पर इस दौर में दो इकॉनॉमिक नज़रियों के दरमियान पहले फ़िक्री और फिर अमली टकराव ज़ाहिर हुआ। एक "सरमाये दाराना मओशत" का नज़रिया और दूसरा इश्तिराकी मओशत (COMMUNIST ECONOMY) का नज़रिया, इन दोनों नज़रियों के दरमियान पिछली आधी सदी से ज़्यादा अर्से तक ज़बरदस्त टकराव रहा, और फ़िक्री और अमली दोनों सतह पर ये दोनों नज़रिये एक दूसरे के सामने डटे रहे, दोनों

के पीछे एक फ़ल्सफ़ा और नज़रिया था। चौहत्तर साल गुज़रने के बाद हमने अपनी आंखों से देखा कि इश्तिराकी मईशत (COMMUNISIT ECONOMY) का जो नज़र को फ़रेब में डालने वाला ऐवान था वह बैठ गया। और दुनिया ने पुर फ़रेब नज़रिये की हक़ीक़त को अमली प्रयोग शाला में पहचान लिया, और इश्तिराकियत (COMMUNISM) बहैसियत एक इन्क़िलाबी निज़ाम के फ़ेल हो गयी।

कम्यूनिज़्म के वजूद में आने के अस्बाब

लेकिन यह बात सोचने की है कि कम्यूनिज़्म (COMMUNISM) क्यों वजूद में आयी थी? और इसके पीछे क्या अस्बाब और क्या अवामिल कार फ़रमा थे? जिन लोगों ने दुनिया के मुख़्तलिफ़ इकॉनॉमिक निज़ामों का मुताला किया है वे जानते हैं कि हक़ीक़त में इश्तिराकियत (COMMUNISM) एक प्रतिक्रिया थी। सरमाये दाराना निज़ाम के अन्दर जो अमीर व ग़रीब के दरमियान ज़बरदस्त दीवारें रुकावट हैं, और उसमें दौलत की तक़सीम का निज़ाम ग़ैर मुन्सिफ़ाना है, उस ग़ैर मुन्सिफ़ाना निज़ाम के रद्दे अमल के तौर पर कम्यूनिज़्म वजूद में आयी। सरमाया दाराना निज़ाम के अन्दर फ़र्द को इतनी आज़ादी दी गयी कि वह जिस तरह चाहे नफ़ा कमाये, उस पर किसी तरह की क़ैद और पाबन्दी नहीं। आज़ाद इकॉनॉमी और आज़ाद तिजारत के नज़रिये के तहत उसको खुली छूट दी गयी, और उस खुली छूट के नतीजे में दौलत की तक़सीम का निज़ाम ना हमवार हो गया, और अमीर व ग़रीब के दरमियान दीवारें खड़ी हो गयीं। ग़रीब के हुक़ूक़ ज़ाया हुए, उसके रद्दे अमल के तौर पर कम्यूनिज़्म का निज़ाम वजूद में आया। जिसने यह कहा कि "फ़र्द को कोई आज़ादी नहीं होनी चाहिए, और सरकारी मन्सूबा बन्दी के तहत इकॉनॉमी को काम करना चाहिए।

सरमाया दाराना निज़ाम में ख़राबियां मौजूद हैं

यह बात ठीक है कि कम्यूनिस्ट निज़ाम नाकाम और फ़ेल हो

गया, लेकिन सरमाया दाराना निज़ाम की जिन ख़राबियों की वजह से कम्यूनिस्ट निज़ाम वजूद में आया था, क्या वे ख़राबियां दूर हो गयीं? वे ना इन्साफ़ियां जो सरमाया दाराना निज़ाम के अन्दर पाई जाती थीं क्या उनका कोई मुनासिब हल निकल आया? इस सवाल का जवाब नफ़ी में है, सरमाया दाराना निज़ाम में जो ख़राबियां थीं वे अपनी जगह पर मौजूद हैं।

सब से ज़्यादा कमाने वाला तब्क़ा

और यह इब्रत का मक़ाम है कि जिस तारीख़ में सोवियत यूनियन का शीराज़ा बिखरा, और अमेरिकी रिसाले "टाईम" (Time) के जिस अंक में यह ख़बर और उस पर टिप्पणियां शाया हुईं, कि सोवियत यूनियन का शीराज़ा बिखर गया और कम्यूनिज़म का बुत टुक्ड़े टुक्ड़े हो गया, ठीक उसी अंक में अमेरिकी ज़िन्दगी के निज़ाम के बारे में एक मज़मून शाया हुआ था, जिसमें इसी बात पर तब्सिरा किया गया था कि इस वक़्त अमेरिकी निज़ामे ज़िन्दगी में अपनी ख़िदमात के बदले सब से ज़्यादा कमाने वाला तब्क़ा कौन सा है? उस मज़मून में यह कहा गया था कि हमारे समाज में सब से ज़्यादा कमाने वाला तब्क़ा "मॉडल गर्लस" का तब्क़ा है, जो मॉडलिंग करके पैसे कमाती हैं। और उस मज़मून में लिखा था कि बाज़ मॉडल गर्ल ऐसी हैं जो एक दिन की ख़िदमत का मुआवज़ा २५ मिलियन डॉलर वसूल करती हैं। इस से ज़्यादा कमाने वाला तब्क़ा कोई और नहीं है। यह २५ मिलियन डॉलर जो एक मॉडल गर्ल को दिये जा रहे हैं, यह कौन अदा कर रहा है? और किस की जेब से यह रक़म जा रही है? ज़ाहिर है कि यह २५ मिलियन डॉलर आख़िरकार उप भोगता से वसूल किये जायेंगे। एक ही अंक में ये दोनों बातें पढ़ कर मुझे इब्रत हो रही थी, कि एक तरफ़ तो यह दावा करके बग़लें बजायी जा रही हैं कि हमने कम्यूनिज़म के बुत को टुक्ड़े टुक्ड़े कर दिया, लेकिन जिस चीज़ ने कम्यूनिज़म को जन्म दिया था उस चीज़ की तरफ़ किसी की नज़र नहीं और किसी को फ़िक्र नहीं। आज आपने

कम्यूनिज़्म के एक बुत को तो टुक्ड़े टुक्ड़े कर दिया, लेकिन उसके असल सबब और मुहर्रिक को ख़त्म नहीं किया, तो कल एक और कम्यूनिज़्म उभर कर सामने आ जायेगी। पहली कम्यूनिज़्म ने इन्सानियत को ज़ख्म दिये, फिर दूसरी कम्यूनिज़्म आकर उस से ज़्यादा ज़ख़्म लगायेगी।

सरमाया दाराना निज़ाम की असल ख़राबी

सही बात यह है कि सरमाया दाराना निज़ाम में न तो इस वजह से ख़राबी थी कि उसमें फ़र्द को मुनाफ़े कमाने की मुकम्मल आज़ादी दी यगी है, और न इस वजह से ख़राबी थी कि उसमें इन्फ़िरादी मिल्कियत को तस्लीम किया गया है, बल्कि हक़ीक़त में ख़राबी इस वजह से थी कि उस इकॉनॉमिक निज़ाम में हलाल व हराम की कोई तक़सीम नहीं थी, जायज़ और ना जायज़ की कोई तक़सीम नहीं थी, हालांकि अल्लाह तबारक व तआला ने अपने रसूल हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़रिये जो दीन और इकॉनमी का जो निज़ाम हमें अता फ़रमाया है, उसकी बुनियाद इस बात पर है कि अगरचे इन्सान अपने रोज़गार और तिजारत में आज़ाद ज़रूर है लेकिन अपने ख़ालिक़ और मालिक के बताये हुए अहकाम का पाबन्द भी है। इसलिये उसकी तिजारत, उसका उधोग और उसका रोज़गार हलाल व हराम के उसूलों में जकड़ा हुआ है। और जब तक हलाल व हराम के उन उसूलों को सामने रखते हुए तिजारत व रोज़गार के रास्ते पर अग्रसर नहीं होगा उस वक़्त तक इसी क़िस्म की बे एतिदालियों और नाकामियों का रास्ता खुला रहेगा।

एक अमेरिकी अफ़सर से मुलाक़ात

जिस ज़माने में सूद के बारे में "फ़ीडर्ल शरीअत कोर्ट" का फ़ैसला मन्ज़रे आम पर आया, उस वक़्त पाकिस्तान में अमेरिकी दूतावास के इकॉनॉमी उमूर के इंचार्ज मेरे पास आये और इस फ़ैसले के बारे में कुछ तफ़सीलात मालूम कीं। उस वक़्त कम्यूनिज़्म की

नाकामी का ताज़ा ताज़ा वाकिआ पेश आया था। मैंने आख़िर में उनसे गुज़ारिश की कि मैं आप से एक बात पूछना चाहता हूं, वह यह कि आज अमेरिका का डंका बज रहा है, और बिला शुबह आप लोगों ने विश्व स्तर पर इतनी बड़ी कामयाबी हासिल की है कि आज यह कहा जा रहा है कि पूरी दुनिया में इस वक़्त सिर्फ़ एक सुपर ताक़त है, दूसरी कोई ताक़त नहीं। लेकिन मैं आप से पूछना चाहता हूं कि कम्यूनिज़म की इस नाकामी के बाद क्या आपने कभी इस पहलू पर ग़ौर किया कि जिन अस्बाब के नतीजे में यह कम्यूनिज़म उभरी थी, क्या वे अस्बाब ख़त्म हो गये हैं? और क्या अब दोबारा उन अस्बाब पर ग़ौर करने की ज़रूरत नहीं? लेकिन यह अजीब मामला है कि अगर इस वक़्त कोई शख़्स खड़ा होकर यह कहता है कि कम्यूनिज़म की नाकामी अपनी जगह पर है, लेकिन सरमाया दाराना निज़ाम की ख़राबियों का एक हल हमारे पास मौजूद है, और वह यह कि अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लाये हुए हलाल व हराम के उसूलों की बुनियाद पर अपनी इकॉनॉमी के उसूलों को बनाना है, तो आपकी तरफ़ से उसको बुनियाद परस्ती के ताने दिये जाते हैं, उसको फ़न्डा मेंटलिस्ट कहा जाता है, उसके ख़िलाफ़ प्रोपैगन्डा किया जाता है, और उसको यह कहा जाता है कि यह वक़्त के तक़ाज़ों को नहीं समझते। आप यह बताइये कि आपके ख़्याल में क्या कोई तीसरा तसव्वुर वजूद ही में नहीं आ सकता? आप इस पर ग़ौर करने के लिए क्यों तैयार नहीं?

वह काफ़ी तवज्जोह से मेरी बात सुनते रहे। बाद में उन्होंने कहा कि असल में बात यह है कि हमारा जो मीडिया है, उसने बिला शुबह इस्लामी अहकाम और तालीमात को बड़ा बिगाड़ करके पेश करना शुरू कर दिया है, मैं इस बात को मानता हूं और सूद के बारे में जिस तरह आपने वज़ाहत से बताया इस तरह वज़ाहत के साथ मैंने पहली बार यह मसला सुना है, और मैं यह समझता हूं कि इस पर ग़ौर करने की ज़रूरत है। लेकिन अफ़सोस की बात यह है कि हमारा

मीडिया प्रोपैगन्डे का आदी है। इस वजह से जब भी इस किस्म की कोई बात सामने आती है तो वह उसके ख़िलाफ़ प्रोपैगन्डा करना शुरू कर देता है। और यह उसका अच्छा तर्ज़ अमल नहीं है।

सिर्फ़ इस्लाम का इकॉनॉमिक निज़ाम मुन्सिफ़ाना है

तो मैं अर्ज़ कर रहा था कि अगर दूसरे लोग इस्लामी तालीमात और इस्लामी अहकाम के बारे में ऐसी बातें करें तो उनको माज़ूर समझा जा सकता है। इसलिये कि उन्होंने "इस्लाम" को समझा ही नहीं, इस्लाम को पढ़ा ही नहीं, इस्लाम पर उनको एतिक़ाद ही नहीं, इस्लाम उनको क्या सिखाता है इस से उनको कोई दिल चस्पी ही नहीं। लेकिन हम और आप जो अपने आपको मुसलमान कहते हैं, और कलिमा "ला इला–ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह" पर ईमान रखते हैं, और अपनी हर मज्लिस का आग़ाज़ क़ुरआने करीम की तिलावत से करते हैं, हमारे पास इस बात का कोई जवाज़ नहीं कि हम इस्लाम के इस अज़ीम पहलू से अपने आपको ग़ाफ़िल और बेख़बर रखें, और इस बात को समझने की कोशिश न करें कि हमारे दीन इस्लाम ने इकॉनॉमी के मैदान में हमें क्या तालीम दी है? इस बात को ज़ेहन में रखते हुए कि एक ऐसे समाज में जहां कम्यूनिस्ट निज़ाम नाकाम हो चुका है, और सरमाया दाराना निज़ाम की ख़राबियां अपनी जगह जूं की तूं बाक़ी हैं, ऐसे समाज में अगर कोई निज़ाम इन्सानियत के लिए एक सही और दरमियानी राह पेश कर सकता है तो वह सिर्फ़ और सिर्फ़ मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लाये हुए दीन का निज़ाम है। इस यक़ीन को मद्देनज़र रखते हुए अगर इस आयते करीमा पर ग़ौर किया जाये जो अभी मैंने आपके सामने तिलावत की है तो इसमें हमारी और आपकी रहनुमाई के लिए बहुत बड़ा सामान है।

क़ारून और उसकी दौलत

यह आयते करीमा सूरः क़िसस की आयत है, इस आयत में

क़ारून को ख़िताब किया गया है। यह क़ारून हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के ज़माने में बहुत दौलत मन्द शख़्स था। चुनांचे क़ारून का ख़ज़ाना बहुत मशहूर है। यह इतना बड़ा दौलत मन्द था कि उसकी दौलत के ज़्यादा होने को बयान करते हुए कुरआने करीम ने फ़रमायाः

"ان مفاتحه لتنوأبالعصبة اولى القوة" (سورة القصص)

यानी उसके ख़ज़ानों की चाबियां भी इतनी ज़्यादा थीं कि एक बड़ी जमाअत मिलकर उन चाबियों को उठा पाती थी। उस ज़माने में चाबियां भी बड़ी वज़नी हुआ करती थीं। फिर उसके ख़ज़ाने बहुत फैले हुए थे। हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के वास्ते से अल्लाह तआला ने उसको जो हिदायात दीं वे इस आयते करीमा में बयान की गयी हैं जो मैंने आपके सामने तिलावत की है। अगरचे इस आयत में बराहे रास्त ख़िताब तो क़ारून को है, लेकिन उसके वास्ते से हर उस शख़्स को ख़िताब है जिसको अल्लाह तआला ने दौलत से नवाज़ा हो।

क़ारून को चार हिदायात

चुनांचे इर्शाद फ़रमायाः

وَابْتَغِ فِيْمَآ اٰتَاكَ اللّٰهُ الدَّارَ الْاٰخِرَةَ وَلَا تَنْسَ نَصِيْبَكَ مِنَ الدُّنْيَا وَاَحْسِنْ كَمَآ اَحْسَنَ اللّٰهُ اِلَيْكَ وَلَا تَبْغِ الْفَسَادَ فِى الْاَرْضِ۔ (سورة القصص:۷۷)

ये चार जुम्ले हैं, पहले जुम्ले में फ़रमाया कि जो कुछ अल्लाह तबारक व तआला ने तुमको (दौलत) अता फ़रमाई है उसके ज़रिये आख़िरत की फ़लाह व कामयाबी को तलब करो। दूसरे जुम्ले में फ़रमाया कि (यह न हो कि आख़िरत की फ़लाह तलब करने के लिए सारी दौलत लुटा दो और दुनिया में अपने पास दौलत बिल्कुल न रखो, बल्कि) दुनिया का जो हिस्सा अल्लाह तआला ने तुम्हारे लिए मुक़र्रर फ़रमाया है उसको मत भूलो (उसको अपने पास रखो, उसका हक़ अदा करो) तीसरे जुम्ले में इर्शाद फ़रमाया कि जैसे अल्लाह

तआला ने तुम पर (यह दौलत अता करके) एहसान किया है, उसी तरह तुम भी दूसरों के साथ एहसान और अच्छाई का मामला करो। चौथे जुम्ले में इर्शाद फ़रमाया कि अपनी इस दौलत के बल बूते पर ज़मीन में फ़साद मत मचाओ। (और ज़मीन में फ़साद फैलाने की कोशिश मत करो) इस आयते करीमा में चार हिदायात क़ारून को दीं। लेकिन ज़रा ग़ौर से देखा जाए तो ये चारों हिदायतें एक ताजिर के लिए, एक उधोगपति के लिए और एक ऐसे मुसलमान के लिए जिसको अल्लाह तआला ने इस दुनिया के अन्दर कुछ भी अता फ़रमाया हो, एक पूरा निज़ामे अमल पेश कर रही हैं।

पहली हिदायत

सब से पहली हिदायत यह दी गयी कि तुम में और एक ग़ैर मुस्लिम में फ़र्क़ यह है कि ग़ैर मुस्लिम जो अल्लाह पर ईमान नहीं रखता, उसका नज़रिया यह होता है कि जो कुछ दौलत मुझे हासिल है, यह सब मेरी अपनी मेहनत का करिश्मा है, मैंने अपनी मेहनत से, अपनी सलाहियत से और अपनी कोशिश से इसको कमाया और हासिल किया है। इसलिये मैं इस दौलत का किसी दूसरे के साझे के बग़ैर मालिक हूं, और किसी शख़्स को मेरी दौलत में दख़ल अन्दाज़ी करने का हक़ हासिल नहीं। यह दौलत मेरी है, यह माल मेरा है, मैंने अपनी मेहनत के बल पर इसे कमाया है, अपनी सलाहियतों की बुनियाद पर इसको कमाया है। इसलिये मैं इस दौलत को कमाने के तरीक़े में भी आज़ाद हूं और इसको ख़र्च करने के तरीक़े में भी आज़ाद हूं। किसी दूसरे को यह हक़ नहीं पहुंचता कि वह मेरे मामलात में दख़ल अन्दाज़ी करे।

क़ौमे शुऐब और सरमाये दाराना ज़ेहनियत

हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम की क़ौम ने हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम से यह कहा था कि:

"اصلوتك تامرك ان نترك مايعبد آبآؤنا اوان نفعل فى اموالنا مانشؤا" (سورة هود:٨٧)

(यानी यह जो आप हमें मना कर रहे हैं कि कम मत नापो, कम मत तौलो, इन्साफ़ से काम लो, हलाल व हराम की फ़िक्र करो, तो यह आपने हमारे इकॉनॉमिक मसाइल में कहां से दख़ल अन्दाज़ी शुरू कर दी। तुम अगर नमाज़ पढ़ना चाहो तो अपने घर जाकर नमाज़ पढ़ो) क्या तुम्हारी नमाज़ तुम्हें इस बात का हुक्म देती है कि हम उन माबूदों को छोड़ दें जिनकी हमारे बाप दादा इबादत किया करते थे, या हमारा जो माल है उसमें हम जो चाहें करें।

हक़ीक़त में यह सरमाये दारना ज़ेहनियत है कि यह माल हमारा है, यह दौलत हमारी है, इस पर हमारा सिक्का चलेगा, तसर्रुफ़ हमारा है, हम जिस तरह चाहेंगे करेंगे, जिस तरह चाहेंगे कमायेंगे, और जिस तरह चहेंगे ख़र्च करेंगे। हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम की क़ौम की भी यही ज़ेहनियत थी। इसके रद में यह बात कही गयी, कि जो दौलत तुम्हारे पास है यह कुल्ली तौर पर तुम्हारी नहीं है। क्योंकि अल्लाह तआ़ला का इर्शाद है:

"ولله ما فی السموات وما فی الارض" (سورة النسآء:١٣١)

आसमान व ज़मीन में जो कुछ है वह अल्लाह तआ़ला की मिल्कियत है। अलबत्ता अल्लाह तआ़ला ने तुम्हें अ़ता फ़रमा दी है, इसलिये फ़रमायाः "मा अताकल्लाहु" यानी जो माल अल्लाह तआ़ला ने तुम्हें दिया है उसके ज़रिये आख़िरत तलब करो, यह नहीं फ़रमाया कि "अपने माल के ज़रिये आख़िरत तलब करो"।

माल दौलत अल्लाह की अ़ता है

इसलिये पहली बात यह समझ लो कि जो कुछ तुम्हारे पास है, चाहे व नक़द रुपया हो, चाहे वह बैंक बेलैन्स हो, चाहे वह उधोग हो या तिजारत हो, यह सब अल्लाह तआ़ला की अ़ता है। बेशक उसको हासिल करने में तुम्हारी मेहनत और कोशिश को भी दख़ल है, लेकिन तुम्हारी यह कोशिश दौलत हासिल करने के लिए इल्लते हक़ीक़ी का दर्जा नहीं रखती, इसलिये कि कितने लोग ऐसे हैं जो मेहनत और

कोशिश करते हैं, मगर माल व दौलत हासिल नहीं कर पाते। कितने लोग ऐसे हैं जिनके पास दौलत है, लेकिन मेहनत के ज़रिये और दौलत हासिल नहीं कर पाते। यह दौलत अल्लाह तआ़ला की अ़ता है। इसलिये यह तसव्वुर ज़ेहन से निकाल दो कि यह दौलत तुम्हारी है, बल्कि यह दौलत अल्लाह की है, और अल्लाह तआ़ला ने अपने फ़ज़्ल व करम से तुम्हें अ़ता फ़रमाई है। इस आयत से एक हिदायत तो यह दे दी।

मुस्लिम और ग़ैर मुस्लिम में तीन फ़र्क़ हैं

मुस्लिम और ग़ैर मुस्लिम में तीन फ़र्क़ हैं। पहला फ़र्क़ यह है कि मुसलमान अपनी दौलत को अल्लाह तआ़ला की अ़ता समझता है, जब कि ग़ैर मुस्लिम उस दौलत को अल्लाह तआ़ला की अ़ता नहीं समझता, बल्कि उस दौलत को अपनी मेहनत व कोशिश का करिश्मा समझता है। दूसरा फ़र्क़ यह है कि एक मुसलमान का काम यह है कि वह उस दौलत को आख़िरत की फ़लाह व कामयाबी का ज़रिया बनाये, और दौलत हासिल करने और उसको ख़र्च करने में ऐसा तरीक़ा इख़्तियार करे कि कोई काम अल्लाह तआ़ला की मर्ज़ी और उसके हुक्म के ख़िलाफ़ न हो, ताकि यह दुनिया उसके लिए दीन का ज़रिया बन जाये, और आख़िरत की फ़लाह व बेहतराई का ज़रिया बन जाये। यही दुनिया है कि अगर इसके हासिल करने में इन्सान की नियत दुरुस्त हो और अल्लाह तआ़ला के लगाए किये हुए हलाल व हराम के अहकाम की पाबन्दी हो तो यही दुनिया दीन बन जाती है, और यही दुनिया आख़िरत का ज़रिया बन जाती है। तीसरा फ़र्क़ यह है कि एक मुसलमान भी खाता है और कमाता है, और एक ग़ैर मुस्लिम भी खाता है और कमाता है, लेकिन ग़ैर मुस्लिम के दिल में न तो अल्लाह तआ़ला का तसव्वुर होता है और न उसके अहकाम की पाबन्दी का ख़्याल होता है, और मुसलमान के दिल में ये चीज़ें मौजूद होती हैं। इसी वजह से अल्लाह तबारक व तआ़ला ने हमारे लिए यह दुनिया दीन बना दी। अगर एक ताजिर इस नियत के साथ तिजारत

करे कि मैं दो वजह से तिजारत कर रहा हूं। एक तो इसलिये कि अल्लाह तबारक व तआ़ला ने मेरे ज़िम्मे कुछ हुकूक़ आयद किये हैं, मेरे नफ़्स के भी कुछ हुकूक़ हैं। मेरे बच्चों के मेरे ज़िम्मे कुछ हुकूक़ हैं, मेरी बीवी के मेरे ज़िम्मे कुछ हुकूक़ हैं, उन हुकूक़ की अदाएगी के लिए यह तिजारत कर रहा हूं। दूसरे इसलिये मैं तिजारत कर रहा हूं कि इस तिजारत के ज़रिये मैं समाज में एक चीज़ मुहैया करने का ज़रिया बन जाऊं, और मुनासिब तरीक़े से उनकी ज़रूरत की चीज़ें उन तक पहुंचाऊं। अगर तिजारत करते वक़्त दिल में ये दो नियतें मौजूद हों और इसके साथ साथ हलाल तरीक़े को इख़्तियार करे और हराम तरीक़े से बचे तो फिर यह सारी तिजारत इबादत है।

ताजिरों की दो क़िस्में

एक हदीस में जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"التاجر الصدوق الامين مع النبيين والصديقين والشهدآء" (ترمذی شریف)

यानी एक ईमानदार और सच्चा ताजिर क़ियामत के दिन अंबिया, सिद्दीक़ीन और शहीदों के साथ होगा। लेकिन अगर तिजारत के अन्दर नियत सही न हो और हलाल व हराम की फ़िक्र न हो तो फिर ऐसे ताजिर के बारे में पहली हदीस के बर ख़िलाफ़ दूसरी हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"التجار يحشرون يوم القيامة فجارا الا من اتقى وبر وصدق"

यानी ताजिर लोग क़ियामत के दिन 'फ़ुज्जार' बनाकर उठाए जायेंगे। "फ़ुज्जार" के मायने हैं: फ़ासिक़ व फ़ाजिर, ना फ़रमान, गुनाहगार, सिवाए उस ताजिर के जो परहेज़गारी इख़्तियार करे, नेकी इख़्तियार करे, और सच्चाई इख़्तियार करे। अगर ये तीन शर्तें मौजूद हैं तो फिर अंबिया और सिद्दीक़ीन और शहीदों की सफ़ में शामिल है। ऐसे ताजिर को अल्लाह तआ़ला ने यह मक़ाम बख़्शा है।

बहर हाल, पहला मर्हला नियत का दुरुस्त करना है। और दूसरा

मर्हला अमल के अन्दर हलाल व हराम का फ़र्क है। यह न हो कि मस्जिद की हद तक तो वह मुसलमान है, लेकिन मस्जिद के बाहर निकलने के बाद उसको इस बात की कोई परवाह न हो कि मैं जो कारोबार करने जा रहा हूं वह अल्लाह तआला के अहकाम के मुताबिक़ है या नहीं? इस दूसरे मर्हले पर मुसलमान और गैर मुस्लिम में कोई फ़र्क नहीं। एक गैर मुस्लिम सूदी कारोबार कर रहा है तो मुसलमान भी सूदी कारोबार कर रहा है, गैर मुस्लिम जुए का काम कर रहा है तो मुसलमान भी कर रहा है, अगर किसी मुसलमान ताजिर के अन्दर यह बात है तो फिर ऐसा ताजिर इस वओद (सज़ा के वायदे और धमकी) के अन्दर दाख़िल है, जो दूसरी हदीस में ऊपर अर्ज़ की। और अगर यह बात नहीं तो फिर वह ताजिर पहली हदीस में बयान की गयी ख़ुशख़बरी का हक़दार है।

दूसरी हिदायत

अब दिल में यह ख़्याल पैदा हो सकता था कि इस्लाम ने हमारी तिजारत का रास्ता भी बन्द कर दिया, और यह फ़रमा दिया कि बस आख़िरत ही को देखो, दुनिया को मत देखो, और दुनिया के अन्दर अपनी ज़रूरियात का ख़्याल न करो। इस ख़्याल की तर्दीद (खंडन) के लिए कुरआने करीम ने फ़ौरन दूसरे जुम्ले में दूसरी हिदायत यह फ़रमाई कि:

"وَلَا تَنْسَ نَصِيبَكَ مِنَ الدُّنْيَا"

यानी हमारा मक़सद यह नहीं है कि तुम दुनिया को बिल्कुल छोड़ कर बैठ जाओ, बल्कि तुम्हारा दुनिया का जो हिस्सा है उसको मत भूलो, उसके लिए जायज़ और हलाल तरीक़े इख़्तियार करने की कोशिश करो।

यह दुनिया ही सब कुछ नहीं

लेकिन कुरआने करीम के अन्दाज़े बयान ने एक बात और वाज़ेह कर दी कि तुम्हारा बुनियादी मसला इस ज़िन्दगी के अन्दर "रोज़ी

रोटी का मसला" नहीं। बेशक क़ुरआन व हदीस में अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने रोज़ी रोज़गार के मसले को तस्लीम किया है, लेकिन यह रोज़ी रोटी का मसला तुम्हारी ज़िन्दगी का बुनियादी मसला नहीं है। एक काफ़िर और मोमिन में यही फ़र्क़ है, कि काफ़िर अपनी सारी ज़िन्दगी का बुनियादी मसला इसको समझता है कि मेरी पैदाइश से लेकर मरते दम तक मेरे खाने कमाने का क्या इन्तिज़ाम है, इस से आगे उसकी सोच और फ़िक्र नहीं जाती। लेकिन एक मुसलमान को क़ुरआन व हदीस यह तालीम देते हैं कि बेशक रोज़गार की सर–गर्मियों (लीनता) की तुम्हें इजाज़त है, लेकिन यह तुम्हारी ज़िन्दगी का बुनियादी मक़सद नहीं है, इसलिये कि यह ज़िन्दगी तो ख़ुदा जाने कितने दिनों की है, आज भी ख़त्म हो सकती है, कल भी ख़त्म हो सकती है। हर लम्हे इस ज़िन्दगी के ख़त्म होने की संभावना मौजूद है। आज तक कोई इन्सान ऐसा पैदा नहीं हुआ जिसने मौत से इन्कार किया हो, ख़ुदा का इन्कार करने वाले दुनिया में मौजूद हैं, लेकिन मौत से इन्कार करने वाला कोई नहीं। इस दुनिया से ज़रूर जाना है। और अगर तुम मुसलमान हो तो यक़ीनन तुम्हारा यह एतिक़ाद होगा कि मरने के बाद एक दूसरी ज़िन्दगी आने वाली है। वह ज़िन्दगी कभी ख़त्म होने वाली नहीं, वह हमेशा हमेशा की ज़िन्दगी होगी।

क्या इन्सान एक इकॉनॉमिक जानवर है?

ज़रा सी अक़्ल रखने वाले इन्सान को भी यह बात सोचनी चाहिए कि उसको अपनी मेहनत, कोशिश और अपनी ज़िन्दगी का बुनियादी मक़सद इस चन्द रोज़ा ज़िन्दगी को बनाना चाहिए, या उस आने वाली हमेशा रहने वाली ज़िन्दगी को अपना मक़सद बनाना चाहिए? एक मुसलमान जो अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अहकाम पर ईमान रखता है, ज़ाहिर है कि उसकी ज़िन्दगी का बुनियादी मक़सद सिर्फ़ खा पीकर पूरा नहीं हो जाता, सिर्फ़ ज़्यादा से ज़्यादा रुपया पैसा जमा करके पूरा नहीं हो

जाता, क्योंकि अगर ऐसा हो जाये तो फिर इन्सान और जानवर में कोई फ़र्क़ नहीं रहेगा। इन्सान की तारीफ़ में जो यह कहा गया है कि इन्सान एक मआशी जानवर (Economic animal) है। यह तारीफ़ दुरुस्त नहीं, इसलिये कि अगर इन्सान सिर्फ़ (Economic animal) होता तो फिर इन्सान में और बैल, गधे, कुत्ते में कोई फ़र्क़ न होता। इसलिये कि ये जानवर खाने पीने के लिये पैदा हुए हैं, अगर इन्सान भी सिर्फ़ खाने पीने के लिये पैदा किया गया है तो इन्सान में और जानवर में कोई फ़र्क़ न रहेगा। अल्लाह तआला ने सारे जानवरों के लिये रिज़्क़ के दरवाज़े खोले हैं, वे भी खाते पीते हैं, लेकिन इन्सान को जानवरों से जो इम्तियाज़ अता फ़रमाया है, वह इस तरह कि अल्लाह तआला ने इन्सान को अक़्ल दी है, उस अक़्ल के ज़रिये वह यह सोचे कि आगे आने वाली ज़िन्दगी एक हमेशा की ज़िन्दगी है। और वह ज़िन्दगी इस मौजूदा ज़िन्दगी पर फ़ौक़ियत और बरतरी रखती है।

बहर हाल! इस दूसरे जुम्ले में अल्लाह तआला ने यह बता दिया कि दुनिया से अपना हिस्सा मत भूलो, लेकिन याद रखो कि ज़िन्दगी का असल मक़सद आख़िरत है। और ये जितनी इकॉनॉमिक सर-गर्मियां हैं, ये रास्ते की मन्ज़िल हैं, यह ख़ुद मन्ज़िले मक़सूद नहीं।

तीसरी हिदायत

फिर तीसरे जुम्ले में यह हिदायत दी कि:

"وَاَحْسِنْ كَمَآ اَحْسَنَ اللّٰهُ اِلَيْكَ"

यानी जिस तरह अल्लाह तआला ने तुम्हें यह दौलत अता करके तुम पर एहसान किया है, तुम भी दूसरों पर एहसान करो। इस आयत में एक तरफ़ तो यह बता दिया कि हलाल व हराम में फ़र्क़ करो, और हराम के ज़रिये माल हासिल न करो। और दूसरी तरफ़ यह भी बता दिया कि जो चीज़ हलाल तरीक़े से हासिल की है, उसके बारे में भी यह मत समझो कि मैं इसका अकेला मालिक हूं, बल्कि उसके ज़रिये तुम दूसरों पर एहसान का मामला करो। और

एहसान करने के लिये ज़कात और सदकात व ख़ैरात का दरवाज़ा खुला हुआ है।

चौथी हिदायत

चौथे जुम्ले में यह हिदायत दी किः

"وَلَا تَبْغِ الْفَسَادَ فِي الْأَرْضِ"

ज़मीन में फ़साद मत फैलाओ। यानी दौलत के बल बूते पर दूसरों के हुक़ूक़ पर डाका मत डालो, दूसरों के हुक़ूक़ ग़सब मत करो। अगर तुमने इन चार हिदायतों पर अमल कर लिया तो तुम्हारी यह दौलत, तुम्हारा यह सरमाया और तुम्हारी यह इकॉनॉमिक सर–गर्मियां तुम्हारे लिये मुबारक हैं। और तुम अंबिया, सिद्दीक़ीन और शहीदों की फ़ेहरिस्त में शामिल हो। और अगर तुम ने इन हिदायतों पर अमल न किया तो फिर तुम्हारी सारी इकॉनॉमिक भाग दौड़ बेकार है। और आख़िरत में इसका नतीजा सज़ा और अज़ाब की सूरत में सामने आ जायेगा।

दुनिया के सामने नमूना पेश करें

बहर हाल, इस वक़्त हमारे मुसलमान ताजिरों की सब से बड़ी ज़िम्मेदारी यह है कि वे क़ुरआने करीम की इन चार हिदायतों को मद्देनज़र रखते हुए दुनिया के सामने एक अमली नमूना पेश करें। इस दुनिया के सामने जो सरमाये दारी से भी ज़ख़्म खायी हुई है, ओर कम्यूनिज़म से भी ज़ख़्म खाई हुई है। और ऐसा नमूना पेश करें जो दूसरों के लिये कशिश का सबब हो। जो शख़्स ऐसा करेगा तो वह इस दौर की सब से बड़ी ज़रूरत को पूरा करेगा।

क्या एक आदमी समाज में बदलाव ला सकता है?

आजकल यह उज़्र पेश किया जाता है कि जब तक निज़ाम न बदले, और जब तक सब लोग न बदलें, उस वक़्त तक अकेला आदमी कैसे बदलाव ला सकता है? और अकेला आदमी इन चार हिदायतों पर किस तरह अमल कर सकता है? याद रखिये! निज़ाम

और समाज अफ़राद के मजमूए का नाम है, अगर हर फ़र्द अपनी जगह यह सोचता रहे कि जब तक समाज नहीं बदलेगा, उस वक़्त तक मैं भी नहीं बदलूंगा, तो फिर समाज में कभी बदलाव उत्पन्न नहीं हो सकता। बदलाव हमेशा इस तरह आया करता है कि कोई अल्लाह का बन्दा फ़र्द बनकर अपनी ज़िन्दगी में बदलाव लाता है, फिर उस चिराग़ को देख कर दूसरा चिराग़ जलता है, और दूसरे से तीसरा चिराग़ जलता है, इसी तरह अफ़राद के संवरने से समाज संवरता है, और अफ़राद की तामीर होती है। इसलिये यह उज़्र कि मैं तन्हा कुछ नहीं कर सकता, यह माकूल उज़्र नहीं।

हुज़ूर सल्ल. किस तरह बदलाव लाए

जब नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इस दुनिया में तश्रीफ़ लाये, उस वक़्त समाज की ख़राबियां और बुराइयां अपनी इन्तिहा को पहुंची हुई थीं, उस वक़्त अगर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम यह सोचते कि इतना बड़ा समाज उल्टी सिम्त की तरफ़ जा रहा है, मैं तन्हा क्या कर सकूंगा, और यह सोच कर आप हिम्मत हार कर बैठ जाते तो आज हम और आप यहां पर मुसलमान बैठे हुए न होते। आपने दुनिया की मुख़ालफ़तों के सैलाब का मुक़ाबला करते हुए एक राह डाली, नया रास्ता निकाला, और उस रास्ते पर अग्रसर हुए। यह बात ठीक है कि आपको इस रास्ते में क़ुर्बानियां भी देनी पड़ीं, आपको परेशानियां भी पेश आईं, मुश्किलात भी सामने आईं। लेकिन आपने उन सब को गवारा किया। उसी का नतीजा है कि आज दुनिया की एक तिहाई आबादी मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नाम लेवा और उनकी ग़ुलाम है। लेकिन अगर आप यह सोच कर बैठ जाते कि जब तक समाज नहीं बदलेगा, उस वक़्त तक तन्हा मैं क्या कर सकता हूं तो यह सूरते हाल न होती।

हर शख़्स अपने अन्दर बदलाव लाए

अल्लाह तआ़ला ने हर इन्सान की ज़िम्मेदारी उसके अपने ऊपर

डाली है। इसलिये इस बात को देखे बग़ैर कि दूसरे लोग क्या कर रहे हैं, हर इन्सान पर फ़र्ज़ है कि वह अपने तर्ज़े अमल को दुरुस्त करे। और कम से कम इस बात की तलब हमारे दिलों में पैदा हो जाये कि अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हमें रोज़गार और रोज़ी रोटी के मैदान में और तिजारत व उद्योग के मैदान में किन अह्काम का पाबन्द किया है? उन अह्काम पर हम किस तरह अमल कर सकते हैं। इसकी मालूमात हासिल करके इस पर अमल करने का जज़्बा और इरादा पैदा हो जाये तो मैं समझता हूं कि यह मज्लिस इन्शा अल्लाह बड़ी मुबारक और मुफ़ीद है। वर्ना बैठे, कहा और उठ कर चल दिये वाली मज्लिसें तो बहुत होती रहती हैं।

अल्लाह तआला अपनी रहमत से यह जज़्बा और यह तसव्वुर और यह ख़्याल और यह इरादा हमारे दिलों के अन्दर पैदा फ़रमा दे, जो इस वक़्त की बड़ी अहम ज़रूरत है, और अल्लाह तआला हमारी दुनिया व आख़िरत दोनों संवार दे, और इन बातों पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

واٰخر دعوانا ان الحمد للّٰہ رب العالمین

अपने मामलात साफ़ रखें

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ۔

"يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْكُلُوْۤا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ اِلَّاۤ اَنْ تَكُوْنَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْكُمْ (النسآء:٢٩)

اٰمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظيم وصدق رسوله النبى الكريم، ونحن علىٰ ذالك من الشاهدين والشاكرين، والحمد للّٰه رب العالمين۔

मामलात की सफ़ाई दीन का अहम रुक्न

यह आयत जो मैंने आपके सामने तिलावत की है, यह दीन के एक बहुत अहम रुक्न से मुताल्लिक़ है, वह दीन का अहम रुक्न "मामलात का दुरुस्त होना और उसकी सफ़ाई" है। यानी इन्सान का मामलात में अच्छा होना और ख़ुश मामला होना, यह दीन का बहुत अहम बाब है। लेकिन अफ़सोस यह है कि दीन का जितना अहम बाब है, हम लोगों ने उतना ही इसको अपनी ज़िन्दगी से ख़ारिज कर रखा है। हमने दीन को सिर्फ़ चन्द इबादतों जैसे रोज़ा, हज, ज़कात, उमरा, वज़ाइफ़ और विर्दों में सीमित कर लिया है, लेकिन रुपये पैसे लेन देन का जो बाब है, उसको हमने बिल्कुल आज़ाद छोड़ा हुआ है, गोया कि दीन से इसका कोई ताल्लुक़ ही नहीं। हालांकि इस्लामी शरीअ़त के अह्काम का जायज़ा लिया जाये तो नज़र आयेगा कि इबादतों से मुताल्लिक़ जो अह्काम हैं वे एक चौथाई हैं, और तीन चौथाई अह्काम मामलात और समाजी ज़िन्दगी से मुताल्लिक़ हैं।

तीन चौथाई दीन मामलात में है

फ़िक़्ह की एक मशहूर किताब है, जो हमारे तमाम मदरसों में पढ़ाई जाती है और उस किताब को पढ़ कर लोग आ़लिम बनते हैं। उसका नाम है "हिदाया" उस किताब में पाकी से लेकर मीरास तक शरीअ़त के जितने अह्काम हैं, वे सब उस किताब में जमा हैं। उस किताब की चार जिल्दें हैं, पहली जिल्द इबादतों से मुताल्लिक़ है, जिसमें पाकी के अह्काम, नमाज़ के अह्काम, ज़कात, रोज़े, और हज के अह्काम बयान किये हैं। और बाक़ी तीन जिल्दें मामलात या समाजी ज़िन्दगी के अह्काम से मुताल्लिक़ हैं। इस से अन्दाज़ा लगायें कि दीन के अह्काम का एक चौथाई हिस्सा इबादात से मुताल्लिक़ है और तीन चौथाई हिस्सा मामलात से मुताल्लिक़ है।

मामलात की ख़राबी का इबादत पर असर

फिर अल्लाह तआ़ला ने इन मामलात का यह मक़ाम रखा है कि अगर इन्सान रुपये पैसे के मामलात में हलाल व हराम का, और जायज़ ना जायज़ का फ़र्क़ न रखे तो इबादतों पर भी इसका असर यह पड़ता है कि चाहे वे इबादतें अदा हो जायें लेकिन उनका अज्र व सवाब और उनकी क़बूलियत मौक़ूफ़ हो जाती है, दुआ़एं क़बूल नहीं होतीं। एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः बहुत से लोग ऐसे होते हैं जो अल्लाह तआ़ला के सामने बड़ी आजज़ी का मुज़ाहरा कर रहे होते हैं, इस हाल में कि उनके बाल बिखरे हुए हैं, गिड़गिड़ा कर और रो रो कर पुकारते हैं कि या अल्लाह! मेरा यह मक़सद पूरा कर दीजिये, फ़लां मक़सद पूरा कर दीजिये, बड़ी आजज़ी से, रोने गिड़गिड़ाने के साथ ये दुआ़एं कर रहे होते हैं, लेकिन खाना उनका हराम, पीना उनका हराम, लिबास उनका हराम, और उनका जिस्म हराम आमदनी से पला हुआ, "ऐसे आदमी की दुआ कैसे क़बूल हो?" ऐसे आदमी की दुआ क़बूल नहीं होती।

मामलात की तलाफ़ी बहुत मुश्किल है

दूसरी जितनी इबादतें हैं, अगर उनमें कोताही हो जाये तो उसकी तलाफ़ी आसान है, जैसे नमाज़ें छूट गयीं, तो अब अपनी ज़िन्दगी में कज़ा नमाज़ें अदा कर लो, और अगर ज़िन्दगी में अदा न कर सको तो वसीयत कर जाओ, कि अगर मैं मर जाऊं और मेरी नमाज़ें अदा न हुई हों तो मेरे माल में से उनका फ़िदया अदा कर दिया जाये, और तौबा कर लो। इन्शा अल्लाह, अल्लाह तआला के यहां तलाफ़ी हो जायेगी। लेकिन अगर किसी दूसरे का माल ना जायज़ तरीक़े पर खा लिया, तो इसकी तलाफ़ी उस वक़्त तक नहीं होगी जब तक हक़ वाला माफ़ न करे। चाहे तुम हज़ार तौबा करते रहो, हज़ार नफ़्लें पढ़ते रहो। इसलिये मामलात का बाब बहुत अहमियत रखता है।

हज़रत थानवी रह. और मामलात

इसी वजह से हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अ़ली साहिब थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के यहां तसव्वुफ़ और तरीक़त की तालीमात में मामलात को सब से ज़्यादा प्राथमिकता हासिल थी। फ़रमाया करते थे कि अगर मुझे अपने मुरीदों में से किसी के बारे में यह पता चले कि उसने अपने मामूलात, नवाफ़िल और विर्द व वज़ाइफ़ पूरे नहीं किये तो उसकी वजह से रंज होता है, और उस मुरीद से कह देता हूं कि उनको पूरा कर लो। लेकिन अगर किसी मुरीद के बारे में यह मालूम हो कि उसने रुपये पैसे के मामलात में गड़बड़ी की है तो मुझे उस मुरीद से नफ़रत हो जाती है।

एक सबक़ लेने वाला वाक़िआ

हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के एक मुरीद थे, जिनको आपने ख़िलाफ़त भी अ़ता फ़रमा दी थी, और उनको बैअ़त और तल्क़ीन करने की इजाज़त दे दी थी। एक बार वह सफ़र करके हज़रत वाला की ख़िदमत में तशरीफ़ लाये, उनके साथ उनका बच्चा

भी था, उन्होंने आकर सलाम किया और मुलाकात की, और बच्चे को भी मिलवाया कि हज़रत यह मेरा बच्चा है, इसके लिये दुआ फ़रमा दीजिये। हज़रते वाला ने बच्चे के लिये दुआ फ़रमाई और वैसे ही पूछ लिया कि इस बच्चे की उम्र क्या है? उन्होंने जवाब दिया कि हज़रत इसकी उम्र १३ साल है, हज़रत ने पूछा कि आपने रेल गाड़ी का सफ़र किया है तो इस बच्चे का आधा टिकट लिया था या पूरा टिकट लिया था? उन्होंने जवाब दिया कि हज़रत आधा टिकट लिया था। हज़रत ने फ़रमायाः कि आपने आधा टिकट कैसे लिया, जब कि बारह साल से ज़ायद उम्र के बच्चे का तो पूरा टिकट लगता है। उन्होंने अर्ज़ किया कि क़ानून तो यही है कि बारह साल के बाद पूरा टिकट लेना चाहिए, और यह बच्चा अगरचे तेरह साल का है लेकिन देखने में बारह साल का लगता है, इस वजह से मैंने आधा टिकट ले लिया। हज़रत ने फ़रमायाः इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन, मालूम होता है कि आपको तसव्वुफ़ और तरीक़त की हवा भी नहीं लगी, आपको अभी तक इस बात का एहसास और ख़्याल नहीं कि बच्चे को जो सफ़र आपने कराया है, यह हराम कराया। जब क़ानून यह है कि १२ साल से ज़ायद उम्र के बच्चे का टिकट पूरा लगता है और आपने आधा टिकट लिया तो इसका मतलब यह है कि आपने रेलवे के आधे टिकट के पैसे ग़सब कर लिये, और आपने चोरी कर ली। और जो शख़्स चोरी और ग़सब करे ऐसा शख़्स तसव्वुफ़ और तरीक़त में कोई मक़ाम नहीं रख सकता। इसलिये आज से आपकी ख़िलाफ़त और बैअत वापस ली जाती है। चुनांचे इस बात पर उनकी ख़िलाफ़त छीन ली। हालांकि अपने औराद व वज़ाइफ़ में, इबादतों और नवाफ़िल में, तहज्जुद और इश्राक़ में, इनमें से हर चीज़ में बिल्कुल अपने तरीक़े पर मुकम्मल थे, लेकिन यह ग़लती की कि बच्चे का टिकट पूरा नहीं लिया, सिर्फ़ इसी ग़लती की बिना पर ख़िलाफ़त वापस ले ली।

हज़रत थानवी रह. का एक वाकिआ

हज़रते वाला रहमतुल्लाहि अलैहि की तरफ़ से अपने सारे मुरीदों और मुताल्लिक़ीन को यह हिदायत थी कि जब कभी रेलवे में सफ़र करो, और तुम्हारा सामान उस मिक़्दार (मात्रा) से ज़ायद हो जितना रेलवे ने तुम्हें मुफ़्त लेजाने की इजाज़त दी है, तो उस सूरत में अपने सामान का वज़न कराओ और ज़ायद सामान का किराया अदा करो, फिर सफ़र करो। ख़ुद हज़रते वाला का अपना वाक़िआ है कि एक बार रेलवे में सफ़र के इरादे से स्टेशन पहुंचे, गाड़ी के आने का वक़्त क़रीब था, आप अपना सामान लेकर उस दफ़्तर में पहुंचे जहां पर सामान का वज़न कराया जाता था, और जाकर लाईन में लग गये। इत्तिफ़ाक़ से गाड़ी में साथ जाने वाला गार्ड वहां आ गया और हज़रते वाला को देख कर पहचान लिया, और पूछा कि हज़रत आप यहां कैसे खड़े हैं? हज़रत ने फ़रमाया कि मैं सामान का वज़न कराने आया हूं। गार्ड ने कहा कि आपको सामान का वज़न कराने की ज़रूरत नहीं, आपके लिये कोई मसला नहीं, मैं आपके साथ गाड़ी में जा रहा हूं, आपको ज़ायद सामान का किराया देने की ज़रूरत नहीं। हज़रत ने पूछा कि तुम मेरे साथ कहां तक जाओगे? गार्ड ने कहा कि मैं फ़लां स्टेशन तक जाऊंगा। हज़रत ने पूछा कि उस स्टेशन के बाद क्या होगा? गार्ड ने कहा कि उस स्टेशन पर दूसरा गार्ड आयेगा, मैं उसको बता दूंगा कि यह हज़रत का सामान है, इसके बारे में कुछ पूछ गछ न करना। हज़रत ने पूछा कि वह गार्ड मेरे साथ कहां तक जायेगा? गार्ड ने कहा कि वह तो और आगे जायेगा, उस से पहले ही आपका स्टेशन आ जायेगा। हज़रत ने फ़रमाया कि मैं तो और आगे जाऊंगा, यानी आख़िरत की तरफ़ जाऊंगा और अपनी क़ब्र में जाऊंगा, वहां पर कौन सा गार्ड मेरे साथ जायेगा? जब वहां आख़िरत में मुझ से सवाल होगा कि एक सरकारी गाड़ी में सामान का किराया अदा किये बग़ैर जो सफ़र किया और जो चोरी की उसका हिसाब दो, तो वहां पर कौन सा गार्ड मेरी मदद करेगा?

मामलात की ख़राबी से ज़िन्दगी हराम

चुनांचे वहां यह बात मशहूर थी कि जब कोई शख़्स रेलवे के दफ़्तर में अपने सामान का वज़न करा रहा होता तो लोग समझ जाते कि यह शख़्स थाना भवन जाने वाला है, और हज़रत थानवी रह. के मुताल्लिक़ लोगों में से है। हज़रते वाला की बहुत सी बातें लोगों ने लेकर मशहूर कर दीं। लेकन यह पहलू कि एक पैसा भी शरीअ़त के ख़िलाफ़ किसी ज़रिये से हमारे पास न आये, यह पहलू नज़रों से ओझल हो गया। आज कितने लोग इस क़िस्म के मामलात के अन्दर मुब्तला हैं और उनको ख़्याल भी नहीं आता कि हम ये मामलात शरीअ़त के ख़िलाफ़ और ना जायज़ कर रहे हैं। अगर हमने ग़लत काम करके चन्द पैसे बचा लिये तो वे चन्द पैसे हराम हो गये, और वह हराम माल हमारे दूसरे माल के साथ मिलने के नतीजे में उसके बुरे असरात हमारे माल में फैल गये। फिर उसी माल से हम खाना खा रहे हैं, उसी से कपड़े बना रहे हैं, उसी से लिबास तैयार हो रहा है, जिसके नतीजे में हमारी पूरी ज़िन्दगी हराम हो रही है। और हम चूंकि बेहिस हो गये हैं, इसलिये हराम माल और हराम आमदनी के बुरे नतीजों का हमें एहसास भी नहीं। यह हराम माल हमारी ज़िन्दगी में क्या फ़साद मचा रहा है, इसका हमें एहसास नहीं। जिन लोगों को अल्लाह तआला एहसास अ़ता फ़रमाते हैं, उनको पता लगता है कि हराम चीज़ क्या होती है।

हज़रत मौलाना मुहम्मद याकूब साहिब रह. का चन्द संदिग्ध लुक़्मे खाना

हज़रत मौलाना मुहम्मद याकूब साहिब नानौतवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि जो हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के उस्ताज़ थे, और दारुल उलूम देवबन्द के सदर मुदर्रिस थे। वह फ़रमाते थे कि एक बार मैं एक दावत में चला गया और वहां जाकर खाना खा लिया। बाद में पता चला कि उस शख़्स की आमदनी मश्कूक (संदिग्ध) है।

फ़रमाते हैं कि महीनों तक उन चन्द लुक़्मों की अंधेरी अपने दिल में महसूस करता रहा, और महीनों तक मेरे दिल में गुनाह करने के जज़्बात पैदा होते रहे, और तबीयत में यह जज़्बा बार बार पैदा होता था कि फ़लां गुनाह कर लूं, फ़लां गुनाह कर लूं। हराम माल से यह अंधेरा पैदा हो जाता है।

हराम की दो क़िस्में

यह जो आज हमारे दिलों से गुनाहों की नफ़रत मिटती जा रही है, और गुनाह के गुनाह होने का एहसास ख़त्म हो रहा है, इसका एक बहुत बड़ा सबब यह है कि हमारे माल में हराम माल की मिलावट हो चुकी है। फिर एक तो वह हराम है जो खुला हराम है, जिसको हर शख़्स जानता है कि यह हराम है। जैसे रिश्वत का माल, सूद का माल, धोखे का माल, चोरी का माल वग़ैरह। लेकिन हराम की दूसरी क़िस्म वह है जिसके हराम होने का हमें एहसास ही नहीं है, हालांकि वह भी हराम है, और वह हराम चीज़ हमारे कारोबार में मिल रही है। इस दूसरी क़िस्म की तफ़सील सुनिये।

मिल्कियत मुताय्यन होनी चाहिए

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तालीम यह है कि मामलात चाहे भाईयों के दरमियान हों, बाप बेटे के दरमियान हों, शौहर और बीवी के दरमियान हों। वे मामलात बिल्कुल साफ़ और बे ग़ुबार होने चाहियें और उनमें कोई ग़ुबार न होना चाहिये। और मिल्कियतें आपस में मुताय्यन होनी चाहियें, कि कौन सी चीज़ बाप की मिल्कियत है और कौन सी चीज़ बेटे की मिल्कियत है, कौन सी चीज़ शौहर की मिल्कियत है और कौन सी चीज़ बीवी की मिल्कियत है। कौन सी चीज़ एक भाई की है और कौन सी चीज़ दूसरे भाई की है। यह सारी बात वाज़ेह और साफ़ होनी चाहिये। यह नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तालीम है। चुनांचे एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

"تعاشروا كالاخوان، تعاملوا كالاجانب"

यानी भाईयों की तरह रहो, लेकिन आपस के मामलात ग़ैरों की तरह करो। जैसे अगर कर्ज़ का लेन देन किया जा रहा है तो उसको लिख लो कि यह कर्ज़ का मामला है, इतने दिन के बाद इसकी वापसी होगी।

बाप बेटों के मुश्तरक कारोबार

आज हमारा सारा समाज इस बात से भरा हुआ है कि कोई बात साफ़ ही नहीं। अगर बाप बेटों के दरमियान कारोबार है तो वह कारोबार वैसे ही चल रहा है, उसकी कोई वज़ाहत नहीं होती कि बेटे बाप के साथ जो काम कर रहे हैं वे आया शरीक की हैसियत में कर रहे हैं, या मुलाज़िम की हैसियत से कर रहे हैं, या वैसे ही बाप की मुफ़्त मदद कर रहे हैं, इसका कुछ पता नहीं, मगर तिजारत हो रही है, मिलें क़ायम हो रही हैं, दुकानें बढ़ती जा रही हैं, माल और जायदाद बढ़ता जा रहा है, लेकिन यह पता नहीं है कि किसका कितना हिस्सा है। अगर उनसे कहा भी जाये कि अपने मामलात को साफ़ करो, तो जवाब यह दिया जाता है कि यह तो अपने पन के ख़िलाफ़ बात है। भाईयों भाईयों में सफ़ाई की क्या ज़रूरत है? या बाप बेटों में सफ़ाई की क्या ज़रूरत है? इसका नतीजा यह होता है कि जब शादियां हो जाती हैं और बच्चे हो जाते हैं, और शादी में किसी ने ज़्यादा ख़र्च कर लिया और किसी ने कम ख़र्च किया। या एक भाई ने मकान बना लिया और दूसरे ने अभी तक मकान नहीं बनाया। बस अब दिल में शिकायतें और एक दूसरे की तरफ़ से कीना पैदा होना शुरू हो गया, और अब आपस में झगड़े शुरू हो गये कि फ़लां ज़्यादा खा गया और मुझे कम मिला। और अगर उस दौरान बाप का इन्तिक़ाल हो जाये तो उसके बाद भाईयों के बीच जो लड़ाई और झगड़े होते हैं उनकी कोई हद नहीं, फिर उनके हल करने का कोई रास्ता नहीं होता।

बाप के इन्तिकाल पर मीरास के बटवारा फ़ौरन करें

जब बाप का इन्तिकाल हो जाये तो शरीअत का हुक्म यह है कि फ़ौरन मीरास तक़सीम करो, मीरास तक़सीम करने में ताख़ीर और देरी करना हराम है। लेकिन आजकल यह होता है कि बाप के इन्तिकाल पर मीरास तक़सीम नहीं होती, और जो बड़ा बेटा होता है वह कारोबार पर क़ाबिज़ हो जाता है। और बेटियां ख़ामोश बैठी रहती हैं, उनको कुछ पता नहीं होता कि हमारा हक़ क्या है और क्या नहीं है? यहां तक कि इसी हालत में दस बीस साल गुज़र गये, और फिर उस दौरान किसी और का इन्तिक़ाल हो गया, या किसी भाई ने उस कारोबार में अपना पैसा मिला दिया, फिर सालों गुज़रने के बाद जब उनकी औलाद बड़ी हुई तो अब झगड़े खड़े हो गये, और झगड़े ऐसे वक़्त में खड़े हुए जब डोर उल्झी हुई है। और जब वे झगड़े इन्तिहा की हद तक पहुंचे तो अब मुफ़्ती साहिब के पास चले आ रहे हैं कि अब आप बताइये कि हम क्या करें। मुफ़्ती साहिब बेचारे ऐसे वक़्त में क्या करेगें। अब उस वक़्त यह मालूम करना मुश्किल होता है कि जिस वक़्त कारोबार के अन्दर शिर्कत थी, और बेटे अपने बाप के साथ मिलकर कारोबार कर रहे थे, उस वक़्त बेटे किस हैसियत में काम कर रहे थे?

मश्तरक मकान की तामीर में हिस्सेदारों का हिस्सा

या जैसे एक मकान बन रहा है, तामीर के दौरान कुछ पैसे बाप ने लगा दिये, कुछ पैसे एक बेटे ने लगा दिये, कुछ दूसरे ने लगा दिये, कुछ तीसरे ने लगा दिये। लेकिन यह पता नहीं कि कौन किस हिसाब से किस तरह से किस तनासुब से लगा रहा है, और यह भी पता नहीं कि जो पैसे तुम लगा रहे हो वे आया क़र्ज़ के तौर पर दे रहे हो और उसको वापस लोगे, या मकान में हिस्सेदार बन रहे हो, या इम्दाद और सहयोग के तौर पर पैसे दे रहे हो, इसका कुछ पता नहीं। अब मकान तैयार हो गया और उसमें रहना शुरू कर दिया।

अब जब बाप का इन्तिकाल हुआ या आपस में दूसरे मसाइल पैदा हुए तो अब मकान पर झगड़े खड़े हो गये। अब मुफ़्ती साहिब के पास चले आ रहे हैं कि फ़लां भाई यह कहता है कि मेरा इतना हिस्सा है, मुझे इतना मिलना चाहिये। दूसरा कहता है कि मुझे इतना मिलना चाहिये, जब उनसे पूछा जाता है कि भाई! जब तुमने इस मकान की तामीर में पैसे दिये थे, उस वक़्त तुम्हारी क्या नियत थी? क्या तुमने बतौर क़र्ज़ दिये थे? या तुम मकान में हिस्सेदार बनना चाहते थे? या बाप की मदद करना चाहते थे? उस वक़्त क्या बात थी? तो यह जवाब मिलता है कि हमने तो पैसे देते वक़्त कुछ सोचा ही नहीं था। न हमने मदद के बारे में सोचा था, और न हिस्सेदारी के बारे में सोचा था। अब आप कोई हल निकालें। जब डोर उलझ गयी और सिरा हाथ नहीं आ रहा है तो अब मुफ़्ती साहिब की मुसीबत आयी कि वह इसका हल निकालें कि किसका कितना हिस्सा बनता है। यह सब इसलिये हुआ कि मामलात के बारे में हुज़ूरे अक़्दस नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तालीम पर अ़मल नहीं किया। नफ़्लें हो रही हैं, तहज्जुद की नमाज़ हो रही है, इशराक़ की नमाज़ हो रही है, लेकिन मामलात में सब अल्लम ग़ल्लम हो रहा है, किसी चीज़ का कुछ पता नहीं। यह सब काम हराम हो रहा है। जब यह मालूम नहीं कि मेरा हक़ कितना है और दूसरे का हक़ कितना है, तो इस सूरत में जो कुछ तुम उसमें से खा रहे हो, उसके हलाल होने में भी शुबह है, जायज़ नहीं।

हज़रत मुफ़्ती साहिब रह. और मिल्कियत की वज़ाहत

मेरे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह. अल्लाह तआ़ला उनके दर्जों को बुलन्द फ़रमाये, आमीन। उनका एक मख़्सूस कमरा था, उसमें आराम फ़रमाया करते थे। एक चारपाई बिछी हुई थी, उसी पर आराम किया करते थे। उसी पर लिखने पढ़ने का काम किया करते थे। वहीं पर लोग आकर मुलाक़ात किया करते

थे। मैं यह देखता था कि जब उस कमरे में कोई सामान बाहर से आता तो फ़ौरन वापस भिजवा देते थे। जैसे हज़रत वालिद साहिब ने पानी मंगवाया, मैं गिलास में पानी भर कर पिलाने चला गया। जब आप पानी पी लेते तो फ़ौरन फ़रमाते कि यह गिलास वापस रख आओ, जहां से लाये थे। जब गिलास वापस लेजाने में देर हो जाती तो नाराज़ हो जाते। अगर प्लेट आ जाती तो फ़ौरन फ़रमाते कि यह प्लेट वापस बावर्ची ख़ाने में रख आओ। एक दिन मैंने कहा कि हज़रत! अगर सामान वापस लेजाने में थोड़ी देर हो जाया करे तो माफ़ फ़रमा दिया करें। फ़रमाने लगे कि तुम बात समझते नहीं हो। बात असल में यह है कि मैंने अपने वसीयत नामे में लिखा हुआ है कि इस कमरे में जो सामान भी है वह मेरी मिल्कित है, और बाक़ी कमरों में और घर में जो सामान है वह तुम्हारी वालिदा की मिल्कियत है। इसलिये मैं इस बात से डरता हूं कि कभी दूसरे कमरों का सामान यहां पर आ जाये, और उसी हालत में मेरी वफ़ात हो जाये, तो इस वसीयत नामे के मुताबिक़ तुम यह समझोगे कि यह मेरी मिल्कियत है, हालांकि वह मेरी मिल्कियत नहीं। इस वजह से मैं कोई चीज़ दूसरों की अपने कमरे में नहीं रखता, वापस करवा देता हूं।

हज़रत डॉ. अ़ब्दुल हई साहिब रह. की एहतियात

जब हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि की वफ़ात हो गयी तो मेरे शैख़ हज़रत डॉ. अ़ब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ताज़ियत के लिये तशरीफ़ लाये। हज़रत वालिद साहिब से हज़रत डॉ. साहिब को बहुत ही ख़ुसूसी ताल्लुक़ था, जिसका हम और आप तसव्वुर नहीं कर सकते। चूंकि आप ज़ओ़फ़ थे, इस वजह से उस वक़्त आप पर कमज़ोरी के आसार नुमायां थे, मुझे उस वक़्त ख़्याल आया कि हज़रते वाला पर इस वक़्त बहुत कमज़ोरी और ग़म है तो अन्दर से मैं हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि का ख़मीरा ले आया, जो आप खाया करते थे, और हज़रते वाला की ख़िदमत में पेश

करते हुए कहा कि हज़रत आप ख़मीरे का एक चमचा खा लें। हज़रते वाला ने उस ख़मीरे को देखते ही कहा कि तुम यह ख़मीरा कैसे ले आये, यह ख़मीरा तो अब मीरास और तर्के का एक हिस्सा बन गया है, अब तुम्हारे लिये यह जायज़ नहीं कि इस तरह यह ख़मीरा उठा कर किसी को दे दो, अगरचे वह एक चमचे के बराबर ही क्यों न हो। मैंने कहा कि हज़रत! हज़रत वालिद साहिब रह. के जितने वारिस हैं, वे सब अल्हम्दु लिल्लाह बालिग़ हैं, और वे सब यहां मौजूद हैं, और इस बात पर राज़ी हैं कि आप यह ख़मीरा खा लें। तब हज़रत ने वह ख़मीरा खाया।

हिसाब उसी दिन कर लें

इसके ज़रिये हज़रते वाला ने यह सबक़ दे दिया कि यह बात ऐसी बात नहीं है कि आदमी रवा–रवी में गुज़र जाये। फ़र्ज़ करें कि अगर तमाम वारिसों में एक वारिस भी ना बालिग़ होता या मौजूद न होता और उसकी रज़ामन्दी शामिल न होती तो उस ख़मीरे का एक चमचा भी हराम हो जाता। इसलिये शरीअ़त का यह हुक्म है कि जैसे ही किसी का इन्तिक़ाल हो जाये तो जल्द से जल्द उसकी मीरास तक़सीम कर दो, या कम से कम हिसाब करके रख लो कि फ़लां का इतना हिस्सा है और फ़लां का इतना हिस्सा है। इसलिये कि कभी कभी तक़सीम में कुछ देरी हो जाती है, बाज़ चीज़ों की क़ीमत लगानी पड़ती है और बाज़ चीज़ों को फ़रोख़्त करना पड़ता है, लेकिन हिसाब उसी दिन हो जाना चाहिये। आज इस वक़्त हमारे समाज में जितने झगड़े फैले हुए हैं, उन झगड़ों का एक बुनियादी सबब हिसाब किताब का साफ़ न होना और मामलात का साफ़ न होना है।

इमाम मुहम्मद रह. और तसव्वुफ़ पर किताब

इमाम मुहम्मद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि जो इमाम अबू हनीफ़ा रह. के शागिर्द हैं। यह वह बुज़ुर्ग हैं जिन्होंने इमाम अबू हनीफ़ा रह्मतुल्लाहि

अ़लैहि के सारे फ़िक़्ही अह़्काम अपनी किताबों के ज़रिये हम तक पहुंचाये। उनका एहसान हमारे सरों पर इतना है कि सारी उम्र तक हम उनके एह्सान का सिला नहीं दे सकते। उनकी लिखी हुई किताबें कई ऊंटों के बोझ के बराबर थीं। किसी ने उनसे पूछा कि हज़रत! आपने बहुत सारी किताबें लिखी हैं, लेकिन तसव्वुफ़ और ज़ुह्द के मौज़ू पर कोई किताब नहीं लिखी? इमाम मुहम्मद रह. ने जवाब में फ़रमाया कि तुम कैसे कहते हो कि मैंने तसव्वुफ़ पर किताब नहीं लिखी, मैंने जो "किताबुल बुयूअ्" लिखी है, वह तसव्वुफ़ ही की तो किताब है। मतलब यह था कि ख़रीद व बेच के अह्काम और लेन देन के अह्काम हक़ीक़त में तसव्वुफ़ ही के अह्काम हैं, इसलिये कि ज़ुह्द और तसव्वुफ़ हक़ीक़त में शरीअ़त की ठीक ठीक पैरवी का नाम है। और शरीअ़त की ठीक ठीक पैरवी ख़रीद व बेच और लेन देन के अह्काम पर अ़मल करने से होती है।

दूसरों की चीज़ अपने इस्तेमाल में लाना

इसी तरह दूसरों की चीज़ इस्तेमाल करना हराम है। जैसे कोई दोस्त है या भाई है, उसकी चीज़ उसकी इजाज़त के बग़ैर इस्तेमाल कर ली, तो यह जायज़ नहीं है, बल्कि हराम है। लेकिन अगर आपको यह यक़ीन है कि उसकी चीज़ इस्तेमताल करने से वह ख़ुश होगा और ख़ुशी से इसकी इजाज़त दे देगा, तब तो इस्तेमाल करना जायज़ है। लेकिन जहां ज़रा भी उसकी इजाज़त में शक हो, चाहे वह हक़ीक़ी भाई ही क्यों न हो, या चाहे वह बेटा हो, और अपने बाप की चीज़ इस्तेमाल कर रहा हो, जब तक इस बात का इत्मीनान न हो कि ख़ुश दिली से वह इजाज़त दे देगा, या मेरे इस्तेमाल करने से वह ख़ुश होगा, उस वक़्त तक उसका इस्तेमाल जायज़ नहीं। हदीस में नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"لا يحل مال امرئ مسلم الا بطيب نفس منه" (كنز العمال حديث: ٣٩٧)

यानी किसी मुसलमान का माल तुम्हारे लिये हलाल नहीं जब

तक वह ख़ुश दिली से न दे। इस हदीस में "इजाज़त" का लफ़्ज़ इस्तेमाल नहीं फ़रमाया, बल्कि "ख़ुश दिली" का लफ़्ज़ इस्तेमाल फ़रमाया। मतलब यह है कि सिर्फ़ इजाज़त काफ़ी नहीं, बल्कि वह इस तरह इजाज़त दे कि उसका दिल ख़ुश हो, तब तो वह चीज़ हलाल है। अगर आप दूसरे की चीज़ इस्तेमाल कर रहे हैं, लेकिन आपको उसकी ख़ुश दिली का यक़ीन नहीं है, तो आपके लिये वह चीज़ इस्तेमाल करना जायज़ नहीं।

ऐसा चन्दा हलाल नहीं

हकीमुल उम्मत हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि मदरसों के चन्दे और अन्जुमनों के चन्दे के बारे में फ़रमाया करते थे कि ये चन्दे इस तरह वसूल करना कि दूसरा शख़्स दबाव के तहत चन्दा दे दे, ऐसा चन्दा हलाल नहीं। जैसे आपने आ़म मजमे में चन्दा लेना शुरू कर दिया, उस मजमे में एक आदमी शर्मा शर्मी में यह सोच कर चन्दा दे रहा है कि इतने सारे लोग चन्दा दे रहे हैं, और मैं चन्दा न दूं तो मेरी नाक कट जायेगी, और दिल के अन्दर चन्दा देने की ख़्वाहिश नहीं थी, तो यह चन्दा ख़ुश दिली के बग़ैर दिया गया, यह "चन्दा" लेने वाले के लिये हलाल नहीं। इस मौज़ू पर हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने एक मुस्तक़िल रिसाला लिखा है, और उसमें ये अह्काम लिखे हैं कि किस हालत में चन्दा लेना जायज़ है और किस हालत में चन्दा लेना जायज़ नहीं।

हर एक की मिल्कियत वाज़ेह होनी चाहिए

बहर हाल, यह उसूल ज़ेहन में रखो कि जब तक दूसरे की ख़ुश दिली का इत्मीनान न हो, उस वक़्त तक दूसरे की चीज़ इस्तेमाल करना हलाल नहीं, चाहे वह बेटा क्यों न हो, बाप क्यों न हो, भाई और बहन क्यों न हो, चाहे बीवी और शौहर क्यों न हो। इस उसूल को भुलाने की वजह से हमारे माल में हराम की मिलावट हो जाती है। अगर कोई शख़्स कहे कि मैं तो ग़लत काम नहीं करता, रिश्वत

नहीं लेता, सूद मैं नहीं खाता, चोरी मैं नहीं करता, डाका मैं नहीं डालता, इसलिये मेरा माल तो हलाल है। लेकिन उसको यह नहीं मालूम कि इस उसूल का लिहाज़ न रखने की वजह से हराम माल की मिलावट हो जाती है। और हराम माल की मिलावट हलाल माल को भी तबाह कर देती है, और उसकी बर्कतें ख़त्म हो जाती हैं, उसका नफ़ा ख़त्म हो जाता है। और उल्टा उस हराम माल के नतीजे में इन्सान की तबीयत गुनाहों की तरफ़ चलती है, रूहानियत को नुक़सान होता है। इसलिये मामलात को साफ़ रखने की फ़िक्र करें कि किसी मामले में कोई उलझाव न रहे, हर चीज़ साफ़ और वाज़ेह होनी चाहिये। हर चीज़ की मिल्कियत वाज़ेह होनी चाहिये कि यह चीज़ मेरी मिल्कियत है, यह फ़लां की मिल्कियत है। लेकिन मिल्कियत वाज़ेह हो जाने के बाद आपस में भाईयों की तरह रहो। दूसरे शख़्स को तुम्हारी चीज़ इस्तेमाल करने की ज़रूरत पेश आये तो दे दो, लेकिन मिल्कियत वाज़ेह होनी चहिये, ताकि कल को कोई झगड़ा खड़ा न हो जाये।

मस्जिदे नबवी के लिये ज़मीन मुफ़्त क़बूल न की

जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हिज्रत करके मदीना मुनव्वरा तश्रीफ़ लाये तो आपके सामने सब से पहला काम यह था कि यहां पर कोई मस्जिद बनाई जाये। वह मस्जिदे नबवी जिसमें एक नमाज़ का सवाब पचास हज़ार नमाज़ों के बराबर है। चुनांचे एक जगह आपको पसन्द आ गई जो ख़ाली पड़ी हुई थी। आपने उस जगह के बारे में मालूम कराया कि यह किसकी जगह है? तो पता चला कि यह बनी नज्जार के लोगों की जगह है। जब बनू नज्जार के लोगों को पता चला कि आप उस जगह पर मस्जिद बनाना चाहते हैं तो उन्होंने आकर अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! यह तो हमारी बड़ी ख़ुश क़िस्मती की बात है कि हमारी जगह पर मस्जिद बनायी जाये। हम यह जगह मस्जिद के लिये मुफ़्त देते हैं, ताकि आप यहां पर मस्जिदे नबवी की

तामीर फ़रमायें। आपने फ़रमाया कि नहीं, मैं मुफ़्त नहीं लूंगा, तुम इसकी क़ीमत बताओ, क़ीमत के ज़रिये लूंगा। हालांकि बज़ाहिर यह मालूम हो रहा था कि वे लोग अपनी सआदत और ख़ुशनसीबी समझ कर यह चाह रहे थे कि उनकी जगह मस्जिदे नबवी की तामीर में इस्तेमाल हो जाये, लेकिन इसके बावजूद आपने मुफ़्त लेना गवारा नहीं किया।

मस्जिद की तामीर के लिये दबाव डालना

उलमा-ए-किराम ने इस हदीस की शरह में लिखा है कि वैसे तो जब बनी नज्जार के लोग मस्जिद के लिये चन्दे के तौर पर मुफ़्त ज़मीन दे रहे थे तो यह ज़मीन लेना जायज़ था, इसमें कोई गुनाह की बात नहीं थी। लेकिन चूंकि मदीना मुनव्वरा में इस्लाम की यह पहली मस्जिद तामीर हो रही थी। अगरचे क़ुबा में एक मिस्जद तामीर हो चुकी थी। और यह वह मस्जिद थी जिसको आगे चल कर हरमे मक्का के बाद दूसरा मक़ाम हासिल होना था। इसलिये आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस बात को पसन्द नहीं फ़रमाया कि यह ज़मीन इस तरह मुफ़्त क़ीमत के बग़ैर ले ली जाये। वर्ना आइन्दा के लिए लोगों के सामने यह नज़ीर बन जायेगी कि जब मस्जिद बनानी हो तो मस्जिद के लिये ज़मीन क़ीमतन ख़रीदने के बजाये लोग मुफ़्त अपनी ज़मीनें दें। और इसलिये यह ज़मीन मुफ़्त क़बूल नहीं कि ताकि लोगों पर यह वाज़ेह फ़रमा दें कि यह बात दुरुस्त नहीं कि मस्जिद की तामीर की ख़ातिर दूसरों पर दबाव डाला जाये। या दूसरों की जायदाद पर नज़र रखी जाये। इस वजह से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पैसे देकर वह ज़मीन ख़रीदी और फिर मस्जिदे नबवी की तामीर फ़रमाई, ताकि मामला साफ़ रहे और किसी क़िस्म की कोई उल्झन बाक़ी न रहे।

पूरे साल का ख़र्च देना

आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पाक बीवियां, जो हक़ीक़त में आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की शरीके हयात

बनने की मुस्तहिक़ थीं, और अल्लाह तआला ने उनके दिलों से दुनिया की मुहब्बत निकाली हुई थी, और आख़िरत की मुहब्बत उनके दिलों में भरी हुई थी। लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मामला यह था कि साल के शुरू में अपनी बीवियों का ख़र्च इकट्ठा दे दिया करते थे, और उनसे फ़रमा देते कि यह तुम्हारा नफ़्क़ा (ख़र्च) है, तुम जो चाहो करो। अब वे पाक बीवियां भी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बीवियां थीं, उनके यहां तो हर वक़्त सदक़ा व ख़ैरात का सिलसिला जारी रहता था। चुनांचे वे पाक बीवियां ज़रूरत के मुताबिक़ अपने पास रखतीं, बाक़ी सब ख़ैरात कर देती थीं। लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्ल. ने यह मिसाल क़ायम फ़रमाई कि पूरे साल का ख़र्च इकट्ठा दे दिया।

हुज़ूर का पाक बीवियों से बराबरी का मामला करना

अल्लाह तआला ने हुज़ूरे अक़्दस सल्ल. से पाबन्दी उठा ली थी कि वह अपनी पाक बीवियों में बराबरी करें। बल्कि आपको यह इख़्तियार दे दिया था कि जिसको चाहें ज़्यादा दें और जिसको चाहें कम दें, इस मामले में हम आप से पूछ गछ नहीं करेंगे। इस इख़्तियार के नतीजे में बीवियों के दरमियान बराबरी करना आपके ज़िम्मे फ़र्ज़ नहीं रहा था। जब कि उम्मत के तमाम अफ़राद के लिये बराबरी करना फ़र्ज़ है। लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्ल. ने सारी उम्र इस इख़्तियार और इजाज़त पर अमल नहीं फ़रमाया, बल्कि हर चीज़ में बराबरी फ़रमाई, और उनकी मिल्कियत को वाज़ेह और नुमायां फ़रमा दिया था। और उनके हुक़ूक़ पूरी तरह ज़िन्दगी भर अदा फ़रमाये।

ख़ुलासा

बहर हाल! इन हदीसों और आयतों में जो बुनियादी उसूल बयान फ़रमाया, जिसको हम भुलाते जा रहे हैं। वह "मामलात की सफ़ाई" और मामलात की दुरुस्ती है। यानी मामला साफ़ और वाज़ेह हो, उसमें कोई बात गोल मोल और ग़ैर वाज़ेह न रहे। चाहे वह मर्द हो

या औरत, हर एक अपने मामलात को साफ़ रखे। इसके बगैर आमदनी और ख़र्चे शरीअत की हदों में नहीं रहते। अल्लाह तआला अपनी रहमत से और अपने फ़ज़्ल व करम से इस हक़ीक़त और इस हुक्म को समझने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये। और इस पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

وآخردعوانا ان الحمد لله رب العالمين

इस्लाम का मतलब क्या है?

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ۔

"يٰاَيُّهَاالَّذِيْنَ اٰمَنُوا ادْخُلُوْا فِى السِّلْمِ كَآفَّةً وَّلَا تَتَّبِعُوْا خُطُوَاتِ الشَّيْطٰنِ اِنَّهٗ لَكُمْ عَدُوٌّ مُّبِيْنٌ" (سورة البقرة:٢٠٨)

اٰمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظيم، وصدق رسوله النبى الكريم و نحن علىٰ ذالك من الشاهدين۔

तम्हीद

मेरे मुहतरम बुज़ुर्गो और दोस्तो! सब से पहले मैं आप हज़रात के सामने इस जज़्बे की मुबारक बाद पेश करना चाहता हूं कि आपने अपने औक़ात (समय) में से कुछ वक़्त दीन की बात सुनने के लिये निकाला, और इस ग़र्ज़ के लिये यहां जमा हुए कि अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अह्काम और तालीमात की कुछ बातें सुनी जायें। अल्लाह तआ़ला आपके इस जज़्बे को क़बूल फ़रमाये, और इसके कहने वाले और सुनने वाले सब को अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन। इस वक़्त मैंने आप हज़रात के सामने क़ुरआने करीम की एक आयत तिलावत की है।

इस आयत की थोडी सी तश्रीह आप हज़रात की खिदमत में अर्ज़ करना चाहता हूं। अल्लाह तआ़ला ने इस आयत में मोमिनों से ख़िताब करते हुए फ़रमायाः ऐ ईमान वालो! इस्लाम में पूरे के पूरे दाख़िल हो जाओ और शैतान के नक़्शे क़दम की पैरवी मत करो और उसके पीछे मत चलो।

क्या ईमान और इस्लाम अलग अलग हैं

यहां सब से पहली बात जो समझने की है वह यह है कि अल्लाह तआ़ला ने इस आयत में इन अल्फ़ाज़ में ख़िताब किया कि "ऐ ईमान वालो" यानी उन लोगों से ख़िताब हो रहा है जो ईमान ला चुके, जो कलिमा-ए-तय्यिबा और कलिमा-ए-शहादत पर अपने एतिक़ाद का इज़हार कर चुके, और "अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु व अश्हदु अन्-न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह" कह चुके, उनसे ख़िताब करके कहा जा रहा है कि ऐ ईमान वालो! इस्लाम में दाख़िल हो जाओ। सोचने की बात यह है कि जब ईमान ला चुके तो ईमान लाने के बाद इस्लाम में दाख़िल होने के क्या मायने? आम तौर पर यह समझा जाता है कि जब एक शख़्स ईमान ले आया तो वह इस्लाम में भी दाख़िल हो गया, ईमान और इस्लाम एक ही चीज़ समझी जाती है, लेकिन अल्लाह तआ़ला फ़रमा रहे हैं कि ऐ ईमान वालो! इस्लाम में दाख़िल हो जाओ। जिस से यह समझ में आ रहा है कि ईमान कुछ और चीज़ है और इस्लाम कुछ और चीज़ है। और ईमान लाने के बाद इस्लाम में दाख़िल होना भी ज़रूरी है।

"इस्लाम" लाने का मतलब

पहली बात तो समझने की यह है कि इस्लाम क्या है? और ईमान वालों को इस्लाम में दाख़िल होने की जो दावत दी जा रही है, उस से क्या मुराद है, और इस्लाम किसको कहते हैं? "इस्लाम" अरबी ज़बान का लफ़्ज़ है, इस्लाम के मायने हैं अपने आपको किसी के आगे झुका देना, यानी किसी बड़ी ताक़त के सामने अपना सर

झुका देना, और अपने आपको उसका ताबे बना लेना कि जैसा वह कहे उसके मुताबिक़ इन्सान करे, यह हैं "इस्लाम" के मायने। जिसका मतलब यह हुआ कि सिर्फ़ ज़बान से कलिमा तय्यिबा पढ़ लेना और अल्लाह तआला की वहदानियत (एक होने) पर और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की रिसालत (रसूल होने) पर और आख़िरत के दिन पर ईमान ले आना, ये बातें इस्लाम में दाख़िल होने के लिये काफ़ी नहीं, बल्कि इस्लाम में दाख़िल होने के लिये ज़रूरी है कि इन्सान अपने पूरे वजूद को अल्लाह तआला के हुक्म और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तालीम के आगे झुका दे। जब तक यह नहीं होगा उस वक़्त तक इन्सान सही मायने में इस्लाम के अन्दर दाख़िल नहीं होगा।

बेटे के ज़िबह करने का हुक्म अक़्ल के ख़िलाफ़ था

यही लफ़्ज़ "इस्लाम" अल्लाह तआला ने क़ुरआने करीम की सूरः साफ़्फ़ात में हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के वाक़िए में भी इस्तेमाल फ़रमाया है। वह वाक़िआ यह है कि हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह अलैहिस्सलाम को अल्लाह तआला की तरफ़ से यह हुक्म हुआ था कि वह अपने बेटे हज़रत इसमाईल अलैहिस्सलाम को ज़िबह कर दें, जिसकी यादगार हम और आप हर साल ईदुल अज़्हा के मौक़े पर मनाते हैं। बेटा भी वह जो उमंगों और मुरादों से तलब किया हुआ, जिसके लिये आपने दुआएं की थीं कि या अल्लाह! मुझे बेटा इनायत फ़रमा दीजिये, जब वह बेटा ज़रा चलने फिरने और आने जाने के लायक़ हुआ और बाप का हाथ बटाने के लायक़ हुआ तो उस वक़्त यह हुक्म आया कि उसके गले पर छुरी फेर कर उसको ख़त्म कर दो। अब अगर इस हुक्म को अक़्ल की तराज़ू में तौल कर देखा जाये और इसकी हिक्मत और मस्लिहत पर ग़ौर किया जाये तो कोई अक़्ली हिक्मत, अक़्ली मस्लिहत, कोई अक़्ली जवाज़ इस बात का नज़र नहीं आयेगा कि कोई बाप अपने बेटे के गले पर छुरी फेर दे, न तो कोई बाप ऐसा कर सकता है और न ही दुनिया का कोई

इन्सान इस अमल को अक्ल और इन्साफ़ के मुताबिक़ क़रार दे सकता है।

बेटे का भी इम्तिहान हो गया

लेकिन जब अल्लाह तआला का हुक्म आ गया कि अपने बेटे को कुर्बान कर दो तो हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने अपने बेटे हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम से फ़रमायाः

"اِنِّیْٓ اَرٰی فِی الْمَنَامِ اَنِّیْٓ اَذْبَحُکَ فَانْظُرْ مَاذَا تَرٰی" (الصافات:۱۰۲)

बेटा! मैंने ख़्वाब में देखा है कि मैं तुम्हें ज़िबह कर रहा हूं। बताओ तुम्हारी क्या राय है? मुझे क्या करना चाहिये? यह सवाल इसलिये नहीं किया कि उनके दिल में इस हुक्म पर अमल करने में तरद्दुद था, बल्कि इसलिये सवाल किया कि बेटे का भी इम्तिहान लिया जाये कि देखें बेटा इसके बारे में क्या जवाब देता है। वह बेटा भी अल्लाह के दोस्त का बेटा था, और जिसकी पीठ से नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दुनिया में तशरीफ़ लाने वाले थे। उस बेटे ने भी पलट कर यह नहीं कहा कि अब्बा जान! मैंने कौन सा ऐसा जुर्म किया है, क्या ख़ता मुझ से सर्ज़द हुई है, क्या गलती मैंने की है जिसकी सज़ा में मुझे ज़िन्दगी से महरूम किया जा रहा है और मुझे क़त्ल किया जा रहा है। बल्कि जवाब में बेटे ने यह कहा किः

"يٰٓاَبَتِ افْعَلْ مَا تُؤْمَرُ، سَتَجِدُنِیْٓ اِنْ شَآءَ اللّٰهُ مِنَ الصّٰبِرِیْنَ" (الصّافات:۱۰۲)

अब्बा जान! जो हुक्म आपको अल्लाह तआला की तरफ़ से हुआ है, उसको कर गुज़रिये और मेरी फ़िक्र न कीजिये, इसलिये कि उस हुक्म पर अमल करने में मुझे तक्लीफ़ पहुंचेगी तो इन्शा अल्लाह आप मुझे सब्र करने वालों में से पायेंगे। और हज़रत इब्राहीम अलै. ने भी अल्लाह तआला से यह नहीं पूछा कि ऐ अल्लाह! आपने जो मुझे मेरे चहीते बेटे को कुर्बान करने का हुक्म दिया है, इसमें क्या हिक्मत और मस्लिहत है? बस दोनों ने यह देखा कि यह हुक्म हमारे ख़ालिक़ और हमारे मालिक की तरफ़ से आया है, उसी वक़्त दोनों

बाप और बेटे उस हुक्म के पूरा करने पर तैयार हो गये।

चलती छुरी न रुक जाये

कुरआने करीम ने इस वाकिए को बड़े प्यारे अन्दाज़ में ज़िक्र किया है, यानी जब बाप और बेटा उस हुक्म को पूरा करने के लिये तैयार हो गये और बाप के हाथ में छुरी है और बेटा ज़मीन पर लिटा दिया गया है, और करीब है कि वह छुरी गले पर चल जाये और बेटे का काम तमाम कर दे। इस वाकिए को ज़िक्र करने के लिये कुरआने करीम ने जो अल्फ़ाज़ इस्तेमाल फ़रमाये हैं वे ये हैं:

"فَلَمَّآ اَسْلَمَا وَتَلَّهٗ لِلْجَبِیْنِ" (الصافات:۱۰۳)

यानी जब बाप और बेटा दोनों इस्लाम ले आये और दोनों ने अल्लाह के हुक्म के आगे अपने आपको झुका दिया और बाप ने बेटे को माथे के बल लिटा दिया। माथे के बल इसलिये लिटा दिया कि अगर सीधा लिटायें तो कहीं ऐसा न हो कि बेटे की सूरत देख कर और उस सूरत पर ज़ाहिर होने वाले परेशानी और तक्लीफ़ के असरात देख कर छुरी चलने की रफ़्तार में कमी आ जाये, और कहीं अल्लाह तआला के हुक्म को पूरा करने में रुकावट पैदा हो जाये, इसलिये उल्टा लिटा दिया, इस मौके पर अल्लाह तआला ने लफ़्ज़ "अस्लमा" इस्तेमाल फ़रमाया, यानी दोनों अल्लाह तआला के हुक्म के आगे झुक गये।

अल्लाह के हुक्म के ताबे बन जाओ

इस से मालूम हुआ कि कुरआन की इस्तिलाह में "इस्लाम" के मायने यह हैं कि इन्सान अपने आपको और अपने पूरे वजूद को अल्लाह तआला के हुक्म के आगे झुका दे, और जब अल्लाह तआला का कोई हुक्म आ जाये तो यह न पूछे कि इसमें अक़्ली हिक्मत और मस्लिहत क्या है, बल्कि अल्लाह तआला का हुक्म आने के बाद उस पर अ़मल करने की फ़िक्र करे। यह है "इस्लाम" और इसी इस्लाम में दाख़िल होने के लिये कुरआने करीम की आयतः

"يَآاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا ادْخُلُوْا فِى السِّلْمِ كَآفَّةً وَّلَا تَتَّبِعُوْا خُطُوٰتِ الشَّيْطٰنِ اِنَّهٗ لَكُمْ عَدُوٌّ مُّبِيْنٌ" (سورة البقرة:٢٠٨)

में हुक्म दिया गया है। यानी ऐ ईमान वालो! तुमने कलिमा-ए-तय्यिबा और कलिमा-ए-शहादत तो पढ़ लिया लेकिन अब इस्लाम में दाख़िल होने की ज़रूरत है, वह यह कि अपने पूरे वजूद को अल्लाह तआ़ला के हुक्म के ताबे बना दो और जो हुक्म भी अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से आये उसको क़बूल करो, और उसको तस्लीम करो, और उस पर अ़मल करो।

वर्ना अ़क्ल के ग़ुलाम बन जाओगे

अब सवाल यह है कि अल्लाह के हुक्म को चूं व चरा के बग़ैर क्यों मान लें? इसका जवाब यह है कि अगर तुम अल्लाह के हुक्म को इस तरह चूं व चरा के बग़ैर नहीं मानोगे बल्कि अपनी अ़क्ल और समझ इस्तेमाल करके यह कहोगे कि यह हुक्म तो बेकार और बे फ़ायदा है, या यह हुक्म तो इन्साफ़ के ख़िलाफ़ है, तो इसका नतीजा यह होगा कि तुम अपनी अ़क्ल के ग़ुलाम बन कर रह जाओगे और अल्लाह तआ़ला की ग़ुलामी और बन्दगी को छोड़ कर अ़क्ल की ग़ुलामी में मुब्तला हो जाओगे।

इल्म हासिल करने के सूत्र

अल्लाह तआ़ला ने इन्सान को इस दुनिया में इल्म हासिल करने के कुछ सूत्र अ़ता फ़रमाये हैं, उन सूत्रों के ज़रिये इन्सान इल्म हासिल करता है। जैसे सब से पहला इल्म हासिल करने का ज़रिया "आंख" है। आंख के ज़रिये चीज़ों को देख कर उनके बारे में इन्सान इल्म हासिल करता है। दूसरा इल्म हासिल करने का ज़रिया "ज़बान" है। इस ज़बान के जरिये इन्सान बहुत सी चीज़ों को चख कर उनके बारे में इल्म हासिल करता है। तीसरा इल्म हासिल करने का ज़रिया "कान" है। इस कान के ज़रिये बहुत सी चीज़ों के बारे में सुनकर इन्सान इल्म हासिल करता है। इल्म हासिल करने का एक

ज़रिया "हाथ" है। इसके ज़रिये इन्सान बहुत सी चीज़ों को छूकर इल्म हासिल करता है। जैसे यह सामने माईक्रोफ़ोन है। अब मुझे आंख के ज़रिये देख कर इसके बारे में यह इल्म हासिल हुआ कि यह एक आला है, और गोल बना हुआ है, और हाथ लगाने से पता चला कि यह ठोस है, और कान के ज़रिये मुझे पता चला कि यह आला मेरी आवाज़ को दूर तक पहुंचा रहा है। देखिये! कुछ इल्म आंख के ज़रिये देख कर हासिल हुआ, कुछ इल्म कान के ज़रिये सुनकर हासिल हुआ, और कुछ इल्म हाथ के ज़रिये छूकर हासिल हुआ।

इन सूत्रों के काम का दायरा मुताय्यन है

लेकिन अल्लाह तआ़ला ने इल्म के इन ज़रियों के काम का एक दायरा मुक़र्रर कर दिया। उस दायरा-ए-कार के अन्दर इल्म के वे ज़रिये काम देंगे। अगर उस दायरे से बाहर उस ज़रिये को इस्तेमाल करोगे तो वह ज़रिया काम नहीं देगा। जैसे आंख के काम का दायरा यह मुक़र्रर कर दिया है कि वह देख कर इल्म अ़ता करती है, लेकिन सुनकर इल्म नहीं देती। इसके अन्दर सुनने की ताक़त मौजूद नहीं, वह काम कान का है, और कान सुन सकता है मगर देख नहीं सकता, ज़बान चख सकती है लेकिन उसके अन्दर सुनने और देखने की सलाहियत मौजूद नहीं। अगर कोई शख़्स यह चाहे कि मैं अपनी आंखें तो बन्द कर लूं और अपने कानों के ज़रिये यह देखूं कि मेरे सामने क्या मन्ज़र है, तो वह अहमक़ और बेवकूफ़ है, इसलिये कि कान उसको कोई मन्ज़र नहीं दिखा सकेगा, क्योंकि उसने कान को उसके काम के दायरे से बाहर इस्तेमाल किया। कान देखने के लिये बनाये ही नहीं गये हैं। या अगर कोई शख़्स यह चाहे कि मैं कान को तो बन्द कर लूं और आंख के ज़रिये यह सुनूं कि मेरे सामने वाला शख़्स क्या बात कह रहा है, तो वह शख़्स भी बेवकूफ़ है, इसलिये कि यह सुनने का काम आंख अन्जाम नहीं दे सकती। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि यह आंख बेकार है, यह आंख बड़ी कारामद है, लेकिन उस वक़्त तक कारामद है जब तक इसको इसके काम के

दायरे में और देखने के काम में इस्तेमाल किया जाये, अगर सुनने में इस्तेमाल करोगे तो यह आंख कोई काम नहीं देगी।

इल्म के हासिल करने का एक और ज़रिया, "अक़्ल"

लेकिन एक मर्हला ऐसा आता है जहां ये ज़ाहिरी पांचों हवास आंख, कान, नाक, ज़बान और हाथ मालूमात मुहैया करना छोड़ देते हैं, काम देना बन्द कर देते हैं, उस मर्हले के लिये अल्लाह तआला ने इल्म हासिल करने का एक और ज़रिया अता फ़रमाया है, वह है इन्सान की अक़्ल। यह अक़्ल उन चीज़ों का इल्म इन्सान को अता करती है जिनका इल्म आंख के ज़रिये देख कर हासिल नहीं हो सकता, जैसे यह माईक्रोफ़ोन है, मैंने हाथ के ज़रिये छूकर और आंख के ज़रिये देख कर यह तो पता लगा लिया कि यह ठोस है, लोहे का बना हुआ है, लेकिन इसको किसने बनाया? और किस तरह यह वजूद में आया? यह बात न आंख देख कर बता सकती है, न कान सुनकर बता सकता है, न ज़बान चख कर बता सकती है। इसको मालूम करने के लिये अल्लाह तआला ने हमें अक़्ल अता फ़रमाई है, इस अक़्ल के ज़रिये हमें यह पता चला कि इतना ख़ूबसूरत और शानदार बना हुआ आला जो इतना अहम काम अन्जाम दे रहा है कि हमारी आवाज़ को दूर तक पहुंचा रहा है, यह आला ख़ुद बख़ुद नहीं बन सकता, ज़रूर किसी कारीगर ने इसको बनाया है। और ऐसे कारीगर ने बनाया है जो बड़ा माहिर है, और इस फ़न को जानने वाला है। इसलिये जिस जगह पर ये पांचों हवास अपना काम करना छोड़ देते हैं, वहां अल्लाह तआला ने हमें इल्म हासिल करने के लिये अक़्ल का ज़रिया अता फ़रमाया है।

अक़्ल के काम का दायरा

लेकिन जिस तरह आंख, कान और ज़बान वग़ैरह का काम ग़ैर महदूद (असीमित) नहीं था, बल्कि काम के एक दायरे के अन्दर अपना काम करते थे, उस से बाहर ये अपना काम करना छोड़ देते

थे, इसी तरह अक़्ल का काम भी ग़ैर महदूद नहीं, बल्कि इसके काम का भी एक दायरा है, उस दायरे से बाहर निकल कर वह भी इन्सान की रहनुमाई नहीं करती। एक मर्हला ऐसा आता है जहां पर अक़्ल भी ख़ामोश हो जाती है, जवाब दे जाती है, और इन्सान की सही रहनुमाई नहीं कर सकती।

इल्म के हासिल करने का एक और ज़रिया, 'वही-ए-इलाही'

और जिस जगह पर अक़्ल इन्सान की सही रहनुमाई करने से आजिज़ हो जाती है, वहां पर इन्सान की रहनुमाई के लिये अल्लाह तआला ने इल्म हासिल करने का तीसरा ज़रिया अता फ़रमाया है, उस तीसरे ज़रिये का नाम है "वही–ए–इलाही" यानी अल्लाह तआला की तरफ़ से नाज़िल होने वाली "वही" जो अंबिया अलै. पर नाज़िल होती है। यह "वही" उसी जगह पर इन्सान की रहनुमाई करती है जिस जगह पर इन्सान की तन्हा अक़्ल काफ़ी नहीं होती। इसलिये जिन बातों का समझना अक़्ल के ज़रिये मुम्किन नहीं था, उन बातों को बताने के लिये अल्लाह तआला ने "वही" नाज़िल फ़रमाई, उस "वही" के ज़रिये हमें बताया कि यह काम इस तरह है।

अक़्ल के आगे "वही-ए-इलाही"

जैसे यह बात कि इस कायनात के ख़त्म होने के बाद और इन्सान के मरने के बाद एक ज़िन्दगी और आने वाली है, जिसमें इन्सान को अल्लाह तआला के सामने पेश होना है, और उसको वहां पर अपने ताम आमाल का जवाब देना है। और वहां पर एक आलमे जन्नत है, और एक आलमे जहन्नम है। ये सारी बातें ऐसी हैं कि अगर इनके बारे में "वही" नाज़िल न होती, और "वही" के ज़रिये अंबिया अलैहिमुस्सलाम को न बताया जाता, तो सिर्फ़ अक़्ल की बुनियाद पर हम और आप यह पता नहीं लगा सकते थे कि मरने के बाद कैसी ज़िन्दगी आने वाली है, और उसमें कैसे हालात पेश आने वाले हैं, और अल्लाह तआला के सामने किस तरह जवाब देना है।

इस मक़सद के लिये अल्लाह तआ़ला ने इल्म हासिल करने का एक तीसरा ज़रिया हमें अता फ़रमाया, जिसका नाम "वही-ए-इलाही" है।

'वही-ए-इलाही' को अक़्ल से मत तौलो

यह "वही-ए-इलाही" आती ही उस जगह पर है जहां अक़्ल काम नहीं दे सकती थी, और इन्सान की रहनुमाई नहीं कर सकती थी, इस वजह से उस जगह पर "वही-ए-इलाही" हमारी रहनुमाई करती है। अब अगर कोई शख़्स यह कहे कि मैं 'वही-ए-इलाही' की बात उस वक़्त तक नहीं मानूंगा जब तक वह बात मेरी अक़्ल में न आ जाये। वह शख़्स ऐसा ही बेवक़ूफ़ है जैसे कोई शख़्स यह कहे कि मैं यह बात उस वक़्त तक तस्लीम नहीं करूंगा जब तक मुझे अपने कान से यह चीज़ नज़र न आने लगे। ऐसा शख़्स बेवक़ूफ़ है, इसलिये कि कान देखने के लिये बनाया ही नहीं गया। इसी तरह वह शख़्स भी बेवक़ूफ़ है जो यह कहे कि मैं 'वही-ए-इलाही' की बात उस वक़्त तक तस्लीम नहीं करूंगा जब तक मेरी अक़्ल न मान ले। इसलिये कि 'वही-ए-इलाही' तो आती ही उस जगह पर है जहां अक़्ल की परवाज़ ख़त्म हो जाती है। जैसे मैंने आपको जन्नत और जहन्नम की मिसाल दी। अब लोग यह कहते हैं कि जन्नत और जहन्नम की बात हमारी अक़्ल में नहीं आती। हालांकि ये चीज़ें अक़्ल के अन्दर कैसे आ सकती हैं? इसलिये कि ये चीज़ें अक़्ल की महदूद परवाज़ और महदूद दायरे से बाहर हैं। इसी वजह से उनको बयान करने के लिये अल्लाह तआ़ला ने अंबिया अलैहिमुस्सलाम पर "वही" नाज़िल फ़रमाई।

अच्छाई और बुराई का फ़ैसला "वही" करेगी

इसी तरह यह बात कि कौन सी चीज़ अच्छी है और कौन सी चीज़ बुरी है? क्या काम अच्छा है और क्या काम बुरा है? क्या चीज़ हलाल है और क्या चीज़ हराम है? कौन सा काम जायज़ है और कौन सा काम ना जायज़ है? यह काम अल्लाह तआ़ला को पसन्द

और यह काम अल्लाह तआला को ना पसन्द है, यह फैसला "वही" पर छोड़ा गया, सिर्फ इन्सान की अक्ल पर नहीं छोड़ा गया, इस्लिये कि तन्हा इन्सान की अक्ल यह फ़ैसला नहीं कर सती थी कि कौन सा काम अच्छा है और कौन सा काम बुरा है। कौन सा काम हलाल है और कौन सा काम हराम है।

इन्सानी अक्ल गलत रहनुमाई करती है

इस दुनिया के अन्दर जितनी बड़ी से बड़ी बुराइयां फैली हैं और गलत से गलत नज़रियात इस दुनिया के अन्दर आये वे सब अक्ल की बुनियाद पर आये। जैसे हम और आप मुसलमान होने की हैसियत से यह अक़ीदा रखते हैं कि सुअर का गोश्त हराम है। अगर इसके बारे में "वही" की रहनुमाई से हट कर सिर्फ़ अक्ल की बुनियाद पर सोचेंगे तो अक्ल गलत रहनुमाई करेगी। जैसा कि गैर मुस्लिमों ने सिर्फ़ अक्ल की बुनियाद पर यह कह दिया कि हमें तो सुअर का गोश्त खाने में बड़ा मज़ा आता है, उसके खाने में क्या हर्ज है? उसमें क्या अक्ली ख़राबी है? इसी तरह हम और आप कहते हैं कि शराब पीना हराम है, शराब बुरी चीज़ है, लेकिन जो शख़्स "वही–ए–इलाही" पर ईमान नहीं रखता, वह यह कहेगा कि शराब पीने में क्या बुराई है, हमें तो उसमें कोई बुराई नज़र नहीं आती, लाखों अफ़राद शराब पी रहे हैं, उनको उसके पीने से कोई ख़ास नुक़सान नहीं हो रहा है, और हमारी अक्ल में तो उसके बारे में कोई ख़राबी समझ में नहीं आती। यहां तक कि बाज़ लोगों ने यहां तक कह दिया कि मर्द व औरत के दरमियान बदकारी में क्या हर्ज है? अगर एक मर्द और एक औरत इस काम पर राज़ी हैं तो इस काम में अक्ली ख़राबी क्या है? और अक्ली एतिबार से हम कैसे कह सकते हैं कि यह बुरा काम है? और अगर रज़ामन्दी के साथ मर्द व औरत ने यह काम कर लिया तो तीसरे आदमी को क्या इख़्तियार है कि उसके अन्दर रुकावट डाले? देखिये! इसी अक्ल के बल बूते पर बद से बदतर बुराई को जायज़ और सही क़रार दिया गया, इसलिये कि जब

अक़्ल को उसके काम के दायरे से आगे बढ़ाया तो यह अक़्ल अपना जवाब ग़लत देने लगी। इसलिये कि जब इन्सान अक़्ल को उस जगह पर इस्तेमाल करेगा जहां पर अल्लाह तआला की "वही" आ चुकी है तो वहां पर अक़्ल ग़लत जवाब देने लगेगी, और ग़लत रास्ते पर ले जायेगी।

कम्यूनिज़म की बुनियाद अक़्ल पर थी

देखिये रूस के अन्दर चौहत्तर साल तक इस अक़्ल की बुनियाद पर कम्यूनिज़म और सोशलिज़म का बाज़ार गर्म रहा, और पूरी दुनिया में बराबरी और ग़रीबों की हमदर्दी के नाम पर शोर मचाया गया, कम्यूनिज़म का पूरी दुनिया में डंका बजता रहा, और यह कह दिया कि जल्द ही सारी दुनिया पर उसकी हुकूमत क़ायम हो जायेगी, और यह सब कुछ अक़्ल की बुनियाद पर था। अगर उस वक़्त कोई उठ कर उसके ख़िलाफ़ आवाज़ निकालता कि यह नज़रिया ग़लत है, तो उसको सरमाये दारों का ऐजेंट कहा जाता, जागीर दारों का ऐजेंट कहा जाता, उसको पुरानी लकीर का फ़क़ीर कहा जाता था। लेकिन आज चौहत्तर साल के बाद सारी दुनिया उसका तमाशा देख रही है, लेनन जिसकी पूजा की जा रही थी, उसके बुत ख़ुद उसके मानने वाले गिरा कर तोड़ रहे हैं। जो नज़रिया "वही-ए-इलाही" से आज़ाद होकर सिर्फ़ अक़्ल की बुनियाद पर क़ायम किया जाता है, उसका यही अन्जाम होता है।

"वही-ए-इलाही" के आगे सर झुका लो

इसलिये अल्लाह तआला फ़रमा रहे हैं कि अगर ज़िन्दगी ठीक ठाक गुज़ारनी है, तो इसका रास्ता सिर्फ़ यह है कि जहां अल्लाह का और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हुक्म आ जाये और "वही-ए-इलाही" का पैग़ाम आ जाए वहां इन्सान अपने आपको उसके ताबे बना ले, उसके आगे झुक जाये, और उसके ख़िलाफ़ अक़्ल के घोड़े न दौड़ाये। चाहे बज़ाहिर वह अक़्ल के

खिलाफ और अपनी ख्वाहिशों और मस्लिहत के खिलाफ नजर आता हो। बस अल्लाह तआ़ला का हुक्म आ जाने के बाद अपना सर उसके आगे झुका दे। यह है इस्लाम में दाख़िल होने का मतलब। इसलिये जो आयत मैंने तिलावत की, उसके पहले जुम्ले का मतलब यह हुआ कि ऐ ईमान वालो! इस्लाम में दाख़िल हो जाओ, यानी अपने आपको अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हुक्म के मुकम्मल ताबे कर दो।

पूरे दाख़िल होने का मतलब

इस आयत के दूसरे जुम्ले में इर्शाद फ़रमाया कि "पूरे के पूरे दाख़िल हो जाओ" यानी यह न हो कि ईमान और अ़क़ीदे और इबादतों की हद तक तो इस्लाम में दाख़िल हो गये, कि कलिमा–ए–तय्यिबा पढ़ लिया, नमाज़ पढ़ ली, रोज़ा रख लिया, ज़कात दे दी, हज कर लिया, इबादतें अन्जाम दे दीं, और जब मस्जिद में पहुंचे तो मुसलमान, लेकिन जब बाज़ार पहुंचे, जब दफ़्तर पहुंचे, या घर पहुंचे तो वहां मुसलमान नहीं। हालांकि अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि "इस्लाम" महज़ इबादतों का नाम नहीं, कि सिर्फ़ इबादतें अन्जाम दे दीं तो मुसलमान हो गया, बल्कि अपनी पूरी ज़िन्दगी को अल्लाह के हुक्म के ताबे बनाने का नाम "इस्लाम" है। इसलिये मुसलमान वह है जो बाज़ार में भी मुसलमान हो, दफ़्तर में भी मुसलमान हो, घर में बीवी बच्चों के साथ भी मुसलमान हो, दोस्त व अहबाब के साथ भी मुसलमान हो।

इस्लाम के पांच हिस्से

इस "दीने इस्लाम" के अल्लाह तआ़ला ने पांच हिस्से बनाये हैं, इन पांच हिस्सों पर दीन मुश्तमिल है:

१. **अक़ायदः** यानी अ़क़ीदा दुरुस्त होना चाहिए।

२. **इबादातः** यानी नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात की पाबन्दी होनी चाहिये।

३. **मामलातः** यानी ख़रीद व बेच के मामलात और बेच व ख़रीद के मामलात अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ हों, ना जायज़ और हराम तरीक़े से पैसे न कमाये।

४. **समाजी ज़िन्दगीः** यानी आपसी मेल जोल और एक दूसरे के साथ उठने बैठने और ज़िन्दगी गुज़ारने और रहन सहन के तरीक़े में अल्लाह तआला ने जो अहकाम दिये हैं, उन अहकाम को इन्सान पूरा करे।

५. **अख़्लाक़ः** यानी उसके अन्दरूनी अख़्लाक़, जज़्बात और ख़्यालात दुरुस्त हों। आज हम मस्जिद में मुसलमान हैं, लेकिन जब बाज़ार पहुंचे तो लोगों को धोखा दे रहे हैं, अमानत में ख़ियानत कर रहे हैं, दूसरों को तक्लीफ़ पहुंचा रहे हैं, उनका दिल दुखा रहे हैं। यह तो इस्लाम में पूरा दाख़िल होना न हुआ, इसलिये कि इस्लाम का एक चौथाई हिस्सा इबादतें हैं और तीन चौथाई हिस्सा बन्दों के हुक़ूक़ से मुताल्लिक़ है। इसलिये जब तक इन्सान बन्दों के हुक़ूक़ का लिहाज़ नहीं रखेगा, पूरा इस्लाम में दाख़िल नहीं होगा।

एक सबक़ लेने वाला वाक़िआ

एक मर्तबा हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु सफ़र पर थे, रास्ते का जो खाना साथ था वह ख़त्म हो गया, आपने देखा कि जंगल में बकरियों का रेवड़ चर रहा है, और अरब वालों के अन्दर यह रिवाज थ कि मुसाफ़िरों को रास्ते में मेहमान नवाज़ी के तौर पर मुफ़्त दूध पेश कर दिया करते थे। चुनांचे आप चरवाहे के पास गए और उस से जाकर फ़रमाया कि मैं मुसाफ़िर हूं, और खाने पीने का सामान ख़त्म हो गया है, तुम एक बकरी का दूध निकाल कर मुझे दे दो, ताकि मैं पी लूं। चरवाहे ने कहा कि आप मुसाफ़िर हैं, मैं आपको दूध ज़रूर दे देता। लेकिन मुश्किल यह है कि ये बकरियां मेरी नहीं हैं, इनका मालिक दूसरा शख़्स है, और इनके चराने की ख़िदमत मेरे सुपुर्द है। इसलिये ये बकरियां मेरे पास अमानत हैं, और इनका दूध

भी अमानत है। इसलिये शरई एतिबार से मेरे लिए इनका दूध आपको देना जायज़ नहीं है।

उसके बाद हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने उसका इम्तिहान लेना चाहा, और उस से फ़रमाया कि देखो भाई! मैं तुम्हें एक फ़ायदे की बात बताता हूं, जिसमें तुम्हारा भी फ़ायदा है और मेरा भी फ़ायदा है। वह यह कि तुम ऐसा करो कि इनमें से एक बकरी मुझे बेच दो, और उसकी कीमत मुझ से ले लो। इसमें तुम्हारा फ़ायदा यह है कि तुम्हें पैसे मिल जायेंगे, और मेरा फ़ायदा यह होगा कि मुझे बकरी मिल जायेगी। रास्ते में उसका दूध इस्तेमाल करता रहूंगा। रहा मालिक! तो मालिक से कह देना कि एक बकरी भेड़िया खा गया। और उसको तुम्हारी बात पर यक़ीन भी आ जायेगा, क्योंकि जंगल में भेड़िए बकरियां खाते रहते हैं। इस तरह हम दोनों का काम बन जायेगा। जब चरवाहे ने यह तदबीर सुनी तो फ़ौरन उसने जवाब में कहा: "या हाजा! फ़–ऐनल्लाह?" ऐ भाई! अगर मैं यह काम कर लूंगा तो अल्लाह तआला कहां गया? यानी यह काम मैं यहां कर तो लूंगा, और मालिक को भी जवाब दे दूंगा, वह भी शायद मुत्मइन हो जायेगा, लेकिन मालिक का भी एक और मालिक है, उसके पास जाकर क्या जवाब दूंगा? इसलिये मैं यह काम करने के लिए तैयार नहीं। ज़ाहिर है कि हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु उसका इम्तिहान लेना चाहते थे। जब उस चरवाहे का जवाब सुना तो आपने फ़रमाया कि जब तक तुझ जैसे इन्सान इस रूए ज़मीन पर मौजूद हैं, उस वक़्त तक कोई ज़ालिम दूसरे शख़्स पर ज़ुल्म करने पर आमादा नहीं होगा। इसलिये कि जब तक दिल में अल्लाह का ख़ौफ़, आख़िरत की फ़िक्र और अल्लाह के सामने खड़े होने का एहसास मौजूद रहेगा, उस वक़्त तक जराइम और मज़ालिम चल नहीं सकेंगे।

यह है इस्लाम में पूरा का पूरा दाख़िल होना। जंगल की तन्हाई में भी उसको यह फ़िक्र है कि मेरा कोई काम अल्लाह की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ न हो।

यह दीन का लाज़मी हिस्सा है जिसके बग़ैर मुसलमान मुसलमान नहीं हो सकता। हदीस में नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

لا ایمان لمن لا امانۃ لہ

यानी जिसके दिल में अमानत नहीं उसका ईमान नहीं।

एक चरवाहे का अ़जीब वाक़िआ़

ग़ज़वा–ए–ख़ैबर के मौक़े पर एक चरवाहा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में आया, वह यहूदियों की बकरियां चराया करता था, उस चरवाहे ने देखा कि ख़ैबर से बाहर मुसलमानों का लश्कर पड़ाव डाले हुए है। उसके दिल में ख़्याल आया कि मैं जाकर उनसे मुलाक़ात करूं और देखूं कि ये मुसलमान क्या कहते हैं और क्या करते हैं? चुनांचे वह बकरियां चराता हुआ मुसलमानों के लश्कर में पहुंचा और उनसे पूछा कि तुम्हारे सरदार कहां हैं? सहाबा–ए–किराम ने उसको बताया कि हमारे सरदार मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उस ख़ेमे के अन्दर हैं। पहले तो उस चरवाहे को यक़ीन नहीं आया, उसने सोचा कि इतने बड़े सरदार एक मामूली ख़ेमे में कैसे बैठ सकते हैं। उसके ज़ेहन में यह था कि जब आप इतने बड़े बादशाह हैं तो बहुत ही शान व शौकत और ठाट बाट के साथ रहते होंगे, लेकिन वहां तो खजूर के पत्तों की चटाई से बना हुआ ख़ेमा था। ख़ैर वह उस ख़ेमे के अन्दर आप से मुलाक़ात के लिए दाख़िल हुआ और आप से मुलाक़ात की, और पूछा कि आप क्या पैग़ाम लेकर आए हैं? और किस बात की दावत देते हैं? हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसके सामने इस्लाम और ईमान की दावत रखी और इस्लाम का पैग़ाम दिया। उसने पूछा कि अगर मैं इस्लाम की दावत क़ुबूल कर लूं तो मेरा क्या अन्जाम होगा? और क्या रुतबा होगा? हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

"इस्लाम लाने के बाद तुम हमारे भाई बन जाओगे, और हम तुम्हें गले से लगायेंगे"।

उस चरवाहे ने कहा कि आप मुझ से मज़ाक़ करते हैं, मैं कहां और आप कहां! मैं एक मामूली चरवाहा हूं और मैं सियाह फ़ाम (हब्शी) इन्सान हूं, मेरे बदन से बदबू आ रही है। ऐसी हालत में आप मुझे कैसे गले लगायेंगे? हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

"हम तुम्हें ज़रूर गले लगायेंगे, और तुम्हारे जिस्म की सियाही को अल्लाह तआला रोशनी और चमक से बदल देंगे, और अल्लाह तआला तुम्हारे जिस्म से उठने वाली बदबू को ख़ुशबू से तब्दील कर देंगे"।

यह सुन कर वह फ़ौरन मुसलमान हो गया और कलिमा-ए-शहादत:

"اشهدان لا اله الا الله واشهد ان محمدًا رسول الله"

"अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु व अश्हदु अन्-न मुहम्मदर्रसूलुल्लाहि"

पढ़ लिया, फिर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से पूछा कि या रसूलल्लाह! अब मैं क्या करूं? आपने फ़रमाया कि:

"तुम ऐसे वक़्त इस्लाम लाए हो कि न तो इस वक़्त किसी नमाज़ का वक़्त कि तुम से नमाज़ पढ़वाऊं, और न ही रोज़े का ज़माना है कि तुम से रोज़े रखवाऊं, ज़कात तुम पर फ़र्ज़ नहीं है, इस वक़्त तो सिर्फ़ एक ही इबादत हो रही है जो तलवार की छाओं में अन्जाम दी जाती है, वह है अल्लाह के रास्ते में जिहाद"।

उस चरवाहे ने कहा कि या रसूलल्लाह! मैं इस जिहाद में शामिल हो जाता हूं लेकिन जो शख़्स जिहाद में शामिल होता है उसके लिए दो में से एक सूरत होती है, या ग़ाज़ी या शहीद। तो अगर मैं इस जिहाद में शहीद हो जाऊं तो आप मेरी कोई ज़मानत लीजिए, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

"मैं इस बात की ज़मानत लेता हूं कि अगर तुम इस जिहाद में शहीद हो गये तो अल्लाह तआ़ला तुम्हें जन्नत में पहुंचा देंगे, और तुम्हारे जिस्म की बदबू को खुशबू से बदल देंगे, और तुम्हारे चेहरे की सियाही (काले पन) को सफ़ेदी में तब्दील फ़रमा देंगे"।

बकरियां वापस करके आओ

चूंकि वह चरवाहा यहूदियों की बकरियां चराता हुआ वहां पहुंचा था, इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

"तुम यहूदियों की जो बकरियां लेकर आए हो, इनको जाकर वापस कर दो, इसलिये कि ये बकरियां तुम्हारे पास अमानत हैं"।

इस से अन्दाज़ा लगायें कि जिन लोगों के साथ जंग हो रही है, जिनका घेराव किया हुआ है, उनका माल माले ग़नीमत है, लेकिन चूंकि वह चरवाहा बकरियां मुआ़हदे पर लेकर आया था, इसलिये आपने हुक्म दिया कि पहले वे बकरियां वापस करके आओ, फिर आकर जिहाद में शामिल होना। चुनांचे उस चरवाहे ने जाकर बकरियां वापस कीं और वापस आकर जिहाद में शामिल हुआ और शहीद हो गया। इसका नाम है "इस्लाम"।

हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु

हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु मश्हूर सहाबी हैं, और हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के राज़दार हैं। जब यह और इनके वालिद साहिब यमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु मुसलमान हुए तो मुसलमान होने के बाद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में मदीना तैयबा आ रहे थे रास्ते में उनकी मुलाक़ात अबू जहल और उसके लश्कर से हो गयी, उस वक़्त अबू जहल अपने लश्कर के साथ हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से लड़ने जा रहा था। जब हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की मुलाक़ात अबू जहल से हुई तो उसने पकड़ लिया और पूछा कि कहां

जा रहे हो? उन्हों ने कहा कि हम हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में मदीना तैयाबा जा रहे हैं, अबू जहल ने कहा कि फिर तो हम तुम्हें नहीं छोड़ेंगे, इसलिये कि तुम मदीना जाकर हमारे ख़िलाफ़ जंग में हिस्सा लोगे, उन्हों ने कहा कि हमारा मक़्सद तो सिर्फ़ हुज़ूर की मुलाक़ात और ज़ियारत है। हम जंग में हिस्सा नहीं लेंगे। अबू जहल ने कहा कि अच्छा हम से वायदा करो कि वहां जाकर सिर्फ़ मुलाक़ात करोगे, लेकिन जंग में हिस्सा नहीं लोगे, उन्हों ने वायदा कर लिया, चुनांचे अबू जहल ने आपको छोड़ दिया। आप जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में पहुंचे, उस वक़्त हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपने सहाबा–ए–किराम के साथ ग़ज़वा–ए–बदर के लिये मदीना मुनव्वरा से रवाना हो चुके थे, और रास्ते में मुलाक़ात हो गयी।

हक़ व बातिल की पहली लड़ाई "ग़ज़वा-ए-बदर"

अब अन्दाज़ा लगाइये कि इस्लाम का पहला हक़ व बातिल का मुक़ाबला (ग़ज़वा–ए–बदर) हो रहा है, और यह मुक़ाबला वह है जिसको क़ुरआने करीम ने "यौमुल फ़ुरक़ान" फ़रमाया, यानी हक़ व बातिल के दरमियान फ़ैसला कर देने वाला मुक़ाबला, वह मुक़ाबला हो रहा है जिसमें जो शख़्स शामिल हो गया, वह "बदरी" कहलाया, और सहाबा–ए–किराम में "बदरी" सहाबा का बहुत ऊंचा मक़ाम है। और "असमा–ए–बदरिय्यीन" बतौर वज़ीफ़े के पढ़े जाते हैं। उनके नाम पढ़ने से अल्लाह तआला दुआयें क़ुबूल फ़रमाते हैं। वे "बदरिय्यीन" जिनके बारे में नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह पेशीन गोई फ़रमा दी कि अल्लाह तआला ने सारे अहले बदर, जिन्हों ने बदर में हिस्सा लिया, की बख़्शिश फ़रमा दी है। ऐसा मुक़ाबला होने वाला है।

गर्दन पर तलवार रख कर लिया जाने वाला वायदा

बहर हाल! जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से

मुलाक़ात हुई तो हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अन्हु ने सारा क़िस्सा सुना दिया कि इस तरह रास्ते में हमें अबू जहल ने पकड़ लिया था। और हमने यह वायदा करके मुश्किल से जान छुड़ाई कि हम लड़ाई में हिस्सा नहीं लेंगे, और फिर दरख़्वास्त की कि या रसूलल्लाह! यह बदर का मुक़ाबला होने वाला है, आप इसमें तशरीफ़ लेजा रहे हैं। हमारी बड़ी ख़्वाहिश है कि हम भी इसमें शरीक हो जायें, और जहां तक उस वादे का ताल्लुक़ है, वह तो उन्हों ने हमारी गर्दन पर तलवार रख कर हमसे यह वायदा लिया था कि हम जंग में हिस्सा नहीं लेंगे, और अगर हम वायदा न करते तो वे हमें न छोड़ते, इसलिये हमने वायदा कर लिया, लेकिन आप हमें इजाज़त दें कि हम इस जंग में हिस्सा ले लें, और फ़ज़ीलत और सआदत हमें हासिल हो जाये। (अल इसाबा)

तुम वायदा करके ज़बान देकर आये हो

लेकिन सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जवाब में फ़रमाया कि नहीं, तुम वायदा करके आये हो, और ज़बान देकर आये हो, और इसी शर्त पर तुम्हें रिहा किया गया है कि तुम वहां जाकर मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की ज़ियारत करोगे, लेकिन उनके साथ जंग में हिस्सा नहीं लोगे, इसलिये मैं तुमको जंग में हिस्सा लेने की इजाज़त नहीं देता।

ये वे मौक़े हैं जहां इन्सान का इम्तिहान होता है कि वह अपनी ज़बान और अपने वादे का कितना पास करता है। अगर हम जैसा आदमी होता तो हज़ार तावीलें कर लेता, जैसे यह तावील कर लेता कि उनके साथ जो वायदा किया था वह सच्चे दिल से नहीं किया था, वह हमसे ज़बरदस्ती लिया गया था। और ख़ुदा जाने क्या क्या तावीलें हमारे ज़ेहनों में आ जातीं। या यह तावील कर लेता कि यह हालते उज़्र है इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ जिहाद में शामिल होना है और कुफ़्र का मुक़ाबला करना है।

जब्कि वहां एक एक आदमी की बड़ी कीमत है। इसलिये कि मुसलमानों के लश्कर में सिर्फ़ 313 निहत्ते अफ़राद थे। जिनके पास सिर्फ़ 70 ऊंट, 2 घोड़े और आठ तलवारें हैं। बाकी अफ़राद में से किसी ने लाठी उठा ली है, किसी ने डन्डे और किसी ने पत्थर उठा लिये हैं। यह लश्कर एक हज़ार हथियार बन्द सूरमाओं का मुकाबला करने के लिये जा रहा है, इसलिये एक एक आदमी की जान कीमती है, लेकिन मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो बात कह दी गयी है, और जो वायदा कर लिया गया है, उस वादे की ख़िलाफ़ वर्ज़ी नहीं होगी। इसका नाम है "इस्लाम"।

जिहाद का मक़सद हक़ की सर बुलन्दी

यह जिहाद कोई मुल्क हासिल करने के लिये नहीं हो रहा है, कोई हुकूमत हासिल करने के लिये नहीं हो रहा है। बल्कि यह जिहाद हक़ की सर बुलन्दी के लिये हो रहा है। और हक़ को पामाल करके जिहाद किया जाये? गुनाह का जुर्म करके अल्लाह तआ़ला के दीन का काम किया जाये? यह नहीं हो कसता। आज हम लोगों की ये सारी कोशिशें बेकार जा रही हैं, और सारी कोशिशें बे असर हो रही हैं। इसकी वजह यह है कि हम यह चाहते हैं कि गुनाह करके इस्लाम की तब्लीग़ करें, गुनाह करके इस्लाम को नाफ़िज़ करें, हमारे दिल व दिमाग़ पर हर वक़्त हज़ारों तावीलें मुसल्लत रहती हैं। चुनांचे कहा जाता है कि इस वक़्त मसलिहत का यह तकाज़ा है, चलो शरीअ़त के इस हुक्म को नज़र अन्दाज़ कर दो, और यह कहा जाता है कि इस वक़्त मसलिहत इस काम के करने में है, चलो यह काम कर लो।

यह है वादे का पूरा करना

लेकिन वहां तो एक ही मक़्सूद था। यानी अल्लाह तआ़ला की रिज़ा हासिल होना, न माल मक़्सूद है, न फ़तह मक़्सूद है, न बहादुर कहलाना मक़्सूद है, बल्कि मक़्सूद यह है कि अल्लाह तआ़ला राज़ी

हो जाये, और अल्लाह तआला की रिज़ा इसमें है कि जो वायदा कर लिया गया है उसको निभाओ, चुनांचे हज़रत हुज़ैफ़ा और उनके वालिद हज़रत यमान रज़ियल्लाहु अन्हुमा दोनों को ग़ज़्वा-ए-बदर जैसी फ़ज़ीलत से महरूम रखा गया, इसलिये कि ये दोनों जंग में शिर्कत न करने पर ज़बान देकर आये थे, यह है "इस्लाम" जिसके बारे में फ़रमाया कि इस इस्लाम में पूरे के पूरे दाख़िल हो जाओ।

हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु

अगर आज इसकी मिसाल तलाश करें तो इस दुनिया में ऐसी मिसालें कहां मिलेंगी? हां! मुहम्मद रसूलुल्लाह के ग़ुलामों में ऐसी मिसालें मिल जायेंगी। उन्हों ने ये मिसालें क़ायम कीं। हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु उन सहाबा-ए-किराम में से हैं जिनके बारे में लोगों ने मालूम नहीं क्या क्या ग़लत प्रोपैगन्डे किये हैं। अल्लाह तआला बचाये, आमीन। लोग उनकी शान में गुस्ताख़ियां करते हैं, उनका एक क़िस्सा सुन लीजिये।

फ़तह हासिल करने के लिये जंगी तदबीर

हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु चूंकि शाम में थे इसलिये रूम की हुकूमत से उनकी हर वक़्त जंग रहती थी, उनके साथ मुक़ाबला रहता था। और रूम उस वक़्त की सुपर पॉवर समझी जाती थी, और बड़ी अज़ीमुश्शान आलमी ताक़त थी। एक मर्तबा हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु ने उनके साथ जंग बन्दी का मुआहदा कर लिया, और एक तारीख़ मुताय्यन कर ली कि इस तारीख़ तक हम एक दूसरे से जंग नहीं करेंगे, अभी जंग बन्दी के मुआहदे की मुद्दत ख़त्म नहीं हुई थी। उस वक़्त हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु के दिल में ख़्याल आया कि जंग बन्दी की मुद्दत तो दुरुस्त है लेकिन इस मुद्दत के अन्दर अपनी फ़ौजें रूमियों की सर्हद (सीमा) पर लेजा कर डाल दूं ताकि जिस वक़्त जंग बन्दी की मुद्दत ख़त्म हो, उस वक़्त मैं फ़ौरन हमला कर दूं, इसलिये कि दुश्मन के ज़ेहन में यह होगा कि

जब जंग बन्दी की मुद्दत ख़त्म होगी फिर कहीं जाकर लश्कर रवाना होगा, और यहां आने में वक़्त लगेगा। इसलिये मुआहदा ख़त्म होते ही फ़ौरन मुसलमानों का लश्कर हमला आवर नहीं होगा, इसलिये वे हमले के लिये तैयार नहीं होंगे। इसलिये अगर मैं अपना लश्कर सर्हद पर डाल दूं और मुद्दत ख़त्म होते ही फ़ौरन हमला कर दूं तो जल्दी फ़तह हासिल हो जायेगी।

यह मुआहदे की ख़िलाफ़ वर्ज़ी है

चुनांचे हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु ने अपनी फ़ौजें सर्हद पर डाल दीं, और फ़ौज का कुछ हिस्सा सर्हद के अन्दर उनके इलाक़े में डाल दिया, और हमले के लिये तैयार हो गये, और जैसे ही जंग बन्दी के मुआहदे की आख़री तारीख़ का सूरज ग़ुरूब हुआ फ़ौरन हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु ने लश्कर को आगे बढ़ने का हुक्म दिया, चुनांचे जब लश्कर ने आगे बढ़ना शुरू किया तो यह चाल बड़ी कामयाब साबित हुई, इसलिये कि वे लोग इस हमले के लिये तैयार नहीं थे। और हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु का लश्कर शहर के शहर, बस्तियां की बस्तियां फ़तह करता हुआ चला जा रहा था, अब फ़तह के नशे के अन्दर पूरा लश्कर आगे बढ़ता जा रहा था, कि अचानक देखा कि अब पीछे से एक घोड़े सवार दौड़ता चला आ रहा है, उसको देख कर हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु उसके इन्तिज़ार में रुक गये कि शायद यह अमीरुल मोमिनीन का कोई नया पैग़ाम लेकर आया हो, जब वह घोड़ा क़रीब आया तो उसने आवाज़ें देना शुरू कर दीं:

"الله اکبر، الله اکبر، قفوا عبادالله قفوا عباد الله"

अल्लाह के बन्दो! ठहर जाओ, अल्लाह के बन्दो! ठहर जाओ, जब वह और क़रीब आया तो हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु ने देखा कि वह हज़रत अमर बिन अब्सा रज़ियल्लाहु अन्हु हैं, हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु ने पूछा कि क्या बात है? उन्हों ने

फ़रमाया कि:

"وفاء لا غدر وفاء لا غدر"

मोमिन का शेवा वफ़ादारी है, ग़द्दारी नहीं, अ़हद तोड़ना नहीं है। हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि मैंने तो कोई अ़हद नहीं तोड़ा है। मैंने तो उस वक़्त हमला किया है जब जंग बन्दी की मुद्दत ख़त्म हो गयी थी। हज़रत अ़मर बिन अ़ब्सा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अगरचे जंग बन्दी की मुद्दत ख़त्म हो गयी थी लेकिन आप ने अपनी फ़ौजें जंग बन्दी की मुद्दत के दौरान ही सर्हद पर डाल दीं और फ़ौज का कुछ हिस्सा सर्हद से अन्दर भी दाख़िल कर दिया था। और यह जंग बन्दी के मुआ़हदे की ख़िलाफ़ वर्ज़ी थी, और मैंने अपने इन कानों से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह फ़रमाते हुए सुना है कि:

"من كان بينه وبين قوم عهد فلا يحلنه ولا يشدنه الى ان يمضى اجل له او ينبذ اليهم على سواء" (ترمذی شریف)

यानी जब तुम्हारा किसी कौम के साथ मुआ़हदा हो, तो उस वक़्त तक अ़हद न खोले, और न बांधे, यहां तक कि उसकी मुद्दत गुज़र जाये। या उनके सामने पहले खुल्लम खुल्ला यह ऐलान कर दे कि हमने वह अ़हद ख़त्म कर दिया। इसलिये मुद्दत गुज़रने से पहले या अ़हद के ख़त्म करने का ऐलान किये बग़ैर उनके इलाक़े के पास लेजा कर फ़ौजों को डाल देना हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इस इरशाद के मुताबिक़ आपके लिये जायज़ नहीं था।

सारा फ़तह किया हुआ इलाक़ा वापस कर दिया

अब आप अन्दाज़ा लगाइये कि एक फ़ातेह लश्कर है, जो दुश्मन का इलाक़ा फ़तह करता हुआ जा रहा है, और बहुत बड़ा इलाक़ा फ़तह कर चुका है, और फ़तह के नशे में चूर है, लेकिन जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह इरशाद कान में पड़ा कि अपने अ़हद की पाबन्दी मुसलमान के ज़िम्मे लाज़िम है, उसी

वक़्त हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु ने हुक्म दिया कि जितना इलाक़ा फ़तह किया है वह सब वापस कर दो, चुनांचे पूरा इलाक़ा वापस कर दिया, और अपनी सर्हद में दोबारा वापस आ गये। पूरी दुनिया की तारीख़ में कोई क़ौम इसकी नज़ीर पेश नहीं कर सकती कि उसने सिर्फ़ अहद तोड़ने की बिना पर अपना फ़तह किया हुआ इलाक़ा इस तरह वापस कर दिया हो, लेकिन यहां पर चूंकि कोई ज़मीन का हिस्सा पेशे नज़र नहीं था, कोई सत्ता और सलतनत मक़्सूद नहीं थी, बल्कि मक़्सूद अल्लाह तआला को राज़ी करना था। इसलिये जब अल्लाह तआला का हुक्म मालूम हो गया कि वायदा ख़िलाफ़ी दुरुस्त नहीं है, और चूंकि यहां वादे की ख़िलाफ़ वर्ज़ी का थोड़ा सा शुबह पैदा हो रहा था इसलिये वापस लौट गये। यह है "इस्लाम" जिसके बारे में हुक्म दिया गया कि "उदख़ुलू फ़िस्सिल्मि काफ़्फ़–तन" यानी पूरे के पूरे इस्लाम में दाख़िल हो जाओ।

हज़रत फ़ारूक़े आज़म और मुआहदा

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने जब बैतुल मक़दिस फ़तह किया तो उस वक़्त वहां पर जो ईसाई और यहूदी थे, उनसे यह मुआहदा हुआ कि हम तुम्हारी हिफ़ाज़त करेंगे, तुम्हारे जान व माल की हिफ़ाज़त करेंगे, और उसके मुआवज़े में तुम हमें जिज़्या अदा करोगे। "जिज़्या" एक टैक्स होता है जो ग़ैर मुस्लिमों से वुसूल किया जाता है, चुनांचे जब मुआहदा हो गया तो वे लोग हर साल जिज़्या अदा करते थे। एक मर्तबा ऐसा हुआ कि मुसलमानों की दूसरे दुश्मनों के साथ लड़ाई पेश आ गयी, जिसके नतीजे में वह फ़ौज जो बैतुल मक़दिस में मुताय्यन थी, उनकी ज़रूरत पेश आयी। किसी ने यह मश्विरा दिया कि अगर फ़ौज की कमी है तो बैतुल मक़दिस में फ़ौजें बहुत ज़्यादा हैं इसलिये वहां से उनको महाज़ पर भेज दिया जाये। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि यह मश्विरा और तजवीज़ तो बहुत अच्छी है, और फ़ौजें वहां से

उठा कर महाज़ पर भेज दो, लेकिन इसके साथ एक काम और भी करो, वह यह कि बैतुल मक़दिस के जितने ईसाई और यहूदी हैं उन सब को एक जगह जमा करो और उनसे कहो कि हमने आपकी जान व माल की हिफ़ाज़त का ज़िम्मा लिया था, और यह मुआहदा किया था कि हम आपकी जान व माल की हिफ़ाज़त करेंगे, और इस काम के लिये हमने वहां फ़ौज डाली थी। लेकिन अब हमें दूसरी जगह फ़ौज की ज़रूरत पेश आ गयी है, इसलिये हम आपकी हिफ़ाज़त नहीं कर सकते, इसलिये इस साल आपने हमें जो जिज़या बतौर टैक्स अदा किया है वह हम आपको वापस कर रहे हैं, और इसके बाद हम अपनी फ़ौजों को यहां से ले जायेंगे। और अब आप अपनी हिफ़ाज़त का इन्तिज़ाम ख़ुद करें।

यह है "इस्लाम" यह नहीं कि सिर्फ़ नमाज़ पढ़ ली और रोज़ा रख लिया और बस मुसलमान हो गये, बल्कि जब तक अपना पूरा वजूद, अपनी ज़बान, अपनी आंख, अपने कान, अपनी ज़िन्दगी का तर्ज़े अमल पूरा का पूरा अल्लाह की मर्ज़ी के मुताबिक़ नहीं होगा उस वक़्त तक कामिल मुसलमान नहीं होंगे।

दूसरों को तक्लीफ़ पहुंचाना इस्लाम के ख़िलाफ़ है

जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह फ़रमा दिया कि मुसलमान वह है जिसके हाथ और ज़बान से दूसरे मुसलमान महफ़ूज़ रहें, और दूसरे मुसलमान को तक्लीफ़ पहुंचाना गुनाहे कबीरा और हराम है, और यह ऐसा ही बड़ा गुनाह है जैसे शराब पीना बड़ा गुनाह है। जैसे बदकारी करना गुनाह है। जैसे सुअर खाना गुनाह है। और तक्लीफ़ पहुंचाने के जितने रास्ते हैं वे सब गुनाहे कबीरा हैं। मुसलमान का फ़र्ज़ यह है कि अपनी ज़ात से किसी दूसरे को तक्लीफ़ न पहुंचाये। जैसे आप गाड़ी लेकर जा रहे हैं, और किसी जगह जाकर गाड़ी खड़ी करने की ज़रूरत पेश आयी तो आपने ऐसी जगह गाड़ी खड़ी कर दी जो जगह दूसरे लोगों के

गुजरने की जगह थी, आपके गाडी खडी करने की वजह से दूसरे लोगों को गुज़रना मुश्किल हो गया। अब आप तो यह समझ रहे हैं कि हमने ज़्यादा से ज़्यादा ट्रैफ़िक के क़ानून की ख़िलाफ़ वर्ज़ी की है, आप उसको दीन की ख़िलाफ़ वर्ज़ी और गुनाह नहीं समझते, हालांकि यह सिर्फ़ बद अख़्लाक़ी की बात नहीं, बल्कि बड़ा गुनाह है। यह ऐसा ही गुनाह है जैसे शराब पीना गुनाह है। इसलिये कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमा दिया कि मुसलमान वह है जिसके हाथ और ज़बान से यानी उसके पूरे वजूद से दूसरे इन्सान महफ़ूज़ रहें, उनको तक्लीफ़ न पहुंचे। आपने अपनी गाड़ी ग़लत जगह पार्क करके दूसरों को तक्लीफ़ पहुंचाई। आज हमने दीन इस्लाम को इबादत की हद तक और नमाज़ रोज़े की हद तक और मस्जिद की हद तक, और वज़ाइफ़ व तस्बीहात की हद तक महदूद कर लिया है, और बन्दों के जो हुक़ूक़ अल्लाह तआला ने मुक़र्रर फ़रमाये हैं उनको हमने दीन से बिल्कुल ख़ारिज कर दिया।

हक़ीक़ी मुफ़्लिस कौन?

हदीस शरीफ़ में है कि एक बारा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम से पूछा कि बताओ मुफ़्लिस कौन है? सहाबा-ए-किराम ने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह सल्ल! हम लोग तो उस शख़्स को मुफ़्लिस समझते हैं जिसके पास रुपया पैसा न हो। आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हक़ीक़ी मुफ़्लिस वह नहीं है जिसके पास रुपया पैसा न हो, बल्कि हक़ीक़ी मुफ़्लिस वह है जो क़ियामत के दिन अल्लाह तआला के सामने जब हाज़िर होगा तो इस तरह हाज़िर होगा कि उसके आमाल नामे में बहुत सारे रोज़े होंगे, बहुत सी नमाज़ें और वज़ीफ़े होंगे, तस्बीहात और नवाफ़िल का ढेर होगा। लेकिन दूसरी तरफ़ किसी का माल खाया होगा, किसी को धोखा दिया होगा, किसी का दिल दुखाया होगा, किसी को तक्लीफ़ पहुंचाई होगी, और इस तरह उसने बहुत से इन्सानों के हुक़ूक़ ग़सब किये होंगे। अब हक़ वाले अल्लाह तआला

से फ़रियाद करेंगे कि या अल्लाह! इस शख़्स ने हमारा हक़ ग़सब किया था, इस से हमारा हक़ दिलवाइये। अब वहां पर रुपये पैसे तो चलेंगे नहीं कि उनको देकर हिसाब किताब बराबर कर लिया जाये, वहां की क़रंसी तो नेकियां हैं। चुनांचे हक़ वालों को उसकी नेकियां देनी शुरू की जायेंगी। किसी को नमाज़ दे दी जायेगी, किसी को रोज़े दे दिये जायेंगे। इस तरह एक एक हक़ वाला उसकी नेकियां लेकर चलते जायेंगे, यहां तक कि उसकी सारी नेकियां ख़त्म हो जायेंगी और यह शख़्स ख़ाली हाथ रह जायेगा। नमाज़ रोज़े के जितने ढेर लाया था, वे सब ख़त्म हो जायेंगे, लेकिन हक़ वाले अब भी बाक़ी रह जायेंगे। तो अब अल्लाह तआ़ला हुक्म फ़रमायेंगे कि अब हक़ दिलवाने का तरीक़ा यह है कि हक़ वाले के आमाल नामे में जो गुनाह हैं वे इस शख़्स के नामा-ए-आमाल में डाल दिये जायें। चुनांचे वह शख़्स नेकियों का अंबार लेकर आया था, लेकिन बाद में नेकियां तो सारी ख़त्म हो जायेंगी, और दूसरे लोगों के गुनाहों के अंबार लेकर वापस जायेगा। यह शख़्स हक़ीक़ी मुफ़्लिस है।

आज हम पूरे इस्लाम में दाख़िल नहीं

इस से अन्दाज़ा लगाइये कि बन्दों के हुक़ूक़ का मामला कितना संगीन है, लेकिन हम लोगों ने इसको दीन से ख़ारिज कर दिया है। क़ुरआने करीम तो कह रहा है कि ऐ ईमान वालो! इस्लाम में दाख़िल हो जाओ, आधे नहीं बल्कि पूरे के पूरे दाख़िल हो जाओ। तुम्हारा वजूद, तुम्हारी ज़िन्दगी, तुम्हारी इबादत, तुम्हारे मामलात, तुम्हारी समाजी ज़िन्दगी, तुम्हारे अख़्लाक़, हर चीज़ इस्लाम के अन्दर दाख़िल होनी चाहिये, इसके ज़रिये तुम सही मायने में मुसलमान बन सकते हो। यही वह चीज़ थी जिसके ज़रिये हक़ीक़त में इस्लाम फैला है। इस्लाम सिर्फ़ तब्लीग़ से नहीं फैला, बल्कि इन्सानों की सीरत और किर्दार से फैला है। मुसलमान जहां भी गये उन्होंने अपनी सीरत और किर्दार का लोहा मनवाया, उस से इस्लाम की तरफ़ रग़बत और कशिश पैदा हुई। और आज हमारी सीरत और किर्दार देख कर लोग

इस्लाम से नफ़रत कर रहे हैं।

पूरे दाख़िल होने का अ़हद और इरादा करें

आज हम लोग दीन की बातें सुनने के लिये इस महफ़िल में जमा हुए हैं, इस से कुछ फ़ायदा उठायें, और वह फ़ायदा यह है कि हम यह इरादा और अ़हद करें कि अपनी ज़िन्दगी में इस्लाम को दाख़िल करेंगे, ज़िन्दगी के हर शोबे में इस्लाम को दाख़िल करेंगे, इबादतें भी, मामलात भी, समाजी ज़िन्दगी और रहन सहन भी, अख़्लाक़ भी, हर चीज़ इस्लाम के मुताबिक़ बनाने की कोशिश करेंगे।

दीन की मालूमात हासिल करें

एक गुज़ारिश आप हज़रात से यह करता हूं कि चौबीस घन्टों में से कुछ वक़्त दीन की मालूमात हासिल करने के लिये निकालें, मोतबर किताबें छपी हुई हैं, उनको अपने घरों के अन्दर पढ़ने का मामूल बनायें, जिसके ज़रिये दीनी तालीमात की जानकारी हो। आज मुसीबत यह है कि हम लोग दीन की तालीमात से वाक़िफ़ नहीं। अगर हम यह फ़ायदा हासिल कर सकें और इसके ज़रिये हमारे दिलों में दीन पर चलने का जज़्बा पैदा हो जाये तो इन्शा अल्लाह यह मज्लिस मुफ़ीद होगी, वर्ना कहने सुनने की मज्लिसें तो बहुत होती रहती हैं। अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से मुझे भी और आप सब को भी इन बातों पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

आप ज़कात किस तरह अदा करें?

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ۔

"وَالَّذِيْنَ يَكْنِزُوْنَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَايُنْفِقُوْنَهَافِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ، يَوْمَ يُحْمٰى عَلَيْهَا فِيْ نَارِجَهَنَّمَ فَتُكْوٰى بِهَاجِبَاهُهُمْ وَجُنُوْبُهُمْ وَظُهُوْرُهُمْ هٰذَا مَاكَنَزْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ فَذُوْقُوْا مَاكُنْتُمْ تَكْنِزُوْنَ۔ (التوبة:٣٤-٣٥)

اٰمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظيم وصدق رسوله النبى الكريم، ونحن علىٰ ذالك من الشاهدين والشاكرين والحمد للّٰه رب العالمين۔

तम्हीद

बुज़ुर्गाने मुहतरम और बिरादराने अज़ीज़! आजका यह इज्तिमा इस्लाम के एक अहम रुक्न यानी ज़कात के मौज़ू पर आयोजित किया गया है, और रमज़ान के मुबारक महीने से चन्द रोज़ पहले यह इसलिये रखा गया है कि आम तौर पर लोग रमज़ान मुबारक के महीने में ज़कात निकालते हैं। इसलिये इस इज्तिमा का मक़सद यह है कि ज़कात की अहमियत, उसके फ़ज़ाइल और उसके ज़रूरी अहकाम इस इज्तिमा के ज़रिये हमारे इल्म में आ जायें, ताकि उसके मुताबिक़ ज़कात निकालने का एहतिमाम करें।

ज़कात न निकालने पर वईद

इस मक़सद के लिये मैंने कुरआने करीम की दो आयतें आप हज़रात के सामने तिलावत की हैं, उन मुबारक आयतों में अल्लाह तआ़ला ने उन लोगों पर बड़ी सख़्त वईद बयान फ़रमाई है जो अपने माल की पूरे तौर पर ज़कात नहीं निकालते। उनके लिये बड़े सख़्त अ़ज़ाब की ख़बर दी है। चुनांचे फ़रमाया कि जो लोग अपने पास सोना चांदी जमा करते हैं और उसको अल्लाह के रास्ते में ख़र्च नहीं करते तो (ऐ नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) आप उनको एक दर्दनाक अ़ज़ाब की ख़बर दे दीजिये। यानी जो लोग अपना पैसा, अपना रुपया, अपना सोना चांदी जमा करते जा रहे हैं और उनको अल्लाह के रास्ते में ख़र्च नहीं करते, उन पर अल्लाह तआ़ला ने जो फ़रीज़ा आयद किया है उसको अदा नहीं करते, उनको यह ख़ुशख़बरी सुना दीजिये कि एक दर्दनाक अ़ज़ाब उनका इन्तिज़ार कर रहा है। फिर दूसरी आयत में उस दर्दनाक अ़ज़ाब की तफ़सील बयान फ़रमाई कि यह दर्दनाक अ़ज़ाब उस दिन होगा जिस दिन उस सोने चांदी को आग में तपाया जायेगा और फिर उस आदमी की पेशानी, उसके पहलू और उसकी पीठ को दाग़ा जायेगा और उसको यह कहा जायेगा कि:

هٰذَا مَا كَنَزْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ فَذُوْقُوْا مَاكُنْتُمْ تَكْنِزُوْنَ. (التوبة:٣٥)

यह है वह ख़ज़ाना जो तुमने अपने लिये जमा किया था, आज तुम ख़ज़ाने का मज़ा चखो जो तुम अपने लिये जमा कर रहे थे। अल्लाह तआ़ला हर मुसलमान को इस अन्जाम से बचाए, आमीन।

यह उन लोगों का अन्जाम बयान फ़रमाया जो रुपया पैसा जमा कर रहे हैं लेकिन उस पर अल्लाह तआ़ला ने जो फ़राइज़ आयद किये हैं उनको ठीक ठीक बजा नहीं लाते। सिर्फ़ इन आयतों में नहीं बल्कि दूसरी आयतों में भी वईदें बयान फ़रमाई गयी हैं। चुनांचे सूरः "हु—मज़ा" में फ़रमाया:

"وَيْلٌ لِّكُلِّ هُمَزَةٍ لُّمَزَةٍ، الَّذِىْ جَمَعَ مَالًا وَّعَدَّدَهٗ، يَحْسَبُ اَنَّ مَالَهٗٓ اَخْلَدَهٗ، كَلَّا لَيُنْبَذَنَّ فِى الْحُطَمَةِ، وَمَآ اَدْرٰكَ مَا الْحُطَمَةُ، نَارُ اللّٰهِ الْمُوْقَدَةُ، الَّتِىْ تَطَّلِعُ عَلَى الْاَفْـِٕدَةِ" (سورة همزة:١تا٧)

यानी उस शख़्स के लिये दर्दनाक अ़ज़ाब है जो ऐब निकालने वाला है, और ताना देने वाला है, जो माल जमा कर रहा है, और गिन गिन कर रख रहा है, (हर दिन गिनता है कि आज मेरे माल में कितना इज़ाफ़ा हो गया है, और उसकी गिन्ती करके ख़ुश हो रहा है) और यह समझता है कि यह माल मुझे हमेशा की ज़िन्दगी अ़ता कर देगा, हरगिज़ नहीं। (याद रखो! यह माल जिसको वह गिन गिन कर रख रहा है और उस पर जो वाजिबात हैं उनको अदा नहीं कर रहा है, उसकी वजह से) उसको रौंदने वाली आग में फेंक दिया जायेगा। तुम्हें क्या पता कि "हु–त–मा" क्या चीज़ होती है? (यह हु–त–मा जिसमें उसको डाला जायेगा) यह ऐसी आग है जो अल्लाह तआ़ला की सुलगाई हुई है। (यह किसी इन्सान की सुलगाई हुई आग नहीं है जो पानी से बुझ जाये या मिट्टी से बुझ जाये या जिस चीज़ को आग बुझाने वाली मशीन बुझा दे, बल्कि यह अल्लाह की सुलगाई हुई आग है) जो इन्सान के दिल व जिगर तक झांकती होगी। (यानी इन्सान के दिल व जिगर तक पहुंच जायेगी) इतीन सख़्त वईद अल्लाह तआ़ला ने बयान फ़रमाई है। अल्लाह तआ़ला हर मुसलमान को उस से महफ़ूज़ रखे, आमीन।

यह माल कहां से आ रहा है

ज़कात अदा न करने पर ऐसी सख़्त वईद (सज़ा की धमकी) क्यों बयान फ़रमाई? इसकी वजह यह है कि जो कुछ माल तुम इस दुनिया में हासिल करते हो, चाहे तिजारत के ज़रिये हासिल करते हो, चाहे नौकरी के ज़रिये हासिल करते हो, चाहे खेती बाड़ी के ज़रिये हासिल करते हो, या किसी और ज़रिये से हासिल करते हो, ज़रा ग़ौर करो कि वह माल कहां से आ रहा है? क्या तुम्हारे अन्दर ताक़त

थी कि तुम अपने बाज़ू से वह माल जमा कर सकते? यह तो अल्लाह तआला का बनाया हुआ हकीमाना निज़ाम है, वह अपने इस निज़ाम के ज़रिये तुम्हें रिज़्क़ पहुंचा रहा है।

ग्राहक कौन भेज रहा है?

तुम यह समझते हो कि मैंने माल जमा कर लिया और दुकान खोल कर बैठ गया, और उस माल को फ़रोख़्त कर दिया तो उसके नतीजे में मुझे पैसा मिल गया, यह न देखा कि जब दुकान खोल कर बैठ गये तो तुम्हारे पास ग्राहक किसने भेजा? अगर तुम दुकान खोल कर बैठे होते और कोई ग्राहक न आता तो उस वक़्त कोई बिक्री होती? कोई आमदनी होती? यह कौन है जो तुम्हारे पास ग्राहक भेज रहा है? अल्लाह तआला ने निज़ाम ही ऐसा बनाया है कि एक दूसरे की हाजतें, एक दूसरे की ज़रूरतें, एक दूसरे के ज़रिये पूरी की जाती हैं। एक शख़्स के दिल में डाल दिया कि तुम जाकर दुकान खोल कर बैठो, और दूसरे के दिल में यह डाल दिया कि उस दुकान वाले से ख़रीदो।

एक सबक़ लेने वाला वाक़िआ

मेरे एक बड़े भाई थे जनाब मुहम्मद ज़की कैफ़ी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि, अल्लाह तआला उनके दर्जों को बुलन्द करे, आमीन। लाहौर में उनकी दीनी किताबों की एक दुकान "इदारा-ए-इस्लामियात" के नाम से थी, अब भी वह दुकान मौजूद है। वह एक बार कहने लगे कि तिजारत में अल्लाह तआला अपनी रहमत और क़ुदरत के अजीब करिश्मे दिखलाता है, एक दिन मैं सुबह बेदार हुआ तो पूरे शहर में मूसलाधार बारिश हो रही थी और बाज़ारों में कई कई इंच पानी खड़ा था, मेरे दिल में ख़्याल आया कि आज बारिश का दिन है, लोग घर से निकलते हुए डर रहे हैं, सड़कों पर पानी खड़ा है, ऐसे हालात में कौन किताब ख़रीदने आयेगा, और किताब भी कोई दुनियावी या कोर्स और निसाब की नहीं बल्कि दीनी किताब, जिसके बारे में हमारा

हाल यह है कि जब दुनिया की सारी ज़रूरतें पूरी हो जायें तब जाकर यह ख़्याल आता है कि चलो कोई दीनी किताब ख़रीद कर पढ़ लें। उन किताबों से न तो भूख मिटती है, न प्यास बुझती है, न उस से कोई दुनिया की ज़रूरत पूरी होती है, और आजकल के हिसाब से दीनी किताब एक फ़ालतू मद है। ख़्याल यह होता है कि फ़ालतू वक़्त मिलेगा तो दीनी किताब पढ़ लेंगे। तो ऐसी मूसलाधार बारिश में कौन दीनी किताब ख़रीदने आयेगा, इसलिये आज दुकान पर न जाऊं और छुट्टी कर लेता हूं।

लेकिन चूंकि बुज़ुर्गों के सोहबत पाए हुए थे, हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि की सोहबत उठाई थी। फ़रमाने लगे कि उसके साथ साथ मेरे दिल में दूसरा ख़्याल यह आया कि ठीक है कोई शख़्स किताब ख़रीदने आये या न आये लेकिन अल्लाह तआला ने मेरे लिये रिज़्क़ का यह ज़रिया मुकर्रर फ़रमाया है। अब मेरा काम यह है कि मैं जाऊं, जाकर दुकान खोल कर बैठ जाऊं, ग्राहक भेजना मेरा काम नहीं, किसी और का काम है, इसलिये मुझे अपने काम में कोताही न करनी चाहिये, बारिश हो रही हो या सैलाब आ रहा हो, मुझे अपनी दुकान खोलनी चाहिये। चुनांचे यह सोच कर मैंने छतरी उठाई और पानी से गुज़रता हुआ चला गया और बाज़ार जाकर दुकान खोल कर बैठ गया और यह सोचा कि आज कोई ग्राहक तो आयेगा नहीं, चलो बैठ कर तिलावत कर लें। चुनांचे अभी मैं कुरआन शरीफ़ खोल कर तिलावत करने बैठा ही था कि क्या देखता हूं कि लोग बरसातियां डाल कर और छतरियां तान कर किताबें ख़रीदने आ रहे हैं, मैं हैरान था कि इन लोगों को ऐसी कौन सी ज़रूरत पेश आ गयी है कि इस तूफ़ानी बारिश में और बहते हुए सैलाब में मेरे पास आकर ऐसी किताबें ख़रीद रहे हैं, जिनकी फ़ौरी ज़रूरत नहीं। लेकिन लोग आये और जितनी बिक्री रोज़ाना होती थी उस दिन भी उतनी बिक्री हुई। उस वक़्त दिल में यह बात आई कि यह ग्राहक ख़ुद नहीं आ रहे हैं, हक़ीक़त में कोई

और भेज रहा है, और यह इसलिये भेज रहा है कि उसने मेरे लिये रिज़्क़ का सामान उन ग्राहकों को बनाया है।

कामों की तक़सीम अल्लाह तआला की तरफ़ से है

बहर हाल, यह हक़ीक़त में अल्लाह तआला का बनाया हुआ निज़ाम है, जो तुम्हारे पास ग्राहक भेज रहा है। जो ग्राहक के दिल में डाल रहा है कि तुम उस दुकान से जाकर सामान ख़रीदो। क्या किसी शख़्स ने यह कॉन्फ्रेंस बुलाई थी और उस कॉन्फ्रेंस में यह तय हुआ था कि इतने लोग कपड़ा बेचेंगे, इतने लोग जूते बेचेंगे, इतने लोग चावल बेचेंगे, इतने लोग बरतन बेचेंगे, और इस तरह लोगों की ज़रूरियात पूरी की जायेंगी। दुनिया में ऐसी कोई कॉन्फ्रेंस आज तक नहीं हुई, बल्कि अल्लाह तआला ने किसी के दिल में यह डाला कि तुम जूते बेचो, किसी के दिल में यह डाला कि तुम रोटी बेचो, किसी के दिल में यह डाला कि तुम गोश्त बेचो। इसका नतीजा यह है कि दुनिया की कोई ज़रूरत ऐसी नहीं जो बाज़ार में न मिलती हो। दूसरी तरफ़ ख़रीदारों के दिल में यह डाला कि तुम जाकर उनसे ज़रूरत की चीज़ें ख़रीदो और उनके लिये रिज़्क़ का सामान मुहैया करो। यह अल्लाह तआला का बनाया हुआ निज़ाम है कि वह तमाम इन्सानों को इस तरह से रिज़्क़ अता कर रहा है।

ज़मीन से उगाने वाला कौन है?

चाहे वह तिजारत हो या नौकरी हो, देने वाला हक़ीक़त में अल्लाह तआला ही है, खेती बाड़ी को देखिये! खेती बाड़ी में आदमी का काम यह है कि ज़मीन को नर्म करके उसमें बीज डाल दे और उसमें पानी दे दे, लेकिन उस बीज को कोंपल बनाना, वह बीज जो बिल्कुल बे हक़ीक़त है जो गिन्ती में भी न आये, जो बेवज़न है लेकिन इतनी सख़्त ज़मीन का पेट फाड़ कर निकलता है और कोंपल बन जाता है, फिर वह कोंपल भी ऐसी नर्म और नाज़ुक होती है कि अगर बच्चा भी उसको उंगली से मसल दे तो वह ख़त्म हो जाये,

लेकिन वही कोंपल सारे मौसमों की सख़्तियां बर्दाश्त करती है, गर्म और सर्द और तेज़ हवाओं को सहती है, फिर कोंपल से पौधा बनता है, फिर उस पौधे से फूल निकलते हैं, फूल से फल बनते हैं और इस तरह वह सारी दुनिया के इन्सानों तक पहुंच जाता है। कौन ज़ात है जो यह काम कर रही है? अल्लाह जल्ल शानुहू ही ये सारे काम करने वाले हैं।

इन्सान में पैदा करने की सलाहियत नहीं

इसलिये आमदनी का कोई भी ज़रिया हो, चाहे वह तिजारत हो या खेती बाड़ी हो या नौकरी हो, हक़ीक़त में तो इन्सान एक सीमित काम करने के लिये दुनिया में भेजा गया है, बस इन्सान वह महदूद और सीमित काम कर देता है, लेकिन उस सीमित काम के अन्दर किसी चीज़ को पैदा करने की सलाहियत नहीं है। यह तो अल्लाह तआला हैं जो ज़रूरत की चीज़ें पैदा करते हैं और तुम्हें अता करते हैं। इसलिये जो कुछ भी तुम्हारे पास है वह सब उसी की अता है:

"لِلّٰہِ مَا فِی السَّمٰوٰتِ وَمَا فِی الْاَرْضِ" (البقرة:٢٨٤)

"ज़मीन व आसमान में जो कुछ है वह उसी की मिल्कियत है"।

मालिके हक़ीक़ी अल्लाह तआला हैं

और अल्लाह तआला ने वह चीज़ तुम्हें अता करके यह भी कह दिया है कि चलो तुम ही उसके मालिक हो। चुनांचे सूरः यासीन में अल्लाह तआला ने इर्शाद फ़रमाया है:

"اَوَلَمْ یَرَوْا اَنَّا خَلَقْنَا لَهُمْ مِمَّا عَمِلَتْ اَیْدِیْنَا اَنْعَامًا فَهُمْ لَهَا مٰلِکُوْنَ" (سورة يٰس:٧١)

क्या वे नहीं देखते कि हमने बना दिये उनके वास्ते अपने हाथों की बनाई हुई चीज़ों से चौपाए, फिर वे उनके मालिक हैं। हक़ीक़ी मालिक तो हम थे, हमने तुम्हें मालिक बनाया। तो हक़ीक़त में वह माल जो तुम्हारे पास आया है उसमें सब से बड़ा हक़ तो हमारा है, जब हमारा हक़ है तो फिर उसमें से अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ ख़र्च करो, अगर उसके हुक्म के मुताबिक़ ख़र्च करोगे तो बाक़ी

जितना माल तुम्हारे पास है वह तुम्हारे लिये हलाल और पाक है। वह माल अल्लाह का फ़ज़्ल है, अल्लाह की नेमत है। वह माल बर्कत वाला है। और अगर तुमने उस माल में से वह चीज़ न निकाली जो अल्लाह तआ़ला ने तुम पर फ़र्ज़ की है तो फिर यह सारा माल तुम्हारे लिए आग के अंगारे हैं, और क़ियामत के दिन इन अंगारों को देख लोगे, जब इन अंगारों से तुम्हारे जिस्मों को दाग़ा जायेगा और तुम से यह कहा जायेगा कि यह है वह ख़ज़ाना जिसको तुम जमा किया करते थे।

सिर्फ़ ढाई फ़ीसद अदा करो

अगर अल्लाह तआ़ला यह फ़रमाते कि यह माल हमारी अ़ता की हुई चीज़ है, इसलिये इसमें से ढाई फ़ीसद तुम रखो और साढ़े सत्तानवे फ़ीसद अल्लाह की राह में ख़र्च कर दो, तो भी इन्साफ़ के ख़िलाफ़ नहीं था, क्योंकि यह सारा माल उसी का दिया हुआ है, और उसी की मिल्कियत है। लेकिन उसने अपने बन्दों पर फ़ज़्ल फ़रमाया और यह फ़रमाया कि मैं जानता हूं कि तुम कमज़ोर हो और तुम्हें इस माल की ज़रूरत है। मैं जानता हूं कि तुम्हारी तबीयत इस माल की तरफ़ राग़िब है, इसलिये चलो इस माल में से साढ़े सत्तानवे फ़ीसद तुम्हारा, सिर्फ़ ढाई फ़ीसद का मुतालबा है। जब यह ढाई फ़ीसद अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करोगे तो बाक़ी साढ़े सत्तानवे फ़ीसद तुम्हारे लिये हलाल और पाक है और बर्कत वाला है। अल्लाह तआ़ला ने इतना मामूली मुतालबा करके सारा माल हमारे हवाले कर दिया कि उसको जिस तरह चाहो अपनी जायज़ ज़रूरतों में ख़र्च करो।

ज़कात की ताकीद

यह ढाई फ़ीसद ज़कात है, यह वह ज़कात है जिसके बारे में क़ुरआने करीम में बार बार इर्शाद फ़रमाया:

"واقيموا الصلاة واتوا الزكوة"

नमाज़ कायम करो और ज़कात अदा करो।

जहां नमाज़ का ज़िक्र फ़रमाया है वहां साथ में ज़कात का भी ज़िक्र है, इस ज़कात की इतनी ताकीद आई है, जब इस ज़कात की इतनी ताकीद है और दूसरी तरफ़ अल्लाह जल्ल शानुहू ने इतना बड़ा एहसान फ़रमाया है कि हमें माल अ़ता किया और उसका मालिक बनाया और फिर सिर्फ़ ढाई फ़ीसद का मुतालबा किया, तो मुसलमान कम से कम इतना कर ले कि वह ढाई फ़ीसद ठीक ठीक अल्लाह के मुतालबे के मुताबिक़ अदा कर दे, तो उस पर कोई आसमान नहीं टूट जायेगा, कोई क़ियामत नहीं टूट पड़ेगी।

ज़कात हिसाब करके निकालो

बहुत से लोग तो वे हैं जो ज़कात से बिल्कुल बे परवाह हैं, अल्लाह अपनी पनाह में रखे। वे तो ज़कात निकालते ही नहीं हैं, उनकी सोच तो यह है कि यह ढाई फ़ीसद क्यों दें? बस जो माल आ रहा है वह आये। दूसरी तरफ़ बाज़ लोग वे हैं जिनको ज़कात का कुछ न कुछ एहसास है और ज़कात निकालते भी हैं, लेकिन ज़कात निकालने का जो सही तरीक़ा है वह तरीक़ा इख़्तियार नहीं करते। जब ढाई फ़ीसद ज़कात फ़र्ज़ हो गयी तो अब इसका तक़ाज़ा यह है कि ठीक ठीक हिसाब लगाकर ज़कात निकाली जाये। बाज़ लोग यह सोचते हैं कि कौन हिसाब किताब करे, कौन सारे स्टॉक को चेक करे, इसलिये बस एक अन्दाज़ा करके ज़कात निकाल देते हैं, अब उस अन्दाज़े में ग़लती भी हो सकती है और ज़कात निकालने में कमी भी हो सकती है। अगर ज़कात ज़्यादा निकाल दी जाये तो इन्शा अल्लाह पकड़ नहीं होगी, लेकिन अगर एक रुपया भी कम हो जाये यानी जितनी ज़कात वाजिब हुई है उस से एक रुपया कम ज़कात निकाली, तो याद रखिये! वह एक रुपया जो आपने हराम तरीक़े से अपने पास रोक लिया है, वह एक रुपया तुम्हारे सारे माल को बर्बाद करने के लिये काफ़ी है।

वह माल तबाही का सबब है

एक हदीस में नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि जब माल में ज़कात की रक़म शामिल हो जाये यानी पूरी ज़कात नहीं निकाली बल्कि कुछ ज़कात निकाली और कुछ बाक़ी रह गयी तो वह माल इन्सान के लिये तबाही और हलाकत का सबब है। इस वजह से इस बात का एहतिमाम करें कि एक एक पाई का सही हिसाब करके ज़कात निकाली जाये। इसके बग़ैर ज़कात का फ़रीज़ा पूरी तरह अदा नहीं होता। अल्हम्दु लिल्लाह मुसलमानों की एक बहुत बड़ी तायदाद वह है जो ज़कात ज़रूर निकालती है लेकिन इस बात का एहतिमाम नहीं करती कि ठीक ठीक हिसाब करके ज़कात निकाले, इस वजह से ज़कात की रक़म उनके माल में शामिल रहती है, और उसके नतीजे में हलाकत और बर्बादी का सबब बन जाती है।

ज़कात के दुनियावी फ़ायदे

वैसे ज़कात इस नियत से निकालनी चाहिये कि यह अल्लाह तआला का हुक्म है, उसकी रिज़ा का तक़ाज़ा है, और एक इबादत है। इस ज़कात निकालने से हमें कोई फ़ायदा हासिल हो या न हो, अल्लाह तआला के हुक्म की इताअत बजाते ख़ुद मक़सूद है। असल मक़सद तो ज़कात का यह है, लेकिन अल्लाह तआला का करम है कि जब कोई बन्दा ज़कात निकालता है तो अल्लाह तआला उसको फ़ायदे भी अता फ़रमाते हैं। वह फ़ायदा यह है कि उसके माल में बर्कत होती है। चुनांचे क़ुरआने करीम में अल्लाह तआला ने इर्शाद फ़रमाया:

"يمحق الله الربوا ويربى الصدقات" (البقرة:٢٧٦)

यानी अल्लाह तआला सूद को मिटाते हैं और ज़कात और सदक़ात को बढ़ाते हैं।

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने

इर्शाद फ़रमाया कि जब कोई बन्दा ज़कात निकालता है तो अल्लाह तआला के फ़रिश्ते उसके हक़ में यह दुआ फ़रमाते हैं कि:

"اللّٰهم اعط منفقا خلفا واعط ممسكا تلفا" (بخاری شریف)

ऐ अल्लाह! जो शख़्स अल्लाह तआला के रास्ते में ख़र्च कर रहा है उसको और ज़्यादा अता फ़रमाइये, और ऐ अल्लाह जो शख़्स अपने माल को रोक कर रख रहा है और ज़कात अदा नहीं कर रहा है तो ऐ अल्लाह उसके माल पर हलाकत डालिये। इसलिये फ़रमायाः

"مانقصت صدقة من مال"

"कोई सदक़ा किसी माल में कमी नहीं करता"

चुनांचे कभी कभी यह होता है कि इधर एक मुसलमान ने ज़कात निकाली, दूसरी तरफ़ अल्लाह तआला ने उसकी आमदनी के दूसरे ज़रा (सूत्र) पैदा कर दिये, और उसके ज़रिये उस ज़कात से ज़्यादा पैसा उसके पास आ गया। कभी कभी यह होता है कि ज़कात निकालने से अगरचे गिन्ती के एतिबार से पैसे कम हो जाते हैं लेकिन बक़िया माल में अल्लाह तआला की तरफ़ से ऐसी बर्कत होती है कि उसके नतीजे में थोड़े माल से ज़्यादा फ़ायदे हासिल हो जाते हैं।

माल में बेबर्कती का अन्जाम

आजकी दुनिया गिन्ती की दुनिया है। बर्कत का मतलब लोगों की समझ में नहीं आता। बर्कत इस चीज़ को कहते हैं कि थोड़ी सी चीज़ में ज़्यादा फ़ायदा हासिल हो जाये। जैसे आज आपने पैसे तो बहुत कमाये लेकिन जब घर पहुंचे तो पता चला कि बच्चा बीमार है, उसको लेकर डॉ. के पास गये और एक ही तिब्बी मुआयने में वे सारे पैसे ख़त्म हो गये। इसका मतलब यह हुआ कि जो पैसे कमाये थे उनमें बर्कत न हुई। या जैसे आप पैसे कमा कर घर जा रहे थे कि रास्ते में डाकू मिल गया और उसने पिस्तौल दिखा कर सारे पैसे छीन लिये, इसका मतलब यह है कि पैसे तो हासिल हुए लेकिन उनमें बर्कत नहीं हुई। या जैसे आपने पैसा कमाकर खाना खाया और

उस खाने के नतीजे में आपको बद हज़्मी हो गयी, इसका मतलब यह है कि उस माल में बर्कत न हुई। ये सब बेबर्कती की निशानियां हैं। बर्कत यह है कि आपने पैसे तो कम कमाये, लेकिन अल्लाह तआला ने उन थोड़े पैसों में ज़्यादा काम बना दिये, और तुम्हारे बहुत से काम निकल गये, इसका नाम है बर्कत। यह बर्कत अल्लाह तआला उसको अ़ता फ़रमाते हैं जो अल्लाह तआला के अह्काम पर अ़मल करता है। इसलिये हम अपने माल की ज़कात निकालें और इस तरह निकालें जिस तरह अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हमें बताया है, और उसको हिसाब व किताब के साथ निकालें, सिर्फ़ अन्दाज़े से न निकालें।

ज़कात का निसाब

इसकी थोड़ी सी तफ़सील यह है कि अल्लाह तआला ने ज़कात का एक निसाब मुक़र्रर किया है, कि इस निसाब से कम अगर कोई शख़्स मालिक है तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं। अगर उस निसाब का मालिक होगा तो ज़कात फ़र्ज़ होगी। वह निसाब यह है: साढ़े बावन तोले चांदी या उसकी क़ीमत का नक़द रुपया, या ज़ेवर, या तिजारत का सामान वग़ैरह। जिस शख़्स के पास यह माल इतनी मिक़्दार (मात्रा) में मौजूद हो तो उसको "साहिबे निसाब" कहा जाता है।

हर हर रुपये पर साल का गुज़रना ज़रूरी नहीं

फिर उस निसाब पर एक साल गुज़रना चाहिये। यानी एक साल तक अगर कोई शख़्स साहिबे निसाब रहे तो उस पर ज़कात वाजिब होती है। इस बारे में आम तौर पर यह ग़लत फ़ह्मी पाई जाती है, लोग यह समझते हैं कि हर हर रुपये पर मुस्तक़िल पूरा साल गुज़रे, तब उस पर ज़कात वाजिब होती है। यह बात दुरुस्त नहीं। बल्कि जब एक बार साल के शुरू में एक शख़्स साहिबे निसाब बन जाये, जैसे फ़र्ज़ करें कि पहले रोज़े को अगर कोई शख़्स साहिबे निसाब

बन गया फिर आइन्दा साल जब पहला रमज़ान आया तो उस वक़्त भी वह साहिबे निसाब है, तो ऐसे शख़्स को साहिबे निसाब समझा जायेगा। दरमियान साल में जो रक़म आती जाती रही उसका कोई एतिबार नहीं। बस एक रमज़ान को देख लो कि तुम्हारे पास कितनी रक़म मौजूद है, उस रक़म पर ज़कात निकाली जायेगी, चाहे उसमें से कुछ रक़म सिर्फ़ एक दिन पहले ही क्यों न आयी हो।

ज़कात की तारीख़ में जो रक़म हो उस पर ज़कात है

जैसे फ़र्ज़ करें कि एक शख़्स के पास रमज़ान की पहली तारीख़ को एक लाख रुपया था, अगले साल रमज़ान की पहली तारीख़ से दो दिन पहले पचास हज़ार रुपये उसके पास और आ गये, और उसके नजीते में रमज़ान की पहली तारीख़ को उसके पास डेढ़ लाख रुपये हो गये, अब उस डेढ़ लाख रुपये पर ज़कात फ़र्ज़ होगी। यह नहीं कहा जायेगा कि उसमें पचास हज़ार रुपये तो सिर्फ़ दो दिन पहले आये हैं, और उस पर एक साल नहीं गुज़रा, इसलिये उस पर ज़कात न होना चाहिये, यह दुरुस्त नहीं, बल्कि ज़कात निकालने की जो तारीख़ है और जिस तारीख़ को आप साहिबे निसाब बने हैं उस तारीख़ में जितना माल आपके पास मौजूद है उस पर ज़कात वाजिब है, चाहे यह रक़म पिछले साल रमज़ान की पहली तारीख़ की रक़म से ज़्यादा हो या कम हो, जैसे अगर पिछले साल एक लाख रुपये थे, अब डेढ़ लाख हैं, तो डेढ़ लाख पर ज़कात अदा करो, और अगर इस साल पचास हज़ार रह गये तो अब पचास हज़ार पर ज़कात अदा करो। दरमियान साल में जो रक़म ख़र्च हो गयी, उसका कोई हिसाब किताब नहीं, और उस ख़र्च शुदा रक़म पर ज़कात निकालने की ज़रूरत नहीं। अल्लाह तआला ने हिसाब किताब की उल्झन से बचाने के लिये यह आसान तरीक़ा मुक़र्रर फ़रमाया है कि दरमियान साल में जो कुछ तुमने खाया पिया और वह रक़म तुम्हारे पास से चली गयी तो उसका कोई हिसाब किताब करने की ज़रूरत नहीं। इसी तरह दरमियान साल में जो रक़म आ गयी उसका अलग से

हिसाब रखने की ज़रूरत नहीं, कि वह किस तारीख़ में आयी और कब उस पर साल पूरा होगा? बल्कि ज़कात निकालने की तारीख़ में जो रक़म तुम्हारे पास है, उस पर ज़कात अदा करो। साल गुज़रने का मतलब यह है।

ज़कात के माल कौन कौन से हैं?

यह भी अल्लाह तआ़ला का हम पर फ़ज़्ल है कि उसने हर हर चीज़ पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं फ़रमाई, वर्ना माल की तो बहुत सी क़िस्में हैं। जिन चीज़ों पर ज़कात फ़र्ज़ है वे ये हैं:

(१) नक़द रुपया, चाहे वह किसी भी शक्ल में हो, चाहे वे नोट हों या सिक्के हों।

(२) सोना चांदी, चाहे वह ज़ेवर की शक्ल में हों, या सिक्के की शक्ल में हों। बाज़ लोगों के ज़ेहनों में यह रहता है कि जो औरतें के इस्तेमाल का ज़ेवर है उस पर ज़कात वाजिब नहीं है, यह बात दुरुस्त नहीं। सही बात यह है कि इस्तेमाली ज़ेवर पर भी ज़कात वाजिब है, लेकिन सिर्फ़ सोने चांदी के ज़ेवर पर ज़कात वाजिब है। लेकिन अगर सोने चांदी के अलावा किसी और धात का ज़ेवर है, चाहे पलाटीनम ही क्यों न हो उस पर ज़कात वाजिब नहीं। इसी तरह हीरे जवाहिरात पर ज़कात वाजिब नहीं, जब तक तिजारत के लिये न हों, बल्कि ज़ाती इस्तेमाल के लिये हों।

ज़कात के माल में अक़्ल न चलाएं

यहां यह बात समझ लेनी चाहिये कि ज़कात एक इबादत है, अल्लाह तआ़ला का आयद किया हुआ फ़रीज़ा है। अब बाज़ लोग ज़कात के अन्दर अपनी अक़्ल दौड़ाते हैं और यह सवाल करते हैं कि उस पर ज़कात क्यों वाजिब है, और फ़लां चीज़ पर ज़कात क्यों वाजिब नहीं? याद रखिये कि यह ज़कात अदा करना इबादत है और इबादत के मायने ही यह हैं कि चाहे वह हमारी समझ में आये या न आये मगर अल्लाह तआ़ला का हुक्म मानना है। जैसे कोई शख़्स कहे

कि सोने चांदी पर ज़कात वाजिब है तो हीरे जवाहिरात पर ज़कात क्यों वाजिब नहीं? और प्लाटीनम पर क्यों ज़कात नहीं? यह सवाल बिल्कुल ऐसा ही है जैसे कोई शख़्स यह कहे कि सफ़र की हालत में ज़ुहर और असर और इशा की नमाज़ में क़सर है और चार रक्अत के बजाए दो रक्अत पढ़ी जाती हैं, तो फिर मग़रिब में कसर क्यों नहीं? या जैसे कोई शख़्स कहे कि एक आदमी हवाई जहाज़ में फ़र्स्ट क्लास के अन्दर सफ़र करता है और उस सफ़र में उसको कोई मशक़्क़त भी नहीं होती मगर उसकी नमाज़ आधी हो जाती है, और मैं कराची में बस के अन्दर बड़ी मशक़्क़त के साथ सफ़र करता हूं, मेरी नमाज़ आधी क्यों नहीं होती। इन सब का एक ही जवाब है, वह यह कि ये तो अल्लाह तआला के बनाये हुए इबादत के अह्काम हैं, इबादतों में इन अह्काम की पाबन्दी करना ज़रूरी है, वर्ना वह काम इबादत नहीं रहेगा।

इबादत करना अल्लाह का हुक्म है

या जैसे कोई शख़्स यह कहे कि इसकी क्या वजह है कि नौ ज़िल्हिज्जा ही को हज होता है? मुझे तो आसानी यह है कि आज जाकर हज कर आऊं और एक दिन के बजाये मैं अरफ़ात तीन दिन क़ियाम करूंगा। अब अगर वह शख़्स एक दिन के बजाए तीन दिन भी वहां बैठा रहेगा, तब भी उसका हज नहीं होगा, क्योंकि अल्लाह तआला ने इबादत का जो तरीक़ा बताया था उसके मुताबिक़ नहीं किया। या जैसे कोई शख़्स यह कहे कि हज के तीन दिनों में जमरात की 'रमी' करने (शैतानों को कंकरी मारने) में बहुत हुजूम होता है, इसलिये मैं चौथे दिन इकट्ठी सारे दिनों की 'रमी' कर लूंगा। यह रमी दुरुस्त नहीं होगी, इसलिये कि यह इबादत है और इबादत के अन्दर यह ज़रूरी है कि जो तरीक़ा बताया गया है और जिस तरह बताया गया है उसके मुताबिक़ वह इबादत अन्जाम दी जायेगी तो वह इबादत दुरुस्त होगी वर्ना दुरुस्त न होगी। इसलिये यह एतिराज़ करना कि सोने और चांदी पर ज़कात क्यों है और हीरे पर

क्यों नहीं? यह इबादत के फ़लसफ़े के ख़िलाफ़ है। बहर हाल! अल्लाह तआला ने सोने चांदी पर ज़कात रखी है, चाहे वह इस्तेमाल का हो, और नक़द रुपये पर ज़कात रखी है।

तिजारत के सामान की क़ीमत मुतअय्यन करने का तरीक़ा

दूसरी चीज़ जिस पर ज़कात फ़र्ज़ है वह है "तिजारत का सामान" जैसे किसी की दुकान में जो सामान बेचने के लिये रखा हुआ है, उस सारे स्टॉक पर ज़कात वाजिब है, लेकिन स्टॉक की क़ीमत लगाते हुए इस बात की गुन्जाइश है कि आदमी ज़कात निकालते वक़्त यह हिसाब लगाये कि अगर मैं पूरा स्टॉक बेचूं तो बाज़ार में इसकी क्या क़ीमत लगेगी। देखिये एक "रिटेल प्राईस" होती है और दूसरी "होल सैल प्राईस" तीसरी सूरत यह है कि पूरा स्टॉक इकट्ठा बेचने की सूरत में क्या क़ीमत लगेगी। इसलिये जब दुकान के अन्दर जो माल है उसकी ज़कात का हिसाब लगाया जा रहा हो तो इसकी गुन्जाइश है कि तीसरी क़िस्म की क़ीमत लगायी जाये, वह क़ीमत निकाल कर फिर उसका ढाई फ़ीसद ज़कात में निकालना होगा, लेकिन एहतियात इसमें है कि आम "होल सैल क़ीमत" से हिसाब लगा कर उस पर ज़कात अदा कर दी जाये।

तिजारत के माल में क्या क्या दाख़िल है?

इसके अलावा तिजारत के माल में हर वह चीज़ शामिल है जिसको आदमी ने बेचने की ग़र्ज़ से ख़रीदा हो। इसलिये अगर किसी शख़्स ने बेचने की ग़र्ज़ से कोई प्लाट ख़रीदा या ज़मीन ख़रीदी या कोई मकान ख़रीदा या गाड़ी ख़रीदी और इस मक़सद से ख़रीदी कि इसको बेच कर नफ़ा कमाऊंगा तो ये सब चीज़ें तिजारत के माल में दाख़िल हैं। इसलिये अगर कोई प्लाट, कोई ज़मीन, कोई मकान ख़रीदते वक़्त शुरू ही में यह नियत थी कि मैं इसको बेचूंगा, तो उसकी मालियत पर ज़कात वाजिब है। बहुत से लोग वे होते हैं जो "सरमायेकारी" की ग़र्ज़ से प्लाट ख़रीद लेते हैं और शुरू ही से यह

नियत होती है कि जब इस पर अच्छे पैसे मिलेंगे तो इसको बेच दूंगा, और बेच कर इस से नफ़ा कमाऊंगा। तो उस प्लाट की मालियत पर भी ज़कात वाजिब है। लेकिन अगर प्लाट इस नियत से ख़रीदा कि अगर मौक़ा हुआ तो इस पर रहने के लिये मकान बना लेंगे, या मौक़ा होगा तो इसको किराये पर चढ़ा देंगे, या कभी मौक़ा होगा तो इसको बेच देंगे, कोई एक वाज़ेह नियत नहीं है, बल्कि वैसे ही ख़रीद कर डाल दिया है, अब उसमें यह भी एहतिमाल है कि आइन्दा किसी वक़्त उसको मकान बनाकर वहां रिहाइश इख़्तियार कर लेंगे, और यह भी एहतिमाल है कि किराये पर चढ़ा देंगे, और यह एहतिमाल भी है कि बेच देंगे तो इस सूरत में उस प्लाट पर ज़कात वाजिब नहीं है। इसलिये कि ज़कात सिर्फ़ उस सूरत में वाजिब होती है कि जब ख़रीदते वक़्त ही उसको दोबारा बेचने की नियत हो, यहां तक कि अगर प्लाट ख़रीदते वक़्त शुरू में यह नियत थी कि इस पर मकान बनाकर रिहाइश इख़्तियार करेंगे, बाद में इरादा बदल गया और यह इरादा कर लिया कि अब इसको बेच कर पैसे हासिल कर लेंगे, तो महज़ नियत और इरादे की तब्दीली से फ़र्क़ नहीं पड़ता, जब तक आप उस प्लाट को हक़ीक़त में बेच नहीं देंगे और उसके पैसे आपके पास नहीं आ जायेंगे उस वक़्त तक उस पर ज़कात वाजिब नहीं होगी।

बहर हाल, हर वह चीज़ जिसे ख़रीदते वक़्त ही उसको बेचने की नियत हो, वह तिजारत का माल है, और उसकी मालियत पर ढाई फ़ीसद के हिसाब से ज़कात वाजिब है।

किस दिन की मालियत मोतबर होगी?

यह बात भी याद रखें कि मालियत उस दिन की मोतबर होगी जिस दिन आप ज़कात का हिसाब कर रहे हैं, जैसे एक प्लाट आपने एक लाख रुपये में ख़रीदा था और आज उस प्लाट की क़ीमत दस लाख हो गयी, अब दस लाख पर ढाई फ़ीसद के हिसाब से ज़कात निकाली जायेगी, एक लाख पर नहीं निकाली जायेगी।

कम्पनियों के शेयरों पर ज़कात का हुक्म

इसी तरह कम्पनियों के "शेयर" भी तिजारत के सामान में दाख़िल हैं। और उनकी दो सूरतें हैं। एक सूरत यह है कि आपने किसी कम्पनी के शेयर्ज़ इस मक़सद के लिये ख़रीदे हैं कि उसके ज़रिये कम्पनी का मुनाफ़ा (Dividend) हासिल करेंगे और उस पर हमें सालाना मुनाफ़ा कम्पनी की तरफ़ से मिलता रहेगा। दूसरी सूरत यह है कि आपने किसी कम्पनी के शेयर्ज़ "कैप्टेलगेन" के लिये ख़रीदे हैं। यानी नियत यह है कि जब बाज़ार में उनकी क़ीमत बढ़ जायेगी तो उनको बेच कर नफ़ा कमायेंगे। अगर यह दूसरी सूरत है यानी शेयर्ज़ ख़रीदते वक़्त शुरू ही में उनको फ़रोख़्त करने की नियत थी तो इस सूरत में पूरे शेयर्ज़ की पूरी बाज़ारी क़ीमत पर ज़कात वाजिब होगी। जैसे आपने पचास रुपये के हिसाब से शेयर्ज़ ख़रीदे, और मक़सद यह था कि जब उनकी क़ीमत बढ़ जायेगी तो उनको बेच कर नफ़ा हासिल करेंगे, उसके बाद जिस दिन आपने ज़कात का हिसाब निकाला, उस दिन शेयरों की क़ीमत साठ रुपये हो गयी, तो अब साठ रुपये के हिसाब से उन शेयरों की मालियत निकाली जायेगी और उस पर ढाई फ़ीसद के हिसाब से ज़कात अदा करनी होगी।

लेकिन अगर पहली सूरत है, यानी आपने कम्पनी के शेयर्ज़ इस नियत से ख़रीदे कि कम्पनी की तरफ़ से उस पर सालाना मुनाफ़ा मिलता रहेगा, और बेचने की नियत नहीं थी, तो उस सूरत में आपके लिये इस बात की गुन्जाइश है कि यह देखें कि जिस कम्पनी के ये शेयर हैं, उस कम्पनी के कितने असासे जामिद (अचल) हैं। जैसे बिल्डिंग, मशीनरी, कारें वग़ैरह, और कितने असासे नक़द, तिजारत के सामान और कच्चे माल की शक्ल में हैं। यह मालूमात कम्पनी ही से हासिल की जा सकती हैं। जैसे फ़र्ज़ करें कि किसी कम्पनी के साठ फ़ीसद असासे बिल्डिंग, मशीनरी और कार वग़ैरह की सूरत में हैं तो

उस सूरत में आप उन शेयरों की बाज़ारी कीमत लगाकर उसकी साठ फ़ीसद कीमत पर ज़कात अदा करें। जैसे शेयरों की बाज़ारी कीमत साठ रुपये थी, और कम्पनी के साठ फ़ीसद असासे ज़कात के क़ाबिल थे, और चालीस फ़ीसद असासे ना क़ाबिले ज़कात थे, तो इस सूरत में आप उन शेयरों की पूरी कीमत यानी साठ रुपये के बजाए छत्तीस रुपये पर ज़कात अदा करें। और अगर किसी कम्पनी के असासों की तफ़सील मालूम न हो सके तो उस सूरत में एहतियातन शेयरों की पूरी बाज़ारी कीमत पर ज़कात अदा कर दी जाये।

शेयरों के अलावा और जितने मसाइल माली सरमाए कारी के हैं चाहे वे बोंड हों या सर्टीफ़िकेट्स हों, ये सब नक़द के हुक्म में हैं, उनकी असल कीमत पर ज़कात वाजिब है।

कारख़ाने की किन चीज़ों पर ज़कात है

अगर कोई शख़्स फ़ैक्ट्री का मालिक है तो उस फ़ैक्ट्री में जो तैयार शुदा माल है, उसकी कीमत पर ज़कात वाजिब है। इसी तरह जो माल तैयारी के मुख़्तलिफ़ मर्हलों में है या कच्चे माल की शक्ल में है उस पर भी ज़कात वाजिब है। लेकिन फ़ैक्ट्री की मशीनरी, बिल्डिंग, गाड़ियों वग़ैरह पर ज़कात वाजिब नहीं।

इसी तरह अगर किसी शख़्स ने किसी कारोबार में शिर्कत के लिये रुपया पैसा लगाया हुआ है, और उस कारोबार का कोई मुतनासिब (अनुपाती) हिस्सा उसकी मिल्कियत है तो जितना हिस्सा उसकी मिल्कियत है उस हिस्से की बाज़ारी कीमत के हिसाब से ज़कात वाजिब होगी।

बहर हाल, ख़ुलासा यह है कि नक़द रुपया जिसमें बैंक बेलैंस और माली सरमाए कारी भी दाख़िल हैं, उन पर ज़कात वाजिब है, और तिजारत का सामान, जिसमें तैयार माल, कच्चा माल, और जो माल तैयारी के मराहिल में है, वे सब तिजारत के सामान में दाख़िल हैं, और कम्पनी के शेयर्ज़ भी तिजारत के सामान में दाख़िल हैं।

इसके अलावा हर चीज़ जो आदमी ने बेचने की गर्ज़ से खरीदी हो वह भी तिजारत के सामान में दाख़िल है। ज़कात निकालते वक़्त उन सब की मजमूई मालियत निकालें और उस पर ज़कात अदा करें।

वसूल होने वाले क़र्ज़ों पर ज़कात

इनके अलावा बहुत सी रक़में वे होती हैं जो दूसरों से वाजिबुल वसूल होती हैं। जैसे दूसरों को क़र्ज़ दे रखा है। या जैसे माल उधार बेच रखा है, और उसकी क़ीमत अभी वसूल होनी है, तो जब आप ज़कात का हिसाब लगायें और अपनी मजमूई मालियत निकालें तो बेहतर यह है कि उन क़र्ज़ों को और वाजिबुल वसूल रक़मों को आज ही अपनी मजमूई मालियत में शामिल कर लें। अगरचे शरई हुक्म यह है कि जो क़र्ज़े अभी वसूल नहीं हुए तो जब तक वे वसूल न हो जायें उस वक़्त तक शर्अन उन पर ज़कात की अदाएगी वाजिब नहीं होती, लेकिन जब वसूल हो जायें तो जितने साल गुज़र चुके हैं उन तमाम पिछले सालों की भी ज़कात अदा करनी होगी। जैसे फ़र्ज़ करें कि आपने एक शख़्स को एक लाख रुपया क़र्ज़ दे रखा था, और पांच साल के बाद वह क़र्ज़ा आपको वापस मिला, तो अगरचे उस एक लाख रुपये पर उन पांच सालों के दौरान तो ज़कात की अदाएगी वाजिब नहीं थी, लेकिन जब वह एक लाख रुपये वसूल हो गये तो अब पिछले पांच सालों की भी ज़कात देनी होगी। तो चूंकि पिछले सालों की ज़कात एक मुश्त अदा करने में कभी कभी दुश्वारी होती है, इसलिये बेहतर यह है कि हर साल उस क़र्ज़ की ज़कात की अदाएगी भी कर दी जाया करे। इसलिये जब ज़कात का हिसाब लगायें तो उन क़र्ज़ों को भी मजमूई मालियत में शामिल कर लिया करें।

क़र्ज़ों को अलग कर लें

फिर दूसरी तरफ़ यह देखें कि आपके ज़िम्मे दूसरे लोगों के कितने क़र्ज़ हैं। और फिर मजमूई मालियत में से उन क़र्ज़ों को

निकाल दें, निकालने के बाद जो बाकी बचे वह काबिले जकात रकम है। उसका फिर ढाई फीसद निकाल कर ज़कात की नियत से अदा कर दें। बेहतर यह है कि जो रक़म ज़कात की बने उतनी रक़म अलग निकाल कर महफ़ूज़ कर लें, फिर वक़्तन फ़वक़्तन उसको उसके मुस्तहिक़ लोगों में ख़र्च करते रहें। बहर हाल, ज़कात का हिसाब लगाने का यह तरीक़ा है।

क़र्ज़ों की दो क़िस्में

क़र्ज़ों के सिलसिले में एक बात और समझ लेनी चाहिये, वह यह कि क़र्ज़ों की दो क़िस्में हैः एक तो मामूली क़र्ज़े हैं जिनको इन्सान अपनी ज़ाती ज़रूरियात और हंगामी ज़रूरियात के लिये मजबूरन लेता है। दूसरी क़िस्म के क़र्ज़े वे हैं जो बड़े बड़े सरमाये दार पैदावारी की ग़र्ज़ों के लिये लेते हैं। जैसेः फैक्ट्रीयां लगाने या मशीनरियां ख़रीदने, या तिजारत के माल को इम्पोर्ट करने के लिये क़र्ज़ लेते हैं, या जैसे एक सरमाये दार के पास पहले से दो फ़ैक्ट्रीयां मौजूद हैं, लेकिन उसने बैंक से क़र्ज़ लेकर तीसरी फ़ैक्ट्री लगा ली। अब अगर उस दूसरी क़िस्म के क़र्ज़ों की मजमूई मालियत से निकाला जाये तो न सिर्फ़ यह कि उन सरमाये दारों पर एक पैसे की भी ज़कात वाजिब नहीं होगी, बल्कि वे लोग उल्टे ज़कात के मुस्तहिक़ बन जायेंगे। इसलिये कि उनके पास जितनी मालियत का माल मौजूद है, उस से ज़्यादा मालियत के क़र्ज़ बैंक से ले रखे हैं। वह बज़ाहिर फ़क़ीर और मिस्कीन नज़र आ रहा है। इसलिये उन क़र्ज़ों के निकालने में शरीअत ने फ़र्क़ रखा है।

तिजारती क़र्ज़े कब निकाले जायें

इसमें तफ़सील यह है कि पहली क़िस्म के क़र्ज़े तो मजमूई मालियत से अलग हो जायेंगे और उनको निकालने के बाद ज़कात अदा की जायेगी। और दूसरी क़िस्म के क़र्ज़ों में यह तफ़सील है कि अगर किसी शख़्स ने तिजारत की ग़र्ज़ से क़र्ज़ लिया, और उस क़र्ज़

को ऐसी चीज़ें ख़रीदने में इस्तेमाल किया जो क़ाबिले ज़कात हैं, जैसे उस क़र्ज़ से कच्चा माल ख़रीद लिया, या तिजारत का माल ख़रीद लिया, तो उस क़र्ज़ को मजमूई मालियत से अलग करेंगे। लेकिन अगर उस क़र्ज़ को ऐसे सामान ख़रीदने में इस्तेमाल किया जो ना क़ाबिले ज़कात हैं तो उस क़र्ज़ को मजमूई मालियत से नहीं निकालेंगे।

क़र्ज़ की मिसाल

जैसे एक शख़्स ने बैंक से एक करोड़ रुपये क़र्ज़ लिये, और उस रक़म से उसने एक प्लांट (मशीनरी) बाहर से इम्पोर्ट कर लिया। चूंकि यह प्लांट क़ाबिले ज़कात नहीं है इसलिये कि यह मशीनरी है तो इस सूरत में यह क़र्ज़ा नहीं निकाला जाएगा। लेकिन अगर उसने उस क़र्ज़ से कच्चा माल ख़रीद लिया तो चूंकि कच्चा माल क़ाबिले ज़कात है इसलिये यह क़र्ज़ निकाला जायेगा, क्योंकि दूसरी तरफ़ यह कच्चा माल अदा की जाने वाली ज़कात की मजमूई मालियत में पहले से शामिल हो चुका है। ख़ुलासा यह है कि नॉरमल क़िस्म के क़र्ज़ तो पूरे के पूरे मजमूई मालियत से निकाले जायेंगे। और जो क़र्ज़ पैदावारी की ग़र्ज़ों के लिये लिए गये हैं। उसमें यह तफ़सील है कि अगर उस से ना क़ाबिले ज़कात सामान ख़रीदे हैं तो वह क़र्ज़ नहीं निकाला जाएगा। और अगर क़ाबिले ज़कात सामान ख़रीदे हैं तो वह क़र्ज़ निकाला जाएगा। यह तो ज़कात निकालने के बारे में अह्काम थे।

ज़कात मुस्तहिक़ को अदा करें

दूसरी तरफ़ ज़कात की अदाएगी के बारे में भी शरीअ़त ने अह्काम बताये हैं। मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि अल्लाह तआ़ला ने यह नहीं फ़रमाया कि ज़कात निकालो, न यह फ़रमाया कि ज़कात फेंको, बल्कि फ़रमायाः "आतुज़्ज़का–त" ज़कात अदा करो।

यानी यह देखो कि उस जगह पर ज़कात जाये जहां शरई तौर पर ज़कात जानी चाहिये। बाज़ लोग ज़कात निकालते तो हैं लेकिन इसकी परवाह नहीं करते कि सही जगह पर ख़र्च हो रही है या नहीं? ज़कात निकाल कर किसी के हवाले कर दी और इसकी तहक़ीक़ नहीं की कि यह सही जगह पर ख़र्च करेगा या नहीं? आज बेशुमार इदारे दुनिया में काम कर रहे हैं, उनमें बहुत से इदारे ऐसे भी होंगे जिनमें कभी कभी इस बात का लिहाज़ नहीं होता होगा कि ज़कात की रक़म सही जगह पर ख़र्च हो रही है या नहीं? इसलिये फ़रमाया कि ज़कात अदा करो। यानी जो ज़कात का मुस्तहिक़ है उसको अदा करो।

मुस्तहिक़ कौन?

इसके लिये शरीअ़त ने यह उसूल मुक़र्रर फ़रमाया है कि ज़कात सिर्फ़ उन्हीं लोगों को दी जा सकती है जो साहिबे निसाब न हों। यहां तक कि अगर उनकी मिल्कियत में ज़रूरत से ज़ायद ऐसा सामान मौजूद है जो साढ़े बावन तोले चांदी की क़ीमत तक पहुंच जाता है तो भी वे ज़कात के मुस्तहिक़ नहीं रहते। ज़कात का मुस्तहिक़ वह है जिसके पास साढ़े बावन तोले चांदी की मालियत की रक़म या इतनी मालियत का कोई सामान ज़रूरत से ज़ायद न हो।

मुस्तहिक़ को मालिक बनाकर दें

इसमें भी शरीअ़त का यह हुक्म है कि उस ज़कात के मुस्तहिक़ को मालिक बनाकर दो। यानी वह ज़कात का मुस्तहिक़ अपनी मिल्कियत में ख़ुद मुख़्तार हो, कि जो चाहे करे। इसी वजह से किसी बिल्डिंग की तामीर पर ज़कात नहीं लग सकती। किसी इदारे के मुलाज़िमों की तन्ख़्वाहों पर ज़कात नहीं लग सकती। इसलिये कि अगर ज़कात के ज़रिये तामीरात करने और इदारे क़ायम करने की इजाज़त दे दी जाती तो ज़कात की रक़म सब लोग खा पीकर ख़त्म कर जाते। क्योंकि इदारों के अन्दर तन्ख़्वाहें बेशुमार होती हैं,

तामीरात पर ख़र्च लाखों का होता है, इसलिये यह हुक्म दिया गया कि ग़ैर साहिबे निसाब को मालिक बनाकर ज़कात दो। यह ज़कात फ़ुक़रा और ग़रीबों और कमज़ोरों का हक़ है? इसलिये यह ज़कात उन्हीं तक पहुंचनी चाहिये, जब उनको मालिक बनाकर दे दोगे तो तुम्हारी ज़कात अदा हो जायेगी।

किन रिश्तेदारों को ज़कात दी जा सकती है

यह ज़कात अदा करने का हुक्म इन्सान के अन्दर यह तलब और जुस्तजू ख़ुद बख़ुद पैदा करता है कि मेरे पास ज़कात के इतने पैसे मौजूद हैं, उनको सही जगह में ख़र्च करना है। इसलिये वह मुस्तहिक़ लोगों को तलाश करता है कि कौन कौन मुस्तहिक़ लोग हैं और उन मुस्तहिक़ लोगों की फ़ेहरिस्त बनाता है, फिर उनको ज़कात पहुंचाता है। यह भी इन्सान की ज़िम्मेदारी है। आपके मौहल्ले में, मिलने जुलने वालों में, अज़ीज़ों और क़रीबी लोगों और रिश्तेदारों में, दोस्त व अहबाब में जो ज़कात के मुस्तहिक़ हों, उनको ज़कात अदा करें। और उनमें सब से अफ़ज़ल यह है कि अपने रिश्तेदारों को ज़कात अदा करें, इसमें डबल सवाब है, ज़कात अदा करने का सवाब भी है और सिला रहमी करने का सवाब भी है। और तमाम रिश्तेदारों को ज़कात दे सकते हैं, सिर्फ़ दो रिश्ते ऐसे हैं जिनको ज़कात नहीं दी जा सकती। एक विलादत का रिश्ता है, इसलिये बाप बेटे को ज़कात नहीं दे सकता और बेटा बाप को ज़कात नहीं दे सकता। दुसरा निकाह का रिश्ता है, इसलिए शौहर बीवी को ज़कात नहीं दे सकता, और बीवी शौहर को ज़कात नहीं दे सकती। इनके अलावा बाक़ी तमाम रिश्तों में ज़कात दी जा सकती है। जैसे भाई को, बहन को, चचा को, ख़ाला को, फूफी को, मामूं को ज़कात दी जा सकती है। लेकिन यह ज़रूर देख लें कि वे ज़कात के मुस्तहिक़ हों और साहिबे निसाब न हों।

बेवा और यतीम को ज़कात देने का हुक्म

बाज़ लोग यह समझते हैं कि अगर कोई औरत बेवा है तो

उसको ज़कात ज़रूर देनी चाहिये, हालांकि यहां भी शर्त यह है कि वह ज़कात के मुस्तहिक़ हो, और साहिबे निसाब न हो। अगर बेवा ज़कात की मुस्तहिक़ है तो उसकी मदद करना बड़ी अच्छी बात है। लेकिन अगर एक औरत बेवा है और ज़कात की मुस्तहिक़ नहीं हैं तो महज़ बेवा होने की वजह से वह ज़कात का महल और जगह नहीं बन सकती। इसी तरह यतीम को ज़कात देना और उसकी मदद करना बहुत अच्छी बात है लेकिन यह देख कर ज़कात देनी चाहिये कि वह ज़कात का मुस्तहिक़ है। लेकिन अगर कोई यतीम है मगर वह ज़कात का मुस्तहिक़ नहीं है बल्कि साहिबे निसाब है तो यतीम होने के बावजूद उसको ज़कात नहीं दी जा सकती। इन अह्काम को मद्देनज़र रखते हुए ज़कात निकालनी चाहिये।

बैंकों से ज़कात की कटौती का हुक्म

कुछ अर्से से हमारे मुल्कों में सरकारी सतह पर ज़कात वसूल करने का निज़ाम क़ायम है। इसकी वजह से बहुत से माली इदारों से ज़कात वसूल की जाती है, कम्पनियां भी ज़कात काट कर हुकूमत को अदा करती हैं। इसके बारे में थोड़ी सी तफ़सील अर्ज़ कर देता हूं।

जहां तक बैंकों और माली इदारों से ज़कात की कटौती का ताल्लुक़ है तो उस कटौती से ज़कात अदा हो जाती है, दोबारा ज़कात अदा करने की ज़रूरत नहीं, लेकिन एहतियातन ऐसा कर लें कि रमज़ान की पहली तारीख़ आने से पहले दिल में यह नियत कर लें कि मेरी रक़म से जो ज़कात कटेगी वह मैं अदा करता हूं। इस से उसकी ज़कात अदा हो जाती है, दोबारा ज़कात निकालने की ज़रूरत नहीं। इसमें बाज़ लोगों को यह शुबह रहता है कि हमारी पूरी रक़म पर साल पूरा नहीं गुज़रा, जब कि पूरी रक़म पर ज़कात कट गयी। इसके बारे में पहले अर्ज़ कर चुका हूं कि हर हर रक़म पर साल गुज़रना ज़रूरी नहीं होता, बल्कि आप अगर साहिबे निसाब हैं तो इस सूरत में साल पूरा होने से एक दिन पहले भी जो रक़म आपके पास

आयी है उस पर जो ज़कात कटी है वह भी बिल्कुल सही कटी है, क्योंकि उस पर भी ज़कात वाजिब हो गयी थी।

एकाउन्ट की रक़म से क़र्ज़ किस तरह कम करें?

लेकिन अगर किसी शख़्स का सारा असासा बैंक ही में है, ख़ुद उसके पास कुछ भी मौजूद नहीं, और दूसरी तरफ़ उसके ऊपर लोगों के क़र्ज़े हैं, तो इस सूरत में बैंक तो तारीख़ आने पर ज़कात काट लेता है, हालांकि उस रक़म से क़र्ज़े निकाले नहीं होते, जिसके नतीजे में ज़्यादा ज़कात कट जाती है। इसका एक हल तो यह है कि या तो आदमी वह तारीख़ आने से पहले अपनी रक़म बैंक से निकाल ले या क्रन्ट एकाउन्ट ही में रखे, सेविंग एकाउन्ट में बिल्कुल ही न रखे। इसलिये कि वह तो सूदी एकाउन्ट है और क्रन्ट एकाउन्ट में ज़कात नहीं कटती। बहर हाल, ज़कात की तारीख़ आने से पहले वह रक़म क्रन्ट एकाउन्ट में मुन्तक़िल कर दे। जब क्रन्ट एकाउन्ट से ज़कात नहीं कटेगी तो आप अपने तौर पर हिसाब करके क़र्ज़ निकाल करके ज़कात अदा करें। दूसरा हल यह है कि वह शख़्स बैंक को लिख कर दे दे कि मैं साहिबे निसाब नहीं हूं और साहिबे निसाब न होने की वजह से मेरे ऊपर ज़कात वाजिब नहीं है। अगर यह लिख कर दे दे तो क़ानूनन उसकी रक़म से ज़कात नहीं काटी जायेगी।

कम्पनी के शेयरों की ज़कात काटना

एक मसला कम्पनी के शेयरों का है। जब कम्पनी शेयरों पर सालाना मुनाफ़ा तक़सीम करती है तो उस वक़्त वह कम्पनी ज़कात काट लेती है, लेकिन कम्पनी उन शेयरों की जो ज़कात काटती है वह उन शेयरों की फ़ेस वैल्यू **(FACE VALUE)** की बुनियाद पर ज़कात काटती है, हालांकि शरई तौर पर उन शेयरों की मार्किट क़ीमत पर ज़कात वाजिब है, फ़ेस वैल्यू पर जो ज़कात काटी गयी है वह तो अदा हो गयी, लेकिन फ़ेस वैल्यू और मार्किट वैल्यू के

दरमियान जो फ़र्क़ है, उसका आपको उस बुनियाद पर हिसाब करना होगा जिसकी तफ़सील शेयरों की ज़कात के बारे में बयान की गयी है। जैसे एक शेयर की फ़ेस वैल्यू पचास रुपये थी और उसकी मार्किट वैल्यू साठ रुपये है, तो अब कम्पनी वालों ने पचास रुपये की ज़कात अदा कर दी, इसलिये दस रुपये की ज़कात आपको अलग से निकालनी होगी। कम्पनी के शेयर्ज़ और एन. आई. टी. यूनिट दोनों के अन्दर यही सूरत है। इसलिये जहां कहीं फ़ेस वैल्यू पर ज़कात कटती है वहां मार्किट वैल्यू का हिसाब करके दोनों के दरमियान जो फ़र्क़ है उसकी ज़कात अदा करना ज़रूरी है।

ज़कात की तारीख़ क्या होनी चाहिए?

एक बात यह समझ लेनी चाहिये कि ज़कात के लिये शरई तौर पर कोई तारीख़ नहीं है, और न कोई ज़माना मुक़र्रर है कि उस ज़माने में या उस तारीख़ में ज़कात अदा की जायेगी, बल्कि हर आदमी की ज़कात की तारीख़ अलग है। शरई तौर पर ज़कात की असल तारीख़ वह है जिस तारीख़ और जिस दिन आदमी पहली बार साहिबे निसाब बना। जैसे एक शख़्स मुहर्रम की पहली तारीख़ को पहली बार साहिबे निसाब बना, तो उसकी ज़कात की तारीख़ मुहर्रम की पहली तारीख़ हो गयी, अब आइन्दा हर साल उसको मुहर्रम की पहली तारीख़ को अपनी ज़कात का हिसाब करना चाहिये। लेकिन अक्सर ऐसा होता है कि लोगों को यह याद नहीं रहता कि हम किस तारीख़ को पहली बार साहिबे निसाब बने थे, इसलिये मजबूरी की वजह से वे अपने लिये कोई ऐसी तारीख़ ज़कात के हिसाब की मुक़र्रर कर ले जिसमें उसके लिये हिसाब लगाना आसान हो, फिर आइन्दा हर साल उसी तारीख़ को ज़कात का हिसाब करके ज़कात अदा करे, लेकिन एहतियातन कुछ ज़्यादा अदा कर दें।

क्या रमज़ानुल मुबारक की तारीख़ मुक़र्रर कर सकते हैं?

आम तौर पर लोग रमज़ानुल मुबारक में ज़कात निकालते हैं,

इसकी वजह यह भी है कि हदीस शरीफ में है कि रमज़ानुल मुबारक में एक फ़र्ज़ का सवाब सत्तर गुना बढ़ा दिया जाता है, इसलिये ज़कात भी चूंकि फ़र्ज़ है, अगर रमज़ानुल मुबारक में अदा करेंगे तो उसका सवाब भी सत्तर गुना मिलेगा। बात अपनी जगह बिल्कुल दुरुस्त है और यह जज़्बा बहुत अच्छा है, लेकिन अगर किसी शख़्स को अपने साहिबे निसाब बनने की तारीख़ मालूम है तो महज़ इस सवाब की वजह से रमज़ान की तारीख़ मुक़र्रर नहीं कर सकता, इसलिये उसको चाहिये कि उसी तारीख़ पर अपनी ज़कात का हिसाब करे। लेकिन ज़कात की अदाएगी में यह कर सकता है कि अगर थोड़ी थोड़ी ज़कात अदा कर रहा है तो इस तरह अदा करता रहे और बाक़ी जो बचे उसको रमज़ानुल मुबारक में अदा कर दे। लेकिन अगर तारीख़ याद नहीं है तो फिर गुन्जाइश है कि रमज़ानुल मुबारक की कोई तारीख़ मुक़र्रर कर ले, लेकिन एहतियातन ज़्यादा अदा कर दे ताकि अगर तारीख़ के आगे पीछे होने की वजह से कोई फ़र्क़ हो गया हो वह फ़र्क़ भी पूरा हो जाये।

फिर जब एक बार जो तारीख़ मुक़र्रर कर ले तो फिर हर साल उसी तारीख़ को अपना हिसाब लगाये और यह देखे कि उस तारीख़ में क्या क्या मेरे असासे मौजूद हैं, उस तारीख़ में नक़द रक़म कितनी है। अगर सोना मौजूद है तो उसी तारीख़ को सोने की क़ीमत लगाये, अगर शेयर्ज़ हैं तो उन शेयर्ज़ की क़ीमत लगाये, अगर स्टॉक की क़ीमत लगानी है तो उसी तारीख़ की स्टॉक की क़ीमत लगाये और फिर हर साल उसी तारीख़ को हिसाब करके ज़कात अदा करनी चाहिये, उस तारीख़ से आगे पीछे नहीं करना चाहिये।

बहर हाल, ज़कात के बारे में यह थोड़ी सी तफ़सील अर्ज़ कर दी। अल्लाह तआला हम सब को इन अह्काम पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

क्या आपको ख़्यालात परेशान करते हैं?

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

बुरे ख़्यालात, ईमान की निशानी

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से वस्वसे के बारे में पूछा गया, कि दिल में कुफ़्र व शिर्क के और बुराइयों के जो वस्वसे आते हैं उनका क्या हुक्म है? जवाब में नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः

ذاك محض الايمان

यानी ये वस्वसे ख़ालिस ईमान की निशानी हैं। उनसे मत घबराओ और उनकी वजह से मायूस मत हो जाओ और उनकी वजह से ज़्यादा परेशान मत हो, क्योंकि ये ख़ालिस ईमान की निशानी हैं।

एक सहाबी ने नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से पूछा कि या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! कभी कभी हमारे दिल में ऐसे वस्वसे और ख़्यालात आते हैं कि उन ख़्यालात को ज़बान पर लाने के मुक़ाबले में हमें जल कर कोयला हो जाना ज़्यादा पसन्द है। यानी उन ख़्यालात को ज़बान से ज़ाहिर करना आग में जल जाने से ज़्यादा बुरा लगता है। इसके जवाब में भी रसूलुल्लाह

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यह तो ईमान की निशानी है।

शैतान ईमान का चोर है

हज़रत हाजी इम्दादुल्लाह साहिब मुहाजिर मक्की रह्मतुल्लाहि अलैहि ने इसकी तशरीह करते हुए फ़रमाया कि यह "वस्वसा" शैतान का अमल है, क्योंकि शैतान ही इन्सान के दिल में यह वस्वसा डालता है, और शैतान ईमान का चोर है। यह तुम्हारे ईमान पर डाका डालना चाहता है, चोर और डाकू उस घर में डाका डालेगा जिस घर में दौलत हो, और दौलत है ही नहीं तो फिर डाका क्यों डालेगा। इसलिये शैतान जो तुम्हारे दिल में वस्वसे डाल रहा है और तुम्हारे दिल में दाख़िल हो रहा है, यह इस बात की निशानी है कि तुम्हारे दिल में ईमान की दौलत मौजूद है। अगर यह ईमान की दौलत न होती तो यह डाकू उस घर में दाख़िल न होता। इस वजह से उनसे घबराना नहीं चाहिये। यह जो तुम कह रहे हो कि मेरे दिल में ऐसे वस्वसे आते हैं कि उनको ज़ाहिर करने के मुक़ाबले में जल कर मर जाना ज़्यादा पसन्द है, यह अन्दर से तुम्हारा ईमान बोल रहा है, तुम्हारा ईमान यह बोल रहा है कि यह बात ज़बान से निकालने वाली नहीं, अगर दिल में ईमान न होता तो यह बात न होती, इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यह तो असल ईमान की निशानी है।

वस्वसों पर पकड़ नहीं होगी

एक हदीस में जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"الحمد لله الذى رد كيد الشيطان الى الوسوسة"

यानी अल्लाह तआला का शुक्र है कि उसने शैतान के मकर और जाल को वस्वसे की हद तक महदूद (सीमित) कर दिया, उस से आगे नहीं बढ़ाया। यह अल्लाह तआला का ख़ास फ़ज़्ल है कि शैतान

की तदबीर तुम्हारे ऊपर इस से ज़्यादा कारगर नहीं हो रही है। एक और हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"ان اللّٰہ تجاوز عن امتی ما وسوست بہ صدورھا"

यानी अल्लाह तआ़ला ने मेरी उम्मत के दिलों में जो वस्वसे पैदा होते हैं उस से दरगुज़र फ़रमा दिया है, और उनको माफ़ फ़रमा दिया है, उन पर पकड़ नहीं होगी। लेकिन अ़मल पर पकड़ होगी।

अ़क़ीदों के बारे में ख़्यालात

वस्वसे दो क़िस्म के होते हैं। एक वस्वसे अ़क़ीदे के बारे में हैं, यानी दिल में शैतान अल्लाह तआ़ला की ज़ात के बारे में वस्वसा डाले या आख़िरत के बारे में वस्वसा डाले कि मालूम नहीं कि आयेगी या नहीं आयेगी। इस क़िस्म के वस्वसों के बारे में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ख़ुद फ़रमाया कि जब तक तुम अपना अ़क़ीदा दुरुस्त रखोगे, फिर चाहे ख़्यालात और वस्वसे कैसे भी आ जायें, उन पर इन्शा अल्लाह पकड़ नहीं होगी, और न उन ख़्यालात की वजह से इन्सान काफ़िर होता है। उन ख़्यालात की वजह से बाज़ लोग यह समझते हैं कि मैं शैतान हो गया, मैं तो काफ़िर हो गया। याद रखिये! इन वस्वसों के दिल में आने से कुछ नहीं होता, जब तक इन्सान अपने दिल, अपनी ज़बान और अपने अ़मल से मोमिन है। इसलिये आदमी को मुत्मइन हो जाना चाहिये।

गुनाहों के ख़्यालात

दूसरे गुनाह करने और बुराइयां करने के वस्वसे और ख़्यालात आते हैं। जैसे दिल में यह ख़्याल आता है कि फ़लां गुनाह कर लूं, या फ़लां गुनाह कर लूं, या किसी गुनाह की तरफ़ तबीयत माइल हो रही है और उसकी तरफ़ कशिश हो रही है। उनके बारे में अल्लाह तआ़ला ने फ़रमा दिया कि अगर सिर्फ़ दिल में ख़्याल आया है तो उस पर इन्शा अल्लाह कोई पकड़ नहीं होगी, जब तक उस ख़्याल और वस्वसे पर अ़मल न कर लोगे। इसलिये जब गुनाह के तक़ाज़े

और जज़्बे पर अमल कर लोगे तो यह काबिले गिरफ्त और काबिले पकड़ है, और जब गुनाह का ख़्याल या वस्वसा आये कि फ़लां गुनाह कर लूं तो उसका फ़ौरी तोड़ यह है कि फ़ौरन अल्लाह की पनाह मांगो कि या अल्लाह! मेरे दिल में इस गुनाह का ख़्याल आ रहा है, मैं आपकी पनाह चाहता हूं, आप मुझे इस गुनाह से बचा लीजिये। इस तरह उस ख़्याल और वस्वसे का तोड़ हो जायेगा।

बुरे ख़्यालात के वक़्त अल्लाह की तरफ़ रुजू करो

हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम का वाक़िआ कुरआने करीम में ज़िक्र किया गया है कि आप आज़माइश में मुब्तला हुए और उस आज़माइश के नतीजे में उनके दिल में भी गुनाह का कुछ वस्वसा आया, इसलिये कि बहर हाल आप भी इन्सान थे, लेकिन उस वक़्त आपने अल्लाह तआला से यह दुआ फ़रमाई कि:

"ان لا تصرف عنی کید هن اصب الیهن واکن من الجاهلین"

यानी ऐ अल्लाह! आप इन औरतों के मकर को मुझ से दूर नहीं करेंगे तो मैं भी तो एक इन्सान हूं उनकी तरफ़ माइल हो जाऊंगा और जाहिलों में से हो जाऊंगा, इसलिये उन औरतों के मक्र को मुझ से दूर कर दीजिये। जब कभी गुनाह का ख़्याल या गुनाह का वस्वसा और तक़ाज़ा दिल में पैदा हो तो फ़ौरन अल्लाह तआला की तरफ़ रुजू करके उस से पनाह मांग लो, कि ऐ अल्लाह! अपने फ़ज़्ल व करम से मुझे इस गुनाह से महफ़ूज़ रखिये। और उस वक़्त अपनी हिम्मत को ताज़ा कर लो कि मैं गुनाह के इस तक़ाज़े पर अमल नहीं करूंगा। अगर यह कर लोगे तो फिर इन्शा अल्लाह ये ख़्यालात और वस्वसे कुछ भी नुक़सान नहीं करेंगे।

नमाज़ में आने वाले ख़्यालात का हुक्म

वस्वसे की तीसरी क़िस्म अगरचे मुबाह है, क्योंकि वह किसी गुनाह का वस्वसा और ख़्याल नहीं है, लेकिन वह ख़्याल इन्सान को किसी इबादत और ताअत की तरफ़ मुतवज्जह होने से रोक रहा है,

मिसाल के तौर पर जैसे ही नमाज की नियत बांधी बस उस वक्त दुनिया भर के ख़्यालात की चक्की चलनी शुरू हो गयी, और वे ख़्यालात चाहे गुनाह के ख़्याल न हों, जैसे खाने पीने का ख़्याल, बीवी बच्चों का ख़्याल, अपनी रोज़ी का ख़्याल, तिजारत का ख़्याल, ये तमाम ख़्यालात अपनी ज़ात के एतिबार से गुनाह के ख़्यालात नहीं हैं, लेकिन इन ख़्यालात की वजह से दिल नमाज़ की तरफ़ मुतवज्जह नहीं हो रहा है और इन ख़्यालात की वजह से ख़ुशू में रुकावट पैदा हो रही है, चूंकि ये ख़्यालात जो ग़ैर इख़्तियारी तौर पर आ रहे हैं और इन्सान के अपने इख़्तियार को कोई दख़ल नहीं है, इसलिये इन्शा अल्लाह इन ख़्यालात पर कोई पकड़ और पूछ गछ नहीं होगी बल्कि माफ़ होंगे, लेकिन अपने इख़्तियार से बाकायदा इरादा करके ख़्यालात नामज़ में मत लाओ और न दिल उनमें लगाओ, जब अल्लाहु अक्बर कह कर नामज़ शुरू करो तो ज़ेहन को नमाज़ की तरफ़ मुतवज्जह करो, जब सुब्हानकल्लाहुम्–म पढ़ो तो उसकी तरफ़ ध्यान लगाओ, और जब सूरः फ़ातिहा पढ़नी शुरू करो तो उसकी तरफ़ ध्यान लगाओ, फिर ध्यान लगाने के बावजूद ग़ैर इख़्तियारी तौर पर ज़ेहन दूसरी तरफ़ भटक गया और ख़्यालात कहीं और चले गये तो इन्शा अल्लाह उन पर गिरफ़्त नहीं होगी। लेकिन जब ध्यान आ जाये कि मैं तो भटक गया तो फिर दोबारा नमाज़ की तरफ़ लौट आओ और नमाज़ के अल्फ़ाज़ और अज़्कार की तरफ़ लौट आओ। बार बार यह करते रहोगे तो इन्शा अल्लाह ये ख़्यालात आने कम हो जायेंगे और इस काम के ज़रिये अल्लाह तआला ख़ुशू अता फ़रमा देंगे।

नमाज़ की नाक़द्री मत करो

बहर हाल नमाज़ में जो ख़्यालात आते हैं, बहुत से लोग उनसे परेशान होते हैं और उन ख़्यालात के नतीजे में समझते हैं कि हमारी यह नमाज़ तो उठक बैठक है, इसमें कोई रूह और जान नहीं है।

याद रखिये! नमाज़ की ऐसी नाक़द्री नहीं करनी चाहिये। अरे यह तो अल्लाह तआला का फ़ज़्ल व करम है कि उसने हमें नमाज़ पढ़ने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाई और उस पर अल्लाह तआला का शुक्र अदा करो, और उन ख़्यालात की वजह से अपनी नमाज़ को बेकार मत समझो। यह नमाज़ की तौफ़ीक़ तो अल्लाह तआला की नेमत है। और उन ग़ैर इख़्तियारी ख़्यालात की वजह से इन्शा अल्लाह तुम्हारी गिरफ़्त नहीं होगी। लेकिन अपने इख़्तियार से ख़्यालात मत लाओ।

इमाम ग़ज़ाली रह. का एक वाक़िआ

हज़रत इमाम ग़ज़ाली रहमतुल्लाहि अलैहि जो बड़े दर्जे के आलिम और सूफ़ी थे। अल्लाह तआला ने उनको बहुत ऊंचा मक़ाम अता फ़रमाया था। उनके एक भाई थे जो बिल्कुल ख़ालिस सूफ़ी मिज़ाज आदमी थे, इमाम ग़ज़ाली रहमतुल्लाहि अलैहि जब इमामत फ़रमाते और नमाज़ पढ़ाते तो यह भाई उनके पीछे नमाज़ नहीं पढ़ते थे। किसी ने उनकी वालिदा (मां) से शिकायत कर दी कि यह उनके पीछे नमाज़ नहीं पढ़ते। वालिदा ने उनको बुलाया और उनसे पूछा कि तुम उनके पीछे नमाज़ क्यों नहीं पढ़ते? उन्होंने जवाब दिया कि उनकी नमाज़ ही क्या है, मैं उनके पीछे कैसे नमाज़ पढ़ूं। इसलिये कि जब यह नमाज़ पढ़ाते हैं तो उस वक़्त उनका दिल और दिमाग़ हैज़ व निफ़ास (माहवारी और जचगी) के मसाइल में उलझा रहता है, इसलिये यह गन्दी नमाज़ है, मैं उसके पीछे नमाज़ नहीं पढ़ता। वह वालिदा भी इमाम ग़ज़ाली रहमतुल्लाहि अलैहि की वालिदा थीं। जवाब में फ़रमाया कि तुम्हारा भाई तो नमाज़ के अन्दर फ़िक़ही मसाइल सोचता है और नमाज़ के अन्दर फ़िक़ही मसले सोचना जायज़ है, और तुम नमाज़ के अन्दर अपने भाई के ऐब तलाश करने में लगे रहते हो, और यह देखते रहते हो कि इसकी नमाज़ सही है या ग़लत है? और नमाज़ के अन्दर यह काम यक़ीनी तौर पर हराम है। इसलिये बताओ कि वह बेहतर है या तुम बेहतर हो? बहर हाल इमाम ग़ज़ाली रहमतुल्लाहि अलैहि की वालिदा ने भी यह बात वाज़ेह

फ़रमा दी कि नमाज़ में फ़िक़ही मसले को सोचना कोई गुनाह की बात नहीं। इसलिये अपने इख़्तियार से ऐसे ख़्यालात लाना जो ख़ुद इबादत और ताअत का हिस्सा हैं वे भी नमाज़ के ख़ुशू के ख़िलाफ़ नहीं।

क़ुरआनी आयतों में ग़ौर फ़िक्र करने का हुक्म

चुनांचे हुक्म यह है कि क़ुरआने करीम पढ़ते वक़्त क़ुरआने करीम की आयतों में तदब्बुर करो, ग़ौर व फ़िक्र करो। अब अगर एक शख़्स नमाज़ पढ़ रहा है और नमाज़ में तिलावत के वक़्त क़ुरआने करीम के भेद व हुक्म के अन्दर डूबा हुआ है और खोया है, यह सब जायज़ है और इबादत ही का एक हिस्सा है। इसलिये कोई भी ऐसा ख़्याल जो ताअत और इबादत का ख़्याल हो, उनको अपने इख़्तियार से भी नमाज़ में ला सकते हैं। लेकिन वे ख़्यालात जो ताअत और इबादत का हिस्सा नहीं हैं, जैसे दुनिया के बारे में यह ख़्यालात कि किस तरह दुनिया कमाऊं, किस तरह ख़र्च करूं वग़ैरह, तो इस क़िस्म के ख़्यालात अपने इख़्तियार से तो न लायें, ख़ुद से आ रहे हैं तो आने दो, इस से नमाज़ के ख़ुशू में ज़र्रा बराबर फ़र्क़ नहीं पड़ता। हां! जब ध्यान इस तरफ़ आ जाये कि ये ख़्यालात आ रहे हैं फिर भी उन ख़्यालात को बाक़ी रखा और उन ख़्यालात से मज़े लेता रहा तो यह ना जायज़ है। इसलिये जब ख़्याल आ जाये तो दोबारा नमाज़ की तरफ़ लौट आओ।

यह सज्दा सिर्फ़ अल्लाह के लिये है

हमारे हज़रत डा. अब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि की ख़िदमत में एक साहिब आये और अर्ज़ किया कि हज़रत! मैं परेशान हूं, इसलिये कि मेरी नमाज़ें किसी काम की नहीं, जब मैं सज्दा करता हूं तो उस वक़्त दिमाग़ में ऐसे शहवानी और नफ़सानी ख़्यालात का हुजूम होता है कि अल्लाह बचाए, तो वह मेरा सज्दा क्या हुआ, वह तो वैसे ही टक्करें मारना हुआ, मैं तो बहुत परेशान हूं कि किस तरह

इस मुसीबत से नजात पाऊं। हमारे हज़रत रहमतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि तुम यह जो सज्दा करते हो, तुम्हारे ख़्याल में यह कैसा सज्दा है? उसने कहा कि हज़रत! बड़ा नापाक और बड़ा गन्दा सज्दा है। इसलिये कि उसमें नापाक और गन्दे शहवानी ख़्यालात आते हैं, हज़रत ने फ़रमाया कि यह नापाक और गन्दा सज्दा तो अल्लाह मियां को नहीं करना चाहिये, अच्छा ऐसा करो कि तुम यह नापाक सज्दा मुझे कर लो, इसलिये कि अल्लाह तआला के लिए तो बहुत पाकीज़ा और आला किस्म का सज्दा होना चाहिये और यह नापाक सज्दा है यह मुझ नापाक के सामने कर लो। वह साहिब कहने लगे कि तौबा तौबा, आपके सामने कैसे सज्दा कर लूं? हज़रत ने फ़रमाया कि बस इस से पता चला कि यह सज्दा उसी ज़ात के लिये है, यह पेशानी किसी और के सामने झुक नहीं सकती, चाहे उस सज्दे में कैसे ही गन्दे शहवानी ख़्यालात क्यों न आ रहे हों, लेकिन यह पेशानी अगर झुकेगी तो उसी के दर पर झुकेगी। इसलिये यह सज्दा उसी के लिये है। और अगर बुरे ख़्यालात ग़ैर इख़्तियारी तौर पर आ रहे हैं तो इन्शा अल्लाह ये तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ेंगे। ये अल्लाह तआला के यहां माफ़ हैं।

ख़्यालात और वस्वसों में भी हिक्मत है

देखिये! अगर हम जैसे लोगों को नमाज़ के अन्दर ये ख़्यालात और वस्वसे न आयें बल्कि बड़े ख़ुशू व ख़ुज़ू के साथ नमाज़ पढ़ें कि अल्लाह तआला के अलावा किसी और का ख़्याल ही न आये, अगर हम जैसे लोगों को यह मकाम हासिल हो जाये तो ख़ुदा जाने हमारा दिमाग़ तकब्बुर, घमण्ड और ख़ुद पसन्दी में कहां पहुंच जायेगा। और यह समझ बैठेंगे कि हम तो बहुत आला मकाम पर पहुंच गये। किसी ने कहा कि:

صلی الحائك رکعتین وانتظر الوحی

यानी एक जुलाहे ने एक बार दो रकअत नमाज़ पढ़ ली तो

नमाज़ के बाद इस इन्तिज़ार में बैठ गया कि कब अल्लाह तआला की तरफ़ से मेरे ऊपर "वही" आती है। अगर हम में से भी किसी को खुशू खुज़ू वाली नमाज़ हासिल हो जाये तो खुदा न करे वह पैग़म्बरी का या महदी होने का दावा न कर दे। इसलिये अल्लाह तआला ज़र्फ़ देख कर यह मक़ाम अता फ़रमाते हैं। इसलिये ख़्यालात के आने में भी अल्लाह तआला की तरफ़ से हिक्मत और मस्लिहत है।

नेकी और गुनाह के इरादे पर बदला व सवाब

बहर हाल, इस हदीस का खुलासा यह है कि अल्लाह तआला के यहां दिल के ख़्यालात पर पकड़ नहीं है, क्योंकि अल्लाह तआला की अजीब रहमत है कि गुनाह के बारे में तो यह उसूल मुक़र्रर फ़रमा दिया कि अगर गुनाह करने के बारे में ख़्याल आया और शौक़ पैदा हुआ और दिल में थोड़ा सा इरादा भी कर लिया कि यह गुनाह कर लो, लेकिन अज़्म और पुख़्ता इरादे की हद तक नहीं पहुंचा तो उस पर अल्लाह तआला के यहां कोई पकड़ नहीं, बल्कि अगर बार बार गुनाह का ख़्याल आता रहा और इन्सान उस ख़्याल को दफ़ा करता रहा और उस पर अमल नहीं किया तो इन्शा अल्लाह गुनाह न करने पर अज्र व सवाब मिलेगा, क्योंकि गुनाह का ख़्याल आने के बावजूद उसने अपने आपको गुनाह से बचा लिया। और नेकी के बारे में यह उसूल मुक़र्रर फ़रमाया कि अगर किसी नेकी के बारे में ख़्याल आया और इरादा किया कि फ़लां नेकी कर लूं, अगरचे उस नेकी का पुख़्ता इरादा नहीं किया तब भी सिर्फ़ इरादे पर अल्लाह तआला अज्र व सवाब अता फ़रमाते हैं। जैसे यह इरदा किया कि अगर मुझे माल मिल गया तो अल्लाह तआला की राह में इतना माल सदक़ा कर दूंगा, तो उस पर भी उसको सवाब मिलेगा। या जैसे यह इरादा कर लिया कि जब अल्लाह के रास्ते में जिहाद करने की नौबत आयेगी तो अल्लाह के रास्ते में जिहाद करूंगा और शहादत का दर्जा हासिल करूंगा, तो इसके बारे में हदीस शरीफ़ है कि अल्लाह तआला उसको

भी शहीदों में शुमार फ़रमाते हैं। चुनांचे फ़रमाया:

"من سئل الشهادة بصدق قلب كتب من الشهداء وان مات على فراشه"

यानी अगर कोई शख़्स सच्चे दिल से शहादत तलब करे कि ऐ अल्लाह! मुझे अपने रास्ते में शहादत का मक़ाम अ़ता फ़रमाइये, तो अल्लाह तआ़ला उसको शहीदों ही में शुमार फ़रमायेंगे, चाहे बिस्तर पर उसको मौत आयी हो। बहर हाल नेकी के बारे में क़ानून यह है कि पुख़्ता इरादा करने से पहले भी अल्लाह तआ़ला अज्र व सवाब अ़ता फ़रमाते हैं। और गुनाह के अन्दर क़ानून यह है कि जब तक पुख़्ता इरादा न करे उस वक़्त तक पकड़ नहीं फ़रमाते, यह रहमत का मामला है।

ख़्यालात की बेहतरीन मिसाल

बहर हाल गुनाहों का पुख़्ता इरादा करने से बचना चाहिये। लेकिन गुनाहों के जो वस्वसे और ख़्यालात आ रहे हैं उनकी परवाह न करे बल्कि अपने काम में लगा रहे, उन ख़्यालात की वजह से अपने काम को न छोड़े। हज़रत रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि उन ख़्यालात की मिसाल ऐसी है कि जैसे एक शख़्स को बादशाहे वक़्त ने दावत दी है और बुलाया है, अब यह शख़्स जल्दी में बादशाह से मुलाक़ात करने जा रहा है, अब कोई शख़्स उसका दामन घसीटता है और उसका हाथ पकड़ता है, और उसको रोक कर उस से बात करने की कोशिश करता है, इस तरह लोग उसको तंग कर रहे हैं। अब बताइये क्या यह शख़्स उन रास्ता रोकने वालों से उलझना शुरू कर देगा, या अपना सफ़र जारी रखेगा? अगर यह शख़्स रास्ता रोकने वालों के साथ उलझ गया तो यह शख़्स बादशाह के दरबार में कभी नहीं पहुंच सकेगा। लेकिन अगर उसने यह सोचा कि ये तो पागल और बेवक़ूफ़ लोग हैं, मेरे रास्ते में रुकावट बन रहे हैं, मुझे तो इस वक़्त बादशाह के पास जाना है और उस से मुलाक़ात का सम्मान व शर्फ़ हासिल करना है, तो वह शख़्स उनकी

तरफ ध्यान भी नहीं देगा।

ख़्यालात का लाना गुनाह है

हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि को किसी ने लिखा कि हज़रत! जब मैं नमाज़ में खड़ा होता हूं तो तरह तरह के ख़्यालात आते रहते हैं, और इसकी वजह से परेशानी होती है कि मेरी नमाज़ तो कुछ भी नहीं। हज़रत ने उसके जवाब में लिखा कि "ख़्यालात का आना गुनाह नहीं, ख़्यालात का लाना गुनाह है" यानी अगर वे ख़्यालात खुद बखुद आ रहे हैं तो यह गुनाह नहीं है, हां जान बूझ कर इरादा करके दिल में ख़्यालात ला रहे हैं तो यह गुनाह है।

ख़्यालात का इलाज

और ख़्यालात और वस्वसों का इलाज ही यह है कि उन ख़्यालात की तरफ़ इल्तिफ़ात और तवज्जोह मत करो, जब तवज्जोह नहीं करोगे तो इन्शा अल्लाह ये ख़्यालात खुद बखुद दूर हो जायेंगे। बस अपना काम किये जाओ कि जब नमाज़ की नियत बांधो तो अपना ज़ेहन नमाज़ की तरफ़ लगाओ। हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने अपने मवाइज़ और मलफ़ूज़ात में यह नुक्ता वाज़ेह किया कि यह नमाज़ बज़ाते खुद मतलूब है, इसलिये अगर ग़ैर इख़्तियारी तौर पर ख़्यालात आ रहे हैं तो उसकी वजह से नमाज़ की नाक़द्री मत करो। नमाज़ी अक्सर यह सवाल करते हैं कि हम नमाज़ पढ़ते हैं लेकिन नमाज़ में मज़ा ही नहीं आता, लुत्फ़ ही नहीं आता, या पहले नमाज़ में बहुत लुत्फ़ और मज़ा आता था और अब वह लुत्फ़ आना बन्द हो गया। तो इसका जवाब यह है कि भाई! यह नमाज़ इसलिये फ़र्ज़ नहीं की गयी कि इसमें तुम्हें मज़ा और लुत्फ़ आया करे। बल्कि यह तो अल्लाह तआला की इबादत और बन्दगी का एक तरीक़ा है, अब अगर नमाज़ में मज़ा आ जाये तो यह अल्लाह तआला की नेमत है, और अगर मज़ा न आये तो उसकी वजह से नमाज़ की फ़ज़ीलत में ज़र्रा बराबर कमी नहीं आती। अगर तुम नमाज़ के अर्कान और

उसकी शर्तों और उसके आदाब पूरे तौर पर अदा कर रहे हो और सुन्नत के मुताबिक़ नमाज़ अदा कर रहे हो तो फिर सारी उम्र भी अगर मज़ा न आये तो इसमें तुम्हारा कोई नुक़सान नहीं। अगर नमाज़ में मज़ा आये तो भी नमाज़ पढ़नी है, अगर मज़ा न आये तो भी नमाज़ पढ़नी है।

दिल न लगने के बावजूद नमाज़ पढ़ना

बल्कि अगर नमाज़ में मज़ा नहीं आया और नमाज़ पढ़ने में मशक़्क़त महसूस हुई, लेकिन इसके बावजूद तुमने नमाज़ पढ़ी तो उस पर तुम्हारे लिये ज़्यादा सवाब लिखा जायेगा। इसलिये कि नमाज़ पढ़ने को दिल नहीं चाह रहा था बल्कि नफ़्स शरारत कर रहा था लेकिन तुमने ज़बरदस्ती अल्लाह की इबादत की ख़ातिर और उसकी इताअ़त की ख़ातिर नफ़्स पर जब्र करके नमाज़ पढ़ ली, तो इन्शा अल्लाह उस नमाज़ पर तुम्हें सवाब ज़्यादा मिलेगा। चुनांचे हज़रत मौलाना रशीद अहमद साहिब गंगोही रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि जिस शख़्स को सारी उम्र कभी नमाज़ में मज़ा न आये लेकिन फिर भी नमाज़ पढ़ता रहे, नमाज़ को छोड़े नहीं, मैं उसको दो बातों की मुबारक बाद देता हूं। एक इस बात की कि जब उसको नमाज़ में मज़ा नहीं आया लेकिन इसके बावजूद नमाज़ पढ़ता रहा तो इन्शा अल्लाह उसके अज्र में इज़ाफ़ा होगा, और उसको सवाब ज़्यादा मिलेगा। और दूसरे इस पर कि अगर उसको नमाज़ में मज़ा आता तो यह शुबह होता कि यह शायद नफ़्स के मज़े के ख़ातिर नमाज़ पढ़ रहा है, लेकिन जब नमाज़ में मज़ा आया ही नहीं तो अब यह शुबह ख़त्म हो गया। इसलिये मालूम हुआ कि यह नमाज़ सिर्फ़ अल्लाह के लिये पढ़ रहा है, क्योंकि उसमें इख़्लास ज़्यादा हो गया। इसकी वजह से अज्र व सवाब में इज़ाफ़ा हो जायेगा। इसलिये इस फ़िक्र में मत पड़ो कि मज़ा आया या नहीं, लुत्फ़ आया या नहीं।

इन्सान अमल का मुकल्लफ़ है

लोग ख़तों में लिखते हैं कि एक ज़माना था कि हम पहले नमाज़ पढ़ा करते थे तो बड़ी अजीब व ग़रीब कैफ़ियत होती थी। दुनिया और दुनिया की चीज़ों से बिल्कुल बेख़बर हो जाते थे, और अब लुत्फ़ जाता रहा और वह कैफ़ियत बाक़ी नहीं रही, कहीं ऐसा तो नहीं है कि शैतान ने मुझे मर्दूद बना दिया है। ख़ूब समझ लें कि ये सारी कैफ़ियतें जो ग़ैर इख़्तियारी हैं जिसमें इन्सान के इख़्तियार को दख़ल नहीं है, मज़ा आया या नहीं, यह इन्सान के इख़्तियार से बाहर है, मज़ा आना और लुत्फ़ आना और न आना इन्सान के इख़्तियार में नहीं, और इन्सान इसका मुकल्लफ़ भी नहीं। इसलिये कि इन्सान तो अमल का मुकल्लफ़ है, देखना यह है कि अमल किया या नहीं? और अगर अमल किया तो देखना यह है कि यह अमल मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत के मुताबिक़ किया या नहीं, अगर इस तरह अमल कर लिया तो चाहे कोई कैफ़ियत हासिल हुई या नहीं, मगर फ़र्ज़ से बरी हो गये, और तुम्हारा वह अमल मक़बूल हो गया। वजह यह है कि ये सारी कैफ़ियतें आनी जानी हैं, न इन पर अमल का क़बूल होना मौक़ूफ़ है और न ही इन पर नजात मौक़ूफ़ है। बस अगर अल्लाह तआला के फ़ज़्ल व करम से अमल की तौफ़ीक़ हो रही है तो इस पर अल्लाह तआला का शुक्र अदा करते रहो।

कैफ़ियतें न मक़सूद हैं न इख़्तियार में हैं

जो लोग हज या उमरा पर हरमैन शरीफ़ैन जाते हैं, आम तौर से उन पर मुख़्तलिफ़ कैफ़ियतें तारी होती हैं। जैसे यह बात मशहूर है कि जब बैतुल्लाह पर पहली नज़र पड़ती है तो उस पर रोने की कैफ़ियत तारी हो जाती है, या हंसी आ जाती है, या कोई दूसरी कैफ़ियत तारी हो जाती है। और जब मुल्तज़म पर पहुंचते हैं तो वहां पर भी रोना आता है, और गिर्या तारी हो जाता है, वग़ैरह वग़ैरह। तो

ये यब कैफ़ियतें पैदा होती हैं लेकिन ये कैफ़ियतें गैर इख़्तियारी हैं। अगर हासिल हो जायें तो ये अल्लाह तआला की नेमत हैं, और अगर हासिल न हों तो उस पर घबराने और परेशान होने की कोई बात नहीं। चुनांचे बाज़ लोग सिर्फ़ इस वजह से परेशान हो जाते हैं कि हम उमरा करने या हज करने गये, वहां तो हमारा दिल पत्थर हो गया, न तो हमें रोना आया, न हम पर गिर्या तारी हुआ, न आंसू निकले और न ही कोई और कैफ़ियत तारी हुई। ऐसा मालूम होता है कि हमारे ऊपर मरदूदियत ग़ालिब आ गयी है, और हम पर शैतानी असरात ग़ालिब आ गये, वग़ैरह वग़ैरह। इस क़िस्म के ख़्यालात दिल में आते हैं। याद रखिये! अल्लाह तआला तुम्हें इस बुनियाद पर अपनी बरगाह से नहीं निकालेंगे कि तुम्हें गैर इख़्तियारी तौर पर रोना क्यों नहीं आया? और न इस बात पर पकड़ करेंगे। बशर्तेकि यह अ़मल सही हो और जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत के मुताबिक़ हो, तो फिर रोना आये या न आये, कैफ़ियत तारी हो या न हो, लेकिन इन्शा अल्लाह, अल्लाह तआला के यहां वह हज व उमरा मक़बूल है और अज्र व सवाब का सबब है।

अ़मल सुन्नत के मुताबिक़ होना चाहिये

हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने बड़ी वज़ाहत के साथ यह बात इर्शाद फ़रमाई कि कैफ़ियात पर मदार नहीं, बल्कि अ़मल पर मदार है। अगर अ़मल सुन्नत के मुताबिक़ है तो इन्शा अल्लाह मन्ज़िल पर पहुंच जाओगे।

बर सिराते मुस्तक़ीम ऐ दिल कसे गुमराह नेस्त

यानी अगर सही रास्ते पर तुम्हारा क़दम है तो ऐ दिल! फिर तुम गुमराह नहीं हो सकते, चाहे ख़्यालात और वस्वसे किसी तरह के आ रहे हों, कैफ़ियात तारी हो रही हों, या न हो रही हों, चाहे लज़्ज़त आ रही हो या न आ रही हो।

एक रिटायर्ड शख़्स की नमाज़

मेरे हज़रत डा. अ़ब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि अल्लाह

तआला उनके दर्जों को बुलन्द फरमाये, आमीन। एक दिन फ़रमाने लगे कि एक शख़्स रिटायर्ड ज़िन्दगी गुज़ार रहा है, खाने पीने को सब कुछ मयस्सर है, बैंक बेलैन्स मौजूद है, रोज़गार और रोज़ी रोटी और दुनिया कमाने की कोई फ़िक्र नहीं है, न उसको नौकरी पर जाना है, न उसको तिजारत करनी है, न दुकान खोलनी है। उसका मामूल यह है कि जैसे ही किसी नमाज़ की अज़ान हुई तो अज़ान होते ही वह घर से निकल गया, मस्जिद में पहुंच कर बहुत इत्मीनान से अच्छे तरीक़े से वुज़ू किया और फिर तहिय्यतुल मस्जिद की दो रक्अ़त अदा कीं, और फिर सुन्नतें अदा कीं और फिर जमाअ़त के इन्तिज़ार में बैठा ज़िक्र कर करता रहा, जब जमाअ़त खड़ी हुई तो उसने ख़ुशू और ख़ुज़ू के साथ नमाज़ अदा की, उसका दिल व दिमाग़ सब नमाज़ की तरफ़ मुतवज्जह हैं, जब वह तिलावत करता है तो उसमें लुत्फ़ आता है, जब ज़िक्र करता है तो उसमें लुत्फ़ आता है, रुकू में भी और सज्दे में भी लुत्फ़ आ रहा है, इस तरह पूरी नमाज़ बहुत सुकून और इत्मीनान के साथ अदा की, फिर बाद की सुन्नतें अदा कीं, और फिर इत्मीनान से दिल लगा कर दुआ की, फिर वापस घर आ गया, और फिर दूसरी नमाज़ के इन्तिज़ार में दिल लगा हुआ है कि कब अज़ान हो और कब मस्जिद में जाऊं, एक आदमी तो यह है।

ठेला लगाने वाले की नमाज़

दूसरा शख़्स बीवी बच्चों वाला है, उसके ऊपर हज़ार तरह की ज़िम्मेदारियां और हुक़ूक़ है। उन हुक़ूक़ की अदाएगी के लिये और अपना और अपने बीवी बच्चों का पेट पालने के लिये ठेला लगाता है और आवाज़ लगा कर सामान बेचता है, अब लोग उसके ठेले के आस पास खड़े हुए सामान ख़रीद रहे हैं, इतने में अज़ान हो गयी, अब वह जल्दी जल्दी लोगों को निपटाने की कोशिश कर रहा है, यहां तक कि जमाअ़त का वक़्त आ गया। तो उसने जल्दी से अपना ठेला एक तरफ़ किया और उसके ऊपर कपड़ा डाला और भागते हुए

मस्जिद में पहुंचा, जल्दी से वुज़ू किया और जाकर इमाम के पीछे खड़ा हो गया और जल्दी से नियत बांध ली। अब उसका दिल कहीं दिमाग़ कहीं, ठेले की फ़िक्र लगी हुई है, और ग्राहकों की फ़िक्र लगी हुई है। लेकिन उन सब के बावजूद अल्लाह के सामने खड़ा हो गया, और जमाअत से नमाज़ अदा की, फिर सुन्नतें अदा कीं और जल्दी से जाकर दोबारा ठेला लगा कर खड़ा हो गया। यह दूसरा आदमी है।

किसकी नमाज़ में रूहानियत ज़्यादा है?

फिर फ़रमाया कि बताओ उन दोनों में से किसकी नमाज़ रूहानियत से ज़्यादा क़रीब है? बज़ाहिर यह मालूम होता है कि पहले शख़्स की नमाज़ में रूहानियत ज़्यादा है, इसलिये कि वह अज़ान के वक़्त घर से निकला, मस्जिद में आकर इत्मीनान से वुज़ू किया तहिय्यतुल मस्जिद पढ़ी, सुन्नतें पढ़ीं और इत्मीनान और ख़ुशू व ख़ुज़ू के साथ नमाज़ अदा की। लेकिन अल्लाह तआला के नज़्दीक उस दूसरे आदमी की नमाज़ रूहानियत के ज़्यादा क़रीब है। अगरचे उसने भागा दौड़ी की हालत में नमाज़ पढ़ी। वजह इसकी यह है कि पहले शख़्स के ऊपर कोई ज़िम्मेदारी नहीं थी, और उसके ऊपर कोई फ़िक्र नहीं था। उसने अपने आपको हर ज़िम्मेदारी से फ़ारिग़ कर लिया था, और उसके नतीजे में उसको नमाज़ में बहुत लज़्ज़त भी आ रही थी और लुत्फ़ भी आ रहा था। लेकिन यह दूसरा शख़्स अपना वह ठेला छोड़ कर आ रहा है जिस ठेले पर उसकी अपनी रोज़ी रोटी और उसके घर वालों का गुज़ारा मौक़ूफ़ है, लेकिन जब अल्लाह तआला के दरबार में हाज़री का वक़्त आ गया तो वह ठेला उसको अल्लाह तआला के दरबार में हाज़िर होने से ग़ाफ़िल नहीं कर सका, उस ठेले को छोड़ कर जमाअत में आ खड़ा हो गया और नमाज़ अदा कर ली। उस शख़्स का अमल ज़्यादा मशक़्क़त वाला और ज़्यादा मक़बूल और ज़्यादा अज्र का सबब है। अगरचे उसके ऊपर कैफ़ियत तारी नहीं हुई और न उसको लज़्ज़त आई, लेकिन

उसके नतीजे में अल्लाह तआला उसके अज्र व सवाब में कमी नहीं करेंगे, इन्शा अल्लाह तआला।

मायूस मत हो जाओ

आजकल लोग आम तौर पर गैर इख़्तियारी चीज़ों के पीछे पड़े रहते हैं, और इसी वजह से परेशान और मायूस हो जाते हैं। और फिर मायूसी का नतीजा यह होता है कि आख़िरकार शैतान वह अमल छुड़ा देता है। शैतान उसको यह सिखाता है कि जब तेरी नमाज़ किसी काबिल नहीं है तो पढ़ने से क्या फ़ायदा? इस गुमराही में मुब्तला कर देता है। इसलिये गैर इख़्तियारी बातों के पीछे मत पड़ो। और नमाज़ पढ़ने का जो तरीका नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सिखा दिया है बस उसी तरीके से नमाज़ पढ़ने की फ़िक्र करो और अपनी तरफ़ से ध्यान नमाज़ की तरफ़ लगाने की कोशिश करते रहो, उसके बाद अगर कैफ़ियत तारी हो या न हो, नमाज़ में लज़्ज़त आये या न आये, उस से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता, अल्लाह तआला के यहां वह नमाज़ मक़बूल है।

वस्वसों पर खुश होना चाहिये

बहर हाल इस हदीस में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बता दिया कि ये वस्वसे ईमान की निशानी हैं, और अल्लाह तआला ने दिल में वस्वसों के आने को कोई गुनाह क़रार नहीं दिया। हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने इस हदीस की जो तश्रीह की है वह यह है कि "इन दोनों हदीसों में गैर इख़्तियारी बातों पर पकड़ न होना ज़िक्र किया गया है। बल्कि इस से बढ़ कर यह कि इन हदीसों में वस्वसों पर ख़ुश होने की तरफ़ इशारा है"। यानी अगर दिल में वस्वसे आ रहे हैं, मगर उन वस्वसों पर अमल नहीं हो रहा है तो उन वस्वसों पर ख़ुश होना चाहिये। इसलिये कि ये वस्वसे तुम्हारे ईमान की निशानी हैं। किसी काफ़िर के दिल में ये वस्वसे नहीं आते, बल्कि ईमान वाले के दिल में वस्वसे आते हैं।

इसलिये तुम उन पर खुश हो जाओ। फिर आगे फरमाया कि उन वस्वसों से नजात की यही तदबीर है कि उनकी कुछ परवाह न करे, बल्कि उन पर खुश हो। एक बुज़ुर्ग का क़ौल है कि "शैतान को मोमिन की खुशी गवारा नहीं। जब शैतान मोमिन को वस्वसों पर खुश होता हुआ देखेगा तो वस्वसे डालना छोड़ देगा"।

वस्वसा की तारीफ़

लेकिन यह बात याद रखनी चाहिये कि वस्वसा वह है जो ख़ुद बख़ुद दिल में आ जाये, लेकिन अपनी तरफ़ से सोच कर वस्वसा लाना या गुनाह का तसव्वुर करना या गुनाह का इरादा दिल में लाना, यह वस्वसा नहीं है बल्कि खुद एक अमल है, और यह अमल अधिकतर ख़ुद गुनाह होता है। इसलिये अपनी तरफ़ से सोच कर क़स्द और इरादा करके वस्वसा न लाये, और जो वस्वसा ख़ुद बख़ुद आ जाये उसकी परवाह न करे।

ख़्यालात से बचने का दूसरा इलाज

और ये ख़्यालात और वस्वसे जो इन्सान क़स्द और इरादा करके दिल में लाता है, उस से बचने का दूसरा तरीक़ा यह है कि जब कभी इस क़िस्म का ख़्याल दिल में पैदा हो, उस वक़्त अपने आपको किसी और काम में लगा ले। इसलिये कि ये वस्वसे इस तरह दूर नहीं होते कि आदमी लाठी लेकर उनके पीछे पड़ जाये, बल्कि इसका तरीक़ा यह है कि आदमी अपने आपको किसी और काम में लगा ले, किसी और मश्ग़ले में अपने आपको मश्ग़ूल कर दे। इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जो दुआ तल्क़ीन फ़रमाई है वह दुआ ख़ूब ज़्यादा किया करे, अल्लाह तआला अपनी रहमत से हम सब के हक़ में वह दुआ क़बूल फ़रमा ले, अमीन। वह दुआ यह है:

"اللهم اجعل وساوس قلبی خشیتك وذكرك واجعل همتی وهوى فيما تحب وترضى"

क्या अजीब व ग़रीब दुआ है। आप ऐसी ऐसी दुआयें तल्क़ीन फ़रमा गये कि इन्सान उनका तसव्वुर नहीं कर सकता। यानी ऐ

अल्लाह! मेरे दिल में आने वाले ख़्यालात को अपने डर और अपने ज़िक्र में तब्दील फ़रमा दीजिये। इन्सान की ख़ासियत यह है कि उसका दिमाग़ कभी भी ख़्यालात से ख़ाली नहीं होता, कोई न कोई ख़्याल उसके ज़ेहन में हर वक़्त रहता है। जैसे हाथों से कुछ काम कर रहा है, लेकिन दिमाग़ कहीं और लगा हुआ है, और ख़्यालात बराबर आ रहे हैं, कोई लम्हा ख़्यालात से ख़ाली नहीं होता। इसलिये यह दुआ करो कि ये जो फ़ुज़ूल ख़्यालात आ रहे हैं जिनका कोई फ़ायदा नहीं है, या अल्लाह! ये ख़्यालात बदल कर आपके ज़िक्र और आपके ख़ौफ़ में तब्दील हो जायें। जो ख़्याल भी आये वह या तो आपका हो या आपके ख़ौफ़ का हो, आपकी याद का हो, आपके सामने हाज़िर होने का हो, आपकी जन्नत की नेमतों का हो, दोज़ख़ के अज़ाब का हो, और आपके दीन के अह्काम का ख़्याल हो। और ऐ अल्लाह! मेरे दिल के ख़्यालात और मेरी ख़्वाहिशों का रुख़ मोड़ कर उन चीज़ों की तरफ़ कर दीजिये जो आपको पसन्द हों, और दिल सिर्फ़ उसी चीज़ की तरफ़ माइल हो जो आपको पसन्द हो। यह दुआ नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तल्क़ीन फ़रमाई। अल्लाह तआला इस दुआ को हम सब के हक़ में क़बूल फ़रमा ले, आमीन।

واخر دعوانا ان الحمد للہ رب العالمین

गुनाहों के नुक़सानात

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

"عن ابن عباس رضى الله تعالىٰ عنهما انه قال له رجل: رجل قليل العمل قليل الذنوب اعجب اليك او رجل كثير العمل كثيرالذنوب، قال لا اعدل بالسلامة" (كتاب الزهد)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के चचेरे भाई थे। इसलिये कि हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के चचा थे और यह हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास उनके बेटे थे। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक ज़माने में यह बहुत कम उम्र थे। जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इन्तिक़ाल हुआ तो उस वक़्त उनकी उम्र तक़रीबन दस साल थी, लेकिन कम उम्र होने के बावजूद अल्लाह तआ़ला ने उनको इल्म का बहुत ऊंचा रुतबा अ़ता फ़रमाया था, उसकी वजह यह थी कि एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनके हक़ में दुआ़ फ़रमाई कि:

اللّٰهم علمه الكتاب و فقهه فى الدين

ऐ अल्लाह! इनको क़ुरआने करीम का इल्म अ़ता फ़रमा, और दीन में इनको समझ अ़ता फ़रमा। अगरचे हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इन्तिक़ाल के वक़्त उनकी उम्र सिर्फ़ दस साल

थी, अब दस साल की उम्र ही क्या होती है, लेकिन एक तरफ़ तो उन्होंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने की बातें अपने दिल व दिमाग़ पर नक़्श की हुई थीं। फिर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के विसाल के बाद उन्होंने सोचा कि अब तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इस दुनिया से तश्रीफ़ ले जा चुके हैं, लेकिन बड़े बड़े सहाबा किराम अभी तश्रीफ़ फ़रमा हैं, मैं उनकी ख़िदमत में जाकर नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इर्शादात और आपकी हदीसें हासिल करूं। चुनांचे सहाबा-ए-किराम के पास जाते और उनके पास जाने के लिये सफ़र करते और मशक़्क़तें उठाते, और इस तरह उन्होंने बड़े बड़े सहाबा किराम से इल्म हासिल किया और इस मक़ाम पर पहुंचे कि आज उन्हें "इमामुल मुफ़स्सिरीन" कहा जाता है। यानी तमाम मुफ़स्सिरीन के इमाम। इसलिये कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनको दुआ़ दे दी थी कि ऐ अल्लाह! इनको अल्लाह की किताब का इल्म अ़ता फ़रमा। आज क़ुरआन की तफ़सीर के बारे में उनसे ज़्यादा क़ाबिले एतिमाद बात किसी की नहीं, यह उन्हीं का क़ौल है जो मैंने आपके सामने पढ़ा।

पसन्दीदा शख़्स कौन है?

वह यह कि एक शख़्स ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से पूछा कि यह बताइये कि एक शख़्स अ़मल तो कम करता है, यानी नफ़्ली इबादतें और नफ़िल नमाज़ बहुत ज़्यादा नहीं पढ़ता, ज़्यादा तर फ़राइज़ व वाजिबात पर इक्तिफ़ा करता है, नफ़्ली इबादतें, ज़िक्र व अज़कार, वज़ाइफ़ और तस्बीहात ज़्यादा नहीं करता, लेकिन उसके गुनाह भी कम हैं, ऐसा शख़्स आपको ज़्यादा पसन्द होगा, या आपको वह शख़्स ज़्यादा पसन्द होगा जिसकी नफ़्ली इबादतें भी ज़्यादा हैं और गुनाह भी ज़्यादा हैं? जैसे तहज्जुद की नमाज़ भी पढ़ता है, इश्राक़ की नमाज़ भी पढ़ता है, अव्वाबीन भी

पढ़ता है, तिलावत भी खूब करता है, वजाइफ़ और तस्बीहात भी खूब करता है, लेकिन साथ में गुनाह भी करता है। आपके नज़्दीक उन दोनों में से कौन बेहतर है? पहले शख़्स का अमल कम मगर गुनाह भी कम, दूसरे शख़्स के आमाल ज़्यादा मगर गुनाह भी ज़्यादा। जवाब में हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि गुनाहों से हिफ़ाज़त के बराबर मैं किसी चीज़ को नहीं समझता। यानी आदमी गुनाहों से महफ़ूज़ हो जाये, यह इतनी बड़ी नेमत और इतना बड़ा फ़ायदा है कि दुनिया का कोई अमल इसके बराबर नहीं। अगर एक शख़्स गुनाहों से बचने का एहतिमाम करे तो नफ़्ली इबादतें उसके मुक़ाबले में कोई हैसियत नहीं रखतीं।

असल चीज़ गुनाहों से बचना है

इस हदीस से यह बतलाना मक़सूद है कि ये जितनी नफ़्ली इबादतें हैं, ये अपनी जगह पर बड़ी फ़ज़ीलत की चीज़ें हैं, लेकिन इन नफ़्ली इबादतों के भरोसे पर अगर इन्सान यह सोचे कि मैं तो नफ़्ली इबादतें बहुत करता हूं और फिर उसके नतीजे में गुनाहों से परहेज़ न करे तो यह बड़े धोखे की बात है। असल चीज़ यह है कि इन्सान अपनी ज़िन्दगी के अन्दर गुनाहों से परहेज़ करने की फ़िक्र करे, गुनाहों से परहेज़ करने के बाद फ़र्ज़ करें अगर उसको ज़्यादा नफ़्ली इबादतें करने का मौक़ा नहीं मिला तो इस सूरत में उसको कोई घाटा और नुक़सान नहीं, अल्लाह तआला के यहां इन्शा अल्लाह वह नजात पा जायेगा। लेकिन अगर नफ़्ली इबादतें तो ख़ूब करता है और साथ में गुनाह भी बहुत करता है तो उसकी नजात की कोई गारन्टी नहीं, क्योंकि यह बड़ा ख़तरनाक मामला है।

गुनाह छोड़ने की फ़िक्र नहीं

आजकल हमारे समाज में यह ध्यान बहुत कम हो गया है, जब किसी के दिल में दीन पर चलने का जज़्बा पैदा होता है और अल्लाह तआला की तरफ़ से उसकी तौफ़ीक़ होती है तो उसको यह

फ़िक्र होती है कि मुझे कुछ वज़ाइफ़ बता दिये जायें, कुछ मामूलात सिखा दिये जायें, और औराद व अज़्कार तल्क़ीन कर दिये जायें, और यह बता दिया जाये कि नफ़्ली इबादत कैसे करूं, और किस वक़्त करूं। बस चन्द ज़ाहिरी मामूलात की तरफ़ तवज्जोह हो जाती है और फिर मामूलात को पूरा करने में दिन रात लगा रहता है। लेकिन उसको यह फ़िक्र नहीं होती कि मेरी सुबह से शाम तक की ज़िन्दगी में कितने काम गुनाह के हो रहे हैं? और कितने काम अल्लाह की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ हो रहे हैं। अच्छे ख़ासे पढ़े लिखे दीनदार लोगों को देखा कि वे पहली सफ़ के पाबन्द हैं, मस्जिद में पाबन्दी से जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ते हैं, वज़ीफ़ों के भी पाबन्द हैं, नफ्ली इबादतें और तहज्जुद और इश्राक़ की नमाज़ें भी बड़ी पाबन्दी से पढ़ते हैं, लेकिन उनको इसकी फ़िक्र नहीं कि घर के अन्दर जो गुनाहों का बाज़ार गर्म है, उसको किस तरह ठीक किया जाये? और जब बाज़ार जाते हैं तो वहां हलाल व हराम की फ़िक्र नहीं होती। जब गुफ़्तगू करते हैं तो ग़ीबत और झूठ की फ़िक्र नहीं करते, अगर उनके घर में ना जायज़ और हराम चीज़ें मौजूद हैं तो उनको बाहर निकालने की कोई फ़िक्र नहीं है। घर में फ़िल्में देखी जा रही हैं, ना जायज़ प्रोग्राम देखे जा रहे हैं। गाना बजाना हो रहा है, उसकी तरफ़ कोई ध्यान नहीं। लेकिन वज़ाइफ़ की तरफ़ ध्यान है, कि कोई वज़ीफ़ा बता दो। हालांकि ये गुनाह इन्सान के लिये तबाही का सबब हैं, इनसे बचने की फ़िक्र पहले करनी चाहिये।

नफ़्ली इबादतों और गुनाहों की बेहतरीन मिसाल

इसकी मिसाल यों समझें कि ये जितनी नफ़्ली इबादतें हैं, चाहे वह नफ़्ली नमाज़ हो, तिलावत हो, या ज़िक्र व तस्बीह हो, ये सब टॉनिक हैं। इस से ताक़त हासिल होती है। जैसे कोई शख़्स जिस्म की ताक़त के लिये कोई टॉनिक इस्तेमाल करे। और ये गुनाह ज़हर हैं। अब अगर एक शख़्स टॉनिक भी ख़ूब खाये और ज़हर भी ख़ूब

खाये, तो इसका नतीजा यह होगा कि टॉनिक उसके ऊपर असर नहीं करेगा, लेकिन ज़हर असर करेगा और उस शख़्स की तबाही का ज़रिया बन जायेगा। और एक शख़्स वह है जो कोई टॉनिक और ताक़त की दवा तो इस्तेमाल नहीं करता, सिर्फ़ दाल रोटी पर इक्तिफ़ा करता है, लेकिन जो चीज़ें सेहत के लिये नुक़सान देने वाली हैं, उनसे परहेज़ करता है, तो यह आदमी सेहत मन्द (स्वस्थ) रहेगा, इसके बावजूद कि यह टॉनिक नहीं खाता। पहला शख़्स जो टॉनिक भी खाता है और साथ में सेहत को नुक़सान देने वाली चीज़ से परहेज़ नहीं करता, यह लाज़मी तौर पर बीमार पड़ जायेगा और एक दिन हलाक हो जायेगा। नफ़्ली इबादतों और गुनाहों की बिल्कुल यह मिसाल है। इसलिये यह फ़िक्र होनी चाहिये कि हमारी सुबह से लेकर शाम तक की ज़िन्दगी से गुनाह निकल जायें, बुराइयां और मासियतें निकल जायें। जब तक ये चीज़ें नहीं निकलेंगी, उस वक़्त तक ये नफ़्ली इबादतें हमारे हक़ में मुफ़ीद नहीं हो सकतीं।

इस्लाह के इच्छुकों के लिये पहला काम

आज तो मामूल यह है कि जब कोई शख़्स किसी शैख़ के पास इस्लाही ताल्लुक़ क़ायम करने जाता है तो वह शैख़ उसको उसी वक़्त यह बता देता है कि तुम यह मामूलात अन्जाम दिया करो, इतना ज़िक्र कर लिया करो, इतनी तस्बीहें पढ़ लिया करो। लेकिन हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अ़ली साहिब थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि का मामूल यह था कि जब उनके पास कोई शख़्स अपनी इस्लाह की ग़र्ज़ से आता तो उसको ज़िक्र व अज़कार और तस्बीहात वग़ैरह कुछ न बताते। बल्कि सब से पहले उस से यह फ़रमाते कि गुनाहों को छोड़ दो। चुनांचे इस राह में सब से पहला काम तौबा को पूरा करना का है। यानी सब से पहले इन्सान अपने तमाम गुनाहों से तौबा करे कि या अल्लाह! जो गुनाह मुझ से पहले हो चुके हैं, अपनी रहमत से उनको माफ़ फ़रमा दीजिये और आइन्दा के लिये पक्का इरादा करता हूं कि मैं आइन्दा यह गुनाह नहीं

करूंगा। फिर आइन्दा के लिये गुनाहों से बचने की पाबन्दी करे। फिर यह नहीं कि बस सिर्फ़ चन्द मशहूर गुनाहों से बचने की पाबन्दी कर ली, हर एक गुनाह से बचने की पाबन्दी करे। कुरआने करीम में अल्लाह तआला ने इर्शाद फ़रमाया:

"وذروا ظاهر الاثم وباطنه"

"यानी ज़ाहिर के गुनाह भी छोड़ो और बातिन के गुनाह भी छोड़ो"।

"ان الذين يكسبون الاثم سيجزون ماكانوايقترفون" (سورة الانعام:١٢٠)

"यानी जो लोग गुनाहों का जुर्म करते हैं, क़ियामत के दिन उनके उन आमाल की सज़ा दी जायेगी जो वे लोग यहां पर किया करते थे"।

हर क़िस्म के गुनाह छोड़ दो

इसलिये कोई गुनाह ऐसा नहीं है जिसकी तरफ़ से बे तवज्जही बरती जाये, न ज़ाहिर का गुनाह न बातिन का गुनाह। यह न हो कि चन्द मोटे मोटे गुनाह तो छोड़ दिये, और बाक़ी गुनाहों के छोड़ने की तरफ़ कोई तवज्जोह नहीं है। जैसे मज्लिसों में ग़ीबत हो रही है, दिल दुखाए जा रहे हैं, दूसरों को तक्लीफ़ पहुंचाई जा रही है, या दूसरों से हसद और बुग्ज़ हो रहा है, या दिल में तकब्बुर भरा हुआ है, माल की मुहब्बत, पद की मुहब्बत, दुनिया की मुहब्बत दिल में भरी हुई है, फिर तो गुनाह छोड़ना न हुआ। हर वह काम जिसको अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने गुनाह क़रार दिया है, उनको छोड़ना होगा, इसकी फ़िक्र इन्सान को होनी चाहिये।

बीवी बच्चों को गुनाह से बचाओ

एक बात और अ़र्ज़ कर दूं कि ये गुनाह उस वक़्त तक नहीं छूट सकते जब तक इन्सान अपने माहौल को दुरुस्त करने की फ़िक्र न करे। कोई शख़्स अगर यह चाहे कि मैं गुनाहों से महफ़ूज़ हो जाऊं और बीवी बच्चे ग़लत रास्ते पर जा रहे हैं, उनकी तरफ़ कोई ध्यान

और तवज्जोह न करे। याद रखिये! इस तरीक़े से कभी भी गुनाह नहीं छूट सकते। तुम गुनाह से बचने की कितनी भी कोशिश कर लो लेकिन अगर घर का माहौल ख़राब है और बीवी बच्चे ग़लत रास्ते पर जा रहे हैं, और तुम्हें उनकी फ़िक्र नहीं तो वे बीवी बच्चे एक न एक दिन तुम्हें ज़रूर गुनाह के अन्दर मुब्तला कर देंगे। इसलिये इन्सान के लिये ख़ुद गुनाहों से बचना जितना ज़रूरी है, उतना ही बीवी बच्चों को भी बचाना ज़रूरी है। और हर वक़्त ध्यान और फ़िक्र होनी चाहिये कि बीवी बच्चे किसी वक़्त गुनाह के अन्दर मुब्तला न हो जायें।

औरतों के क़िरदार की अहमियत

इस मामले में औरतों का क़िरदार बहुत अहमियत रखता है। अगर औरतों के दिल में यह फ़िक्र पैदा हो जाये कि हमें अपनी ज़िन्दगी अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अह्काम के मुताबिक़ गुज़ारनी है और गुनाहों से बचना है, तो फिर घरों का माहौल दुरुस्त हो जाये। इसलिये कि औरत घर की बुनियाद होती है, अगर औरत के दिल में अल्लाह की इताअत और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इताअत का जज़्बा पैदा हो जाये तो पूरा घर संवर जाये। लेकिन अगर औरत का यह हाल हो कि उसको पर्दे की कोई फ़िक्र नहीं है, सर खुला हुआ है, बाल खुले हुए हैं, बुरी बातों के अन्दर ज़ेहन लगा हुआ है और फ़ुज़ूल चीज़ों में मश्ग़ूल है, तो इसका नतीजा यह होगा कि घर का माहौल ख़राब होगा। इसलिये औरतों पर यह ज़िम्मेदारी लागू होती है कि वे गुनाहों के कामों को छोड़ दें।

ना फ़रमानी और गुनाह क्या चीज़ हैं?

ये गुनाह क्या चीज़ हैं? और गुनाहों के अन्जाम क्या होते हैं? पहले इसको समझना ज़रूरी है। गुनाह के मायने हैं "ना फ़रमानी" जैसे तुम्हारे एक बड़े ने तुम्हें हुक्म दिया कि यह काम इस तरह करो,

और तुम कहो कि मैं यह काम नहीं करता, या बड़े ने कहा कि इस बात से और इस काम से बचो, और तुम कहो कि मैं यह काम ज़रूर करूंगा। यह बड़े की बात न मानना "ना फ़रमानी" कहलाता है। अगर यह "ना फ़रमानी" अल्लाह तआला और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हुक्म के साथ की जाये तो इसी का नाम "गुनाह" है। और अल्लाह तआला की ना फ़रमानी के असरात इतने दूरगामी और इतने ख़राब और बुरे हैं कि उनका अन्दाज़ा करना मुश्किल है।

गुनाह की पहली ख़राबी "एहसान भुला देना"

गुनाह की सब से पहली ख़राबी "एहसान भुला देना" है। इस लिये कि जिस मुहि्सन ने इन्सान को वजूद बख़्शा है और हर वक़्त इन्सान उसकी नेमतों में डूबा हुआ है, सर से लेकर पांव तक अल्लाह तआला की नेमतें उसके ऊपर बरस रही हैं, जिस्म के एक एक अंग को लेकर अन्दाज़ा करो कि उसकी कितनी क़ीमत और कितनी अहमियत है। चूंकि ये नेमतें मुफ़्त मिली हुई हैं इसलिये दिल में इनकी कोई वक़्अत और क़द्र नहीं। ख़ुदा न करे अगर किसी वक़्त इन जिस्म के अंगों में से किसी एक अंग को भी नुक़सान पहुंच जाये, तब पता चले कि यह कितनी बड़ी नेमत है, और यह नुक़सान कितना बड़ा है। यह आंख बड़ी नेमत है, यह कान कितनी बड़ी नेमत है, यह ज़बान कितनी बड़ी नेमत है, यह सेहत कितनी बड़ी नेमत है, यह रिज़्क़ जो सुबह व शाम खाने के लिये अल्लाह तआला अता फ़रमा रहे हैं यह कितनी बड़ी नेमत है। तो जिस अज़ीम मुहि्सन और नेमत देने वाले की नेमतों ने हमें ढांप लिया है, उसका सिर्फ़ यह कहना कि तुम लोग सिर्फ़ चन्द बातों से परहेज़ कर लो और बाज़ आ जाओ। लेकिन तुम से इतना छोटा सा काम नहीं होता। इसलिये "गुनाह" की सब से पहली ख़राबी एसान को भुला देना, नाशुक्री और मुहि्सन का हक़ अदा न करना है।

गुनाह की दूसरी ख़राबी "दिल पर ज़ंग लगना"

"गुनाह" की दूसरी ख़राबी यह है कि हदीस शरीफ़ में नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि जब इन्सान पहली बार गुनाह करता है तो उसके दिल पर एक काला नुक़्ता लगा दिया जाता है। उस नुक़्ते की हक़ीक़त क्या है, उसको तो अल्लाह तआला ही बेहतर जानते हैं। और जब दूसरा गुनाह करता है तो दूसरा नुक़्ता लगा दिया जाता है, जब तीसरा गुनाह करता है तो तीसरा नुक़्ता लगा दिया जाता है। अगर उस दौरान वह तौबा कर ले तो ये नुक़्ते मिटा दिये जाते हैं। लेकिन अगर वह तौबा न करे बल्कि बराबर गुनाह करता रहे और गुनाह करता ही चला जाये तो आहिस्ता आहिस्ता वे काले नुक़्ता उसके पूरे दिल को घेर लेते हैं, और फिर वे नुक़्ते ज़ंग की सूरत इख़्तियार कर लेते हैं, और दिल को ज़ंग लग जाता है। और जब दिल को ज़ंग लग जाता है तो उसके बाद उसके अन्दर हक़ बात मानने की सलाहियत ही नहीं रहती। फिर उस पर ग़फ़लत का वह आलम तारी होता है कि फिर गुनाह के गुनाह होने का एहसास मिट जाता है, और गुनाहों की ख़राबियों का एहसास ख़त्म हो जाता है। गोया कि इन्सान की अक़्ल मारी जाती है।

गुनाह के तसव्वुर में मोमिन और फ़ासिक़ का फ़र्क़

एक रिवायत में हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि वह मोमिन जो अब तक गुनाह का आदी नहीं है, वह गुनाह को ऐसा समझता है जैसे पहाड़ उसके सर पर टूटने वाला है। और फ़ासिक़ व फ़ाजिर गुनाह को इतना हल्का और मामूली समझता है जैसे कोई मक्खी नाक पर आकर बैठ गयी और उसने हाथ मार कर उसको उड़ा दिया। यानी वह गुनाह को बहुत मामूली समझता है और उसके करने के बाद उस पर उसको कोई नदामत और शर्मिन्दगी नहीं होती। लेकिन एक मोमिन जिसको अल्लाह तआला ने

ईमान की बर्कतें अता फ़रमाई हैं, वह गुनाह को एक पहाड़ ख़्याल करता है। अगर ग़लती से कोई गुनाह उस से हो जाये तो उसके सर पर एक पहाड़ टूट पड़ता है, जिसके नतीजे में वह ग़म और सदमे में मुब्तला हो जाता है।

नेकी छूटने पर मोमिन का हाल

गुनाह तो दूर की बात है, अगर एक मोमिन को नेकी करने का मौक़ा मिले मगर वह मौक़ा हाथ से निकल जाये, तो उसकी वजह से भी उस पर ग़म का पहाड़ टूट पड़ता है, कि हाय मुझे नेकी करने का यह मौक़ा मिला था मगर अफ़सोस कि मुझ से यह मौक़ा छूट गया। इसी के बारे में मौलाना रूमी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं:

बर दिले सालिक हज़ारां ग़म बुवद
गर ज़-बाग़े दिल ख़लाले कम बुवद

अगर सालिक के दिल के बाग़ में से एक तिन्का भी कम हो जाये यानी नेकी करने के मौक़े मिले थे मगर उनमें से किसी वक़्त एक नेकी न कर सका, तो उस वक़्त सालिक के दिल पर ग़म के हज़ारों पहाड़ टूट पड़ते हैं, कि अफ़सोस मुझ से यह नेकी छूट गयी। जब नेकी छूटने पर इतना सदमा होता है तो गुनाह हो जाने पर क्या सदमा नहीं होगा? बल्कि उस से कहीं ज़्यादा सदमा होगा। अल्लाह तआ़ला उस हालत से बचाए कि जब गुनाहों की वजह से दिल पर नुक़्ते लगते चले जाते हैं, तो उसका नतीजा यह होता है कि वह गुनाह को इतना मामूली समझता है जैसे मक्खी नाक पर आकर बैठी और उसको उड़ा दिया, और उस गुनाह पर कोई सदमा और ग़म ही नहीं होता। बहर हाल गुनाहों की एक ख़राबी यह है कि वे इन्सान को ग़ाफ़िल बना देते हैं और उनके ज़रिये दिल पर पर्दे पड़ जाते हैं।

गुनाह की तीसरी ख़राबी "अंधेरी और तारीकी"

चूंकि हम लोग गुनाह के माहौल के आदी हो चुके हैं, इस वजह से इन गुनाहों की अंधेरी और कराहियत दिलों से मिट चुकी है, वर्ना

हर गुनाह में ऐसी अंधेरी और ऐसी कराहियत है कि अगर अल्लाह तआला सही कामिल ईमान अता फ़रमाये तो इन्सान उस अंधेरी और कराहियत को बर्दाश्त न कर सके। हज़रत मौलाना मुहम्मद याकूब साहिब नानौतवी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि एक बार ग़लती से किसी मौके पर हराम आमदनी का एक लुक़्मा मुंह में चला गया, जिसकी वजह यह पेश आई कि एक साहिब ने दावत की, उनके यहां खाने के लिये चले गये, बाद में पता चला कि उसकी आमदनी हराम की थी। फ़रमाते थे कि दो महीने तक उस हराम लुक़्मे की अंधेरी अपने दिल में महसूस करता रहा, और उस अंधेरी का नतीजा यह था कि उस दो महीने के अर्से में बार बार दिल में गुनाह के जज़्बे और तकाज़े पैदा होते रहे। कभी तकाज़ा होता कि फ़लां गुनाह कर लूं, कभी तकाज़ा होता कि फ़लां गुनाह कर लूं। यह सब एक गुनाह का असर था और उसकी अंधेरी थी।

गुनाहों के आदी हो जाने की मिसाल

हमारे दिलों में इन गुनाहों की अंधेरी और कराहियत इसलिये महसूस नहीं होती कि हम इन गुनाहों के आदी हो चुके हैं। इसकी मिसाल यों समझें जैसे एक बदबूदार घर हो और उस घर में बदबू फैल रही हो, सड़ी हुई चीज़ें उस घर में पड़ी हुई हों। अगर बाहर से कोई शख़्स उस घर के अन्दर जायेगा तो उसके लिये अन्दर जाकर पल भर भी खड़ा होना मुश्किल होगा। लेकिन एक शख़्स उसी बदबूदार मकान के अन्दर ही रहता है, तो उसको बदबू का एहसास नहीं होगा, इसलिये कि वह बदबू का आदी हो चुका है और उसके अन्दर ख़ुशबू और बदबू की तमीज़ ही नहीं रही, इसलिये अब वह बहुत आराम से उस मकान में रहता है। अगर कोई शख़्स उस से कहे कि तुम इतने गन्दे और बदबूदार मकान में रहते हो, तो वह उसको पागल कहेगा, और कहेगा कि मैं तो बहुत आराम से इस मकान में रहता हूं, मुझे तो यहां कोई तक्लीफ़ नहीं है। इसलिये कि

वह शख़्स उस बदबू का आदी हो चुका है। और जिस शख़्स को अल्लाह तआला ने इस बदबू से महफ़ूज़ रखा है, बल्कि ख़ुशबू वाले माहौल में रखा है, उसका तो यह हाल होगा कि अगर दूर से ज़रा सी भी बदबू आ जाये तो उसका दिमाग़ ख़राब हो जायेगा। इसी तरह जो लोग ईमान वाले हैं और जिनका सीना तक़वा और परहेज़गारी की वजह से आईने की तरह साफ़ और चमकदार है, ऐसे लोग गुनाहों की अंधेरी और कराहियत को बहुत ज़्यादा महसूस करते हैं। बहर हाल, गुनाहों की तीसरी बड़ी ख़राबी और अन्जाम दिल में अंधेरी और कराहियत का पैदा होना है।

गुनाहों की चौथी ख़राबी "अक़्ल ख़राब होना"

गुनाहों की चौथी ख़राबी यह है कि जब आदमी गुनाह करता चला जाता है तो उसकी अक़्ल ख़राब हो जाती है और उसकी मत उल्टी हो जाती है। उसकी फ़िक्र और समझ ग़लत रास्ते पर पड़ जाती है और फिर अच्छी बात को बुरा और बुरी बात को अच्छा समझने लगता है। अगर उसको सही बात भी नर्मी से समझाओ तो वह उसके दिमाग़ में नहीं उतरती। इसी के बारे में अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि जिसको अल्लाह तआला गुमराह कर दे उसकी हिदायत का कोई रास्ता नहीं है, और अल्लाह तआला किसी को बे वजह गुमराह नहीं करते बल्कि जब कोई शख़्स गुनाह और ना फ़रमानी करता ही चला जाता है तो फिर उन गुनाहों की नहूसत यह होती है कि फिर सही बात उसकी समझ में आती ही नहीं।

गुनाह ने शैतान की अक़्ल को औंधा कर दिया

देखिये! यह इब्लीस और शैतान जो गुनाह की जड़ और गुनाह का ईजाद करने वाला और संसथापक है। क्योंकि सब से पहले इस दुनिया में गुनाह को उसी ने ईजाद किया, ख़ुद भी गुनाह में मुब्तला हुआ और हज़रत आदम अलैहिस्सलाम जैसे बड़े रुतबे वाले पैग़म्बर को भी बहकाया, और गुनाह करने के नतीजे में उसकी अक़्ल औंधी

हो गयी। चुनांचे जब अल्लाह तआला ने उसको हजरत आदम अलैहिस्सलाम के सामने सज्दा करने का हुक्म दिया तो उसने हुक्म मानने के बजाए अक़्ली दलील पेश करनी शुरू कर दी, कि आपने मुझे आग से पैदा किया है और आदम को मिट्टी से पैदा किया है। यह दलील बज़ाहिर तो बड़ी अच्छी है कि आग अफ़ज़ल है, और मिट्टी उसके मुक़ाबले में कमतर है, लेकिन उसकी अक़्ल में यह बात नहीं आयी कि आग को पैदा करने वाला भी वही है और मिट्टी को बनाने वाला भी वही है, जब बनाने वाला यह हुक्म दे रहा है कि आग को चाहिये कि मिट्टी को सज्दा करे, तो फिर आग की फ़ज़ीलत कहां गयी और मिट्टी कमतरी कहां रह गयी? उसकी समझ में यह बात न आई, जिसका नतीजा यह हुआ कि दरगाह से निकाल दिया गया और मरदूद और ज़लील हुआ। और फिर अल्लाह तआला के यहां तौबा का दरवाज़ा तो खुला हुआ है, इन्सान के लिये भी और शैतान के लिये भी, अगर वह अक़्ल को सही इस्तेमाल करके अल्लाह से कह देता कि मुझ से ग़लती हो गयी मुझे माफ़ कर दो, अब आप जो कहेंगे मैं वही करूंगा। मगर यह बात कहने लिये आज भी तैयार नहीं।

शैतान की तौबा का सबक़ लेने वाला वाक़िआ

मैंने अपने शैख़ से एक क़िस्सा सुना, अगरचे बज़ाहिर इसराईली वाक़िआ है, लेकिन बड़ा सबक़ लेने वाला वाक़िआ है। वह यह कि जब हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम अल्लाह तआला से हम–कलामी के लिये तूर पहाड़ पर तशरीफ़ ले जाने लगे तो रास्ते में शैतान मिल गया। उसने कहा कि आप अल्लाह तआला से हम–कलाम होने के लिये तशरीफ़ लेजा रहे हैं तो हमारा एक छोटा सा काम कर दें, हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने पूछा: क्या काम है? शैतान ने कहा कि हम तो अब रान्दा–ए–दरगाह और मरदूद और मलऊन हो चुके हैं कि अब तो हमारी नजात का कोई रास्ता नज़र नहीं आ रहा है। आप अल्लाह से हमारे लिये सिफ़ारिश फ़रमा दें कि हमारे लिये भी तौबा

का कोई रास्ता मिल जाये और नजात की कोई सूरत निकल आये। हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि बहुत अच्छा। जब हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम तूर पहाड़ पर पहुंचे, वहां पर अल्लाह तआ़ला से हम–कलामी हुई, लेकिन उस दौरान शैतान की बात पहुंचाना भूल गये। जब वापस चलने लगे तो ख़ुद अल्लाह तआ़ला ने याद दिलाते हुए फ़रमाया कि तुम्हें किसी ने कोई पैग़ाम दिया था? उस वक़्त हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि हां या अल्लाह! मैं भूल गया। रास्ते में मुझे इब्लीस मिला था, और बड़ी परेशानी का इज़हार कर रहा था, और दरख़्वास्त कर रहा था कि हमारे लिये भी नजात का कोई रास्ता निकल आये। ऐ अल्लाह! आप तो रहीम व करीम हैं, हर एक को माफ़ फ़रमा देते हैं, वह तौबा कर रहा है तो उसको भी माफ़ फ़रमा दें। अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि हमने कब कहा था कि तौबा का दरवाज़ा बन्द है, हम तो माफ़ करने को तैयार हैं। उसको कह दो कि तेरी तौबा क़बूल हो जायेगी। उसका तरीक़ा यह है कि उस वक़्त हमने तुझ से कहा था कि आदम को सज्दा कर ले, उस वक़्त तूने हमारी बात नहीं मानी, अब भी मामला बहुत आसान है कि उसकी क़ब्र पर जाकर सज्दा कर ले, हम तुम्हें माफ़ कर देंगे। हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि यह मामला तो बहुत आसान हो गया। चुनांचे यह पैग़ाम लेकर वापस तश्रीफ़ लाये। रास्ते में फिर शैतान से मुलाक़ात हुई, पूछा कि मेरी माफ़ी का क्या हुआ? हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने उस से फ़रमाया कि तेरे मामले में तो अल्लाह तआ़ला ने बड़ा आसान रास्ता बता दिया, उस वक़्त तुझ से यह ग़लती हुई थी कि तूने आदम को सज्दा नहीं किया था, अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि अब तू आदम की क़ब्र को सज्दा कर ले तो तेरा गुनाह माफ़ हो जायेगा। जवाब में शैतान ने फ़ौरन कहा कि वाह भाई! मैंने ज़िन्दा को सज्दा किया नहीं, अब मुर्दे को कैसे सज्दा कर लूं? और उसकी क़ब्र को कैसे सज्दा कर लूं? यह मुझ से नहीं हो सकता। यह जवाब इसलिये दिया कि अक़्ल उल्टी हो गयी थी। बहर हाल, गुनाह की ख़ासियत यह है कि वह इन्सान की अक़्ल को औंधा

कर देता है और इन्सान की मत मारी जाती है, और फिर सही बात इन्सान की समझ में नहीं आती।

तुम्हें हिक्मत पूछने का इख़्तियार नहीं

जिन गुनाहों को कुरआन व हदीस ने साफ़ तौर पर खुले अल्फ़ाज़ में हराम क़रार दे दिया है, उनमें जो लोग मुब्तला हैं उनसे जाकर अगर कहा जाये कि ये गुनाह हराम हैं, तो वे फ़ौरन उसके ख़िलाफ़ अक़्ली तावीलें शुरू कर देते हैं, और उसके ख़िलाफ़ अक़्ली दलीलें देना शुरू कर देते हैं, कि यह गुनाह क्यों हराम क़रार दिया गया है? इसमें तो फ़लां फ़ायदा है? इसमें तो फ़लां मस्लिहत है, इसको हराम क़रार देने में क्या मस्लिहत और हिक्मत है? ऐसे लोगों से कोई यह पूछे कि तुम इस दुनिया में ख़ुदा बनकर आये हो या बन्दे बनकर आये हो? अगर तुम बन्दे बनकर आये हो तो अपने इस एतिराज़ को अपने नौकर के एतिराज़ पर ही क़ियास कर लो, जिसको तुमने अपने घर में नौकर रखा है। जैसे आपने घर का सौदा सलफ़ लाने के लिये एक शख़्स को नौकर रखा, अब आपने उस नौकर से कहा कि बाज़ार जाकर इतने रुपये की फ़लां चीज़ ख़रीद कर ले आओ। अब नौकर यह कहने लगे कि पहले मुझे यह बताओ कि यह सौदा सलफ़ मुझ से क्यों मंगाया जा रहा है? और इतनी मिक़्दार (मात्रा) में क्यों मंगाया जा रहा है? और इस फ़ुज़ूल ख़र्ची की क्या हिक्मत है? पहले मुझे यह बताओ। अगर एक नौकर इस तरह हमारे कामों की हिक्मत और मस्लिहत पूछे तो ऐसा नौकर इस लायक़ है कि उसका कान पकड़ कर नौकरी से अलग कर दिया जाये और घर से बाहर निकाल दिया जाये, इसलिये कि उस नौकर को यह हक़ ही नहीं पहुंचता कि वह यह पूछे कि यह चीज़ क्यों मंगवाई जा रही है? उसको नौकर इसलिये रखा है कि जो काम उसको बता दिया जाये वह काम करे, समझ में आये तो करे, समझ में न आये तो करे, यह है नौकर। और कामों की मस्लिहत और हिक्मत पूछना नौकर को इसका हक़ नहीं है।

तुम नौकर नहीं, बन्दे हो

एक नौकर जिसको तुमने आठ घन्टे के लिये नौकर रखा है, वह नौकर तुम्हारा गुलाम नहीं है, तुमने उसको पैदा नहीं किया, वह तुम्हारा बन्दा नहीं है, और तुम उसके ख़ुदा नहीं हो। बल्कि सिर्फ़ वह तुम्हारा तन्ख़्वाह दार नौकर है, वह अगर तुम से तुम्हारे कामों की हिक्मत और मस्लिहत पूछने लगे तो वह तुम्हें गवारा न हो। लेकिन तुम अल्लाह तआला के नौकर नहीं हो, न गुलाम हो, बल्कि अल्लाह के बन्दे हो, उसने तुम्हें पैदा किया है। वह अगर तुम से यह कहता है कि तुम फ़लां काम करो तो तुम यह कहते हो कि पहले हमें वजह बताओ, हिक्मत और मस्लिहत बताओ, फिर मैं यह काम करूंगा। तो यह हिक्मत और मस्लिहत का मुतालबा इतनी ही बड़ी बेवकूफ़ी है जितनी बड़ी बेवकूफ़ी वह नौकर कर रहा था, बल्कि उस से भी बड़ी और बदतर हिमाक़त है, क्योंकि वह नौकर तो फिर भी इन्सान है, और तुम भी इन्सान हो, वह भी अक़्ल रखता है, तुम भी अक़्ल रखते हो, उसकी और तुम्हारी अक़्ल बराबर है। लेकिन अल्लाह तआला की हिक्मत और मस्लिहत कहां, और तुम्हारी यह छोटी सी अक़्ल कहां? दोनों के दरमियान कोई निस्बत नहीं। फिर भी तुम हिक्मत और मस्लिहत का मुतालबा कर रहे हो? कि शरीअत के इस हुक्म में क्या मस्लिहत है? पहले हिक्मत और मस्लिहत बताओ, तब अमल करेंगे, वर्ना नहीं करेंगे। वजह इस मुतालबे की यह है कि अक़्ल औंधी हो चुकी है और गुनाहों की कसरत ने अक़्ल को औंधा कर दिया है।

महमूद और अयाज़ का सबक़ लेने वाला वाक़िआ

मेरे शैख़ हज़रत डा. अ़ब्दुल हई साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने एक वाक़िआ सुनाया था, जो बड़ी इब्रत का और बड़ा सबक़ लेने वाला वाक़िआ है। फ़रमाया कि महमूद ग़ज़नवी जो मशहूर फ़ातेह और बादशाह गुज़रे हैं, उनका एक चहीता और लाडला ग़ुलाम था "अयाज़" चूंकि यह "अयाज़" बादशाह का चहीता था, इसलिये उसके

बारे में लोग यह कहते थे कि यह बादशाह का मुंहचढ़ा गुलाम है, और महमूद ग़ज़नवी इस गुलाम को दूसरे बड़े बड़े लोगों पर तरजीह देता है। वाक़िआ भी यही था कि महमूद ग़ज़नवी बड़े बड़े वज़ीरों और अमीरों की बात इतनी नहीं मानता था जितनी अयाज़ की बात मानता था।

महमूद ग़ज़नवी ने चाहा कि उन वज़ीरों और अमीरों को दिखाऊं कि तुम में और अयाज़ में क्या फ़र्क़ है? चुनांचे एक बार एक बहुत क़ीमती हीरा कहीं से तोहफ़े में महमूद ग़ज़नवी के पास आया, यह हीरा बहुत क़ीमती और बहुत ख़ूबसूरत और बहुत शानदार था। बादशाह का दरबार लगा हुआ था, सब ने उस क़ीमती हीरे को देखा और उसकी तारीफ़ की, उसके बाद महमूद ग़ज़नवी ने वज़ीरे आज़म को अपने क़रीब बुलाया और उस से पूछा कि तुमने यह हीरा देखा, यह हीरा कैसा है? वज़ीरे आज़म ने कहा कि सरकार! यह बहुत क़ीमती हीरा है, और पूरी दुनिया में इसकी नज़ीर मौजूद नहीं, यह बहुत बड़ा हीरा है। बादशाह ने कहा कि इस हीरे को ज़मीन पर पटख़ कर तोड़ दो। वज़ीरे आज़म हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया और कहाः जहां पनाह! यह बहुत क़ीमती हीरा है, आपके पास यह यादगार तोहफ़ा है, आप इसको तुड़वा रहे हैं? मेरी दरख़्वास्त यह है कि आप इसको न तुड़वायें। बादशाह ने कहा कि अच्छा बैठ जाओ। फिर एक दूसरे वज़ीर को बुलाया और उस से कहा कि तुम इसको तोड़ दो, वह वज़ीर भी खड़ा हो गया और कहने लगाः बादशाह सलामत! यह बहुत क़ीमती हीरा है, मेरी हिम्मत नहीं हो रही है कि इसको तोड़ूं। इसी तरह उसने कई वज़ीरों और अमीरों को बुलवाया और उस हीरे को तोड़ने के लिये कहा, मगर हर एक ने माफ़ी मांगी और तोड़ने से माज़िरत कर ली।

हीरा टूट सकता है, हुक्म नहीं टूट सकता

आख़िर में महमूद ग़ज़नवी ने अयाज़ को बुलाया कि अयाज़! उसने कहा, जी जहां पनाह! महमूद ग़ज़नवी ने कहा कि यह हीरा

रखा है इसको उठा कर पटख़ कर तोड़ दो. अयाज ने हीरा उठाया और ज़मीन पर पटख़ कर तोड़ दिया, वह चूर चूर हो गया। जब बादशाह ने देखा कि अयाज़ ने वह हीरा तोड़ दिया तो बादशाह ने उसको डांटा कि तुमने हीरा क्यों तोड़ा? ये बड़े बड़े वज़ीर और अमीर अक्ल वाले जो यहां बैठे हुए हैं, इनसे जब हीरा तोड़ने के लिये कहा गया तो इन्होंने इस हीरे को तोड़ने की हिम्मत न की, क्या ये सब पागल थे? तुमने उठा कर तोड़ दिया। क्यों तोड़ा? पहले तो अयाज़ ने कहा कि जहां पनाह! गलती हो गयी। बादशाह ने पूछा कि तुमने तोड़ा क्यों? अयाज़ ने कहा कि मेरे दिल में ख़्याल आया कि यह तो हीरा है, चाहे इसकी क़ीमत कितनी ज़्यादा क्यों न हो, यह अगर टूट जाये तो इतनी बुरी बात नहीं, लेकिन आपका हुक्म नहीं टूटना चाहिये। और आपके हुक्म को इस हीरे से ज़्यादा क़ीमती समझते हुए मैंने सोचा कि इस हीरे के टूटने के मुक़ाबले में हुक्म टूटना बुरी बात है। इसलिये मैंने इस हीरे को तोड़ दिया।

हुक्म का बन्दा

उसके बाद महमूद गज़नवी ने उन वज़ीरों से मुख़ातिब होकर कहा कि तुम में और अयाज़ में यह फ़र्क़ है। तुम्हें अगर किसी काम का हुक्म दिया जाये तो उसके अन्दर हिक्मतें और मस्लिहतें तलाश करते हो। और यह अयाज़ तो हुक्म का बन्दा है। इस से जो कहा जायेगा वह यह करेगा। इसके सामने हिक्मत और मस्लिहत कोई हकीक़त नहीं रखती।

तो महमूद गज़नवी के हुक्म की क्या हकीक़त है? उसकी अक़्ल भी सीमित, उसके वज़ीरों और अयाज़ की अक़्ल भी सीमित, यह मक़ाम तो हकीक़त में उस ज़ात को हासिल है जिसने सारी कायनात को पैदा किया है। चाहे हीरा टूट जाये, चाहे दिल टूट जाये, चाहे इन्सान के जज़्बात टूट जायें, चाहे ख़्यालात ख़्वाहिशें टूट जायें, लेकिन उसका हुक्म न टूटे, यह मक़ाम हकीक़त में सिर्फ़ अल्लाह

जल्ल शानुहू को हासिल है। इसलिये अल्लाह तआला के हुक्म में हिक्मत और मस्लिहत तलाश करना नादानी और बेअक़्ली की बात है। और इस बेअक़्ली का असल सबब गुनाह हैं, जितने गुनाह करोगे उतनी ही यह अक़्ल औंधी होती चली जायेगी। बहर हाल, गुनाह की नहूसत यह है कि इन्सान की अक़्ल मारी जाती है।

गुनाह छोड़ने से नूर का हासिल होना

तुम ज़रा अल्लाह तआला के सामने इन गुनाहों से कुछ देर के लिये ही तौबा करके देखो, और चन्द दिन के लिये गुनाहों से बच कर देखो, कि उस वक़्त अल्लाह तआला की तरफ़ से क्या बर्कत और क्या नूर हासिल होता है, और फिर अक़्ल के अन्दर ऐसी बातें समझ में आयेंगी जो पहले समझ में नहीं आ रही थीं। कुरआने करीम में अल्लाह तआला का इर्शाद है:

"ان تتقوا الله يجعل لكم فرقانا" (سورة الانفال:٢٩)

अगर तुम अल्लाह तआला से डरोगे, यानी अल्लाह तआला के हराम किये हुए बुरे कामों और गुनाहों से बचोगे तो अल्लाह तआला तुम्हारे दिल में हक़ व बातिल के दरमियान तमीज़ करने वाला एक कांटा (तराज़ू) पैदा कर देंगे, जो वाज़ेह तौर पर तुम्हें यह बता देगा कि यह हक़ है और यह बातिल है, यह सही है, और यह ग़लत है। आज हक़ व बातिल के दरमियान तमीज़ मिट चुकी है। इसलिये कि हमने गुनाह कर करके अपनी अक़्लें ख़राब कर दी हैं।

गुनाहों का पांचवां नुक़सान "बारिश बन्द होना"

गुनाहों का पांचवां नुक़सान यह है कि उनकी असल सज़ा तो आख़िरत में मिलेगी, लेकिन इस दुनिया में इन गुनाहों की नहूसत उसकी ज़िन्दगी पर असर डालती है। चुनांचे हदीस शरीफ़ में आता है कि जब लोग ज़कात देना बन्द कर देते हैं तो अल्लाह तआला बारिशें बन्द कर देते हैं।

गुनाहों का छठा नुक़सान "बीमारियों का पैदा होना"

और छठा नुक़सान यह है कि जब लोगों में बदकारी, अश्लीलता और नंगापन फ़ैल जाता है तो अल्लाह तआला उनको ऐसी ऐसी बीमारियों में मुब्तला कर देते हैं कि उनके बाप दादाओं ने उन बीमारियों के बारे में कभी सुना भी न था, कि ऐसी भी कोई बीमारी होती है, और न उनका नाम सुना था। चुनांचे इस हदीस को सामने रख कर "एड्ज़" की बीमारी को देख लें जिसका सारी दुनिया में आज तूफ़ान बरपा है। नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम चौदह सौ साल पहले बता गये कि ऐसी ऐसी बीमारियां आयेंगी। हर गुनाह के कुछ ख़ास्से होते हैं, और उन ख़ास्सों का मुज़ाहरा इसी दुनिया ही के अन्दर हो जाता है, और अल्लाह तआला आंखों से दिखा देते हैं। और उन गुनाहों का बुरा अन्जाम ज़ाहिर हो जाता है।

गुनाहों का सातवां नुक़सान "क़त्ल व ग़ारत गरी"

हदीस शरीफ़ में है कि आख़री ज़माने में एक ऐसा ज़माना आयेगा कि उसमें क़त्ल व ग़ारत गरी की कसरत होगी, और आदमी को मारा जायेगा और न उसको और न ही उसके वारिसों को पता चलेगा कि क्यों मारा गया? और किसने मारा?

"لايدرى القاتل فيم قتل ولا المقتول فيم قتل"

पहले जब कोई क़त्ल होता था तो पता चल जाता था कि दुश्मनी थी, उसकी वजह से मारा गया। यह हदीस पढ़ लो और आज जो क़त्ल व ग़ारत गरी हो रही है उसको देख लो कि किस तरह लोग मर रहे हैं। आज किसी का क़त्ल हो जाये और उसके बारे में पुछा जाये कि क्यों मारा गया? और किसने मारा? तो उसका जवाब किसी के पास नहीं होता। ऐसा मालूम होता है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने चौदह सौ साल पहले आजके हालात देख कर यह बात इर्शाद फ़रमाई थी। यह सब हमारे आमाल और गुनाहों की नहूसत की वजह से हो रहा है। और गुनाहों की

कसरत ने यह सूरते हाल पैदा कर दी है।

क़त्ल व ग़ारत गरी का एकमात्र हल

आज हम लोग इन फ़सादों और क़त्ल व ग़ारत गरी के मुख़्तलिफ़ हल तलाश करने में लगे हुए हैं, कोई कहता है कि सियासी हल तलाश करना चाहिये, कोई कहता है कि आपस में बात चीत होनी चाहिये। ये सब तदबीरें तलाश कर रह हैं लेकिन हमें यह मालूम नहीं कि इन फ़सादों का असल सबब गुनाहों का फैल जाना है। जब किसी उम्मत के अन्दर गुनाह फैल जाते हैं तो अल्लाह तआला की तरफ़ से उनके आमाल की नहूसत की यह सूरत फैल जाती है। इसलिये इसकी तरफ़ तवज्जोह करनी चाहिये। अल्लाह तआला अक़्ले सलीम अता फ़रमये और इन गुनाहों को छोड़ने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये। तो हमें पहला काम यह करना चाहिये कि अल्लाह तआला के सामने अपने तमाम गुनाहों से तौबा करें और आमाल की नहूसत और बुराई से पनाह मांगें, और अल्लाह तआला से दुआ करें कि ऐ अल्लाह! हम से हमारी आमाल की बद नसीबी को दूर फ़रमा।

वज़ीफ़ों से ज़्यादा गुनाहों की फ़िक्र करनी चाहिए

बहर हाल, नफ़्ली इबादतों में ज़्यादा मश्ग़ूली अच्छी बात है, लेकिन इस से भी ज़्यादा ज़रूरी काम गुनाहों से बचना है। मेरे पास रोज़ाना कई हज़रात और ख़ास तौर पर औरतों कें फ़ोन आते हैं कि फ़लां काम की दुआ बता दीजिये, फ़लां मक़सद के लिये दुआ बता दीजिये। बाज़ औरतों का यह ख़्याल है कि हर मक़सद के लिये अलग दुआ होती है, और उसका अलग वज़ीफ़ा होता है। भाई! ये दुआएं और ये वज़ीफ़े अपनी जगह क़ाबिले फ़ज़ीलत हैं, लेकिन ज़्यादा फ़िक्र इसकी करनी चाहिये कि गुनाह सर्ज़द न हों। और गुनाहों से ख़ुद भी बचो और अपने घर वालों और अपने बच्चों को भी गुनाहों से बचाओ। जब तक यह काम नहीं करोगे तो याद रखो ये

वज़ीफ़े कुछ काम नहीं आयेंगे, ये वज़ीफ़े उसी वक़्त काम आते हैं जब दिल में गुनाहों से बचने की फ़िक्र और उसका जज़्बा हो, और बचने का एहतिमाम भी हो, तो उस वक़्त वज़ीफ़ों और दुआओं के ज़रिये दिल में क़ुव्वत और हिम्मत पैदा हो जाती है, और फिर गुनाहों से बचना आसान हो जाता है। लेकिन अगर गुनाहों से बचने की फ़िक्र तो है नहीं, ग़फ़लत में वक़्त गुज़र रहा है, और साथ में वज़ीफ़े और नवाफ़िल भी चल रहे हैं तो फिर उस वक़्त इन वज़ीफ़ों से कोई फ़ायदा नहीं होता।

गुनाहों का जायज़ा लें

खुलासा यह कि हम गुनाहों से बचने की फ़िक्र करें, अपनी सुबह से शाम तक की ज़िन्दगी का जायज़ा लें और गुनाहों की फ़ेहरिस्त बनायें कि कौन कौन से काम अल्लाह की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ हो रहे हैं। फिर यह जायज़ा लें कि उन गुनाहों में से किन किन गुनाहों को फ़ौरन छोड़ सकते हैं, उनको तो फ़ौरन छोड़ दें। और जिन गुनाहों के छोड़ने के लिये किसी तदबीर की ज़रूरत हो, उनके लिये तदबीर इख़्तियार करें, और अपने गुनाहों से तौबा और इस्तिग़फ़ार करें, और अल्लाह तआला की तरफ़ रुजू करें। अल्लाह तआला हम सबको गुनाहों से बचने की हिम्मत और तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

तहज्जुद गुज़ार से आगे बढ़ने का तरीक़ा

एक हदीस में उम्मुल मोमिनीन हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि जिस शख़्स की यह ख़्वाहिश हो कि मैं किसी इबादत गुज़ार और तहज्जुद गुज़ार आदमी से आगे बढ़ जाऊं, तो इसका तरीक़ा यह है कि वह अपने आपको गुनाहों से महफ़ूज़ रखे। जैसे हम बुज़ुर्गों के हालात में पढ़ते हैं कि वे सारी सारी रात इबादत करते थे, इतनी रक्अ़तें नफ़िल पढ़ते थे, इतने पारे तिलावत करते थे। अब अगर कोई शख़्स यह चाहे कि मैं इस इबादत गुज़ार से आगे बढ़ जाऊं तो वह गुनाहों से अपने आपको महफ़ूज़ कर ले। क्योंकि

गुनाहों से हिफ़ाज़त होने के नतीजे में इन्शा अल्लाह उनकी भी नजात होगी और तुम्हारी भी नजात होगी। अगर वे लोग भी गुनाहों से बचते होंगे तो बस इतना फ़र्क होगा कि उनका दर्जा ऊंचा होगा और तुम्हारा दर्जा नीचा होगा, लेकिन नजात में दोनों बराबर होंगे। और अगर कोई शख़्स इबादत गुज़ार था लेकिन साथ में गुनाह भी करता था, फिर उस से आगे बढ़ जाओगे। इसलिये कि तुमने अपने आपको गुनाहों से बचा लिया है।

मोमिन और उसके ईमान की मिसाल

एक और हदीस हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत की गयी है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि एक मोमिन और उसके ईमान की मिसाल ऐसी है जैसे एक घोड़ा किसी लम्बी रस्सी के ज़रिये खूंटे से बंधा हुआ है, और उसका नतीजा यह है कि वह घोड़ा घूमता भी रहता है, लेकिन एक हद तक वह घूम सकता है, उस हद से आगे जाने से वह खूंटा उसको रोक देता है। वह घोड़ा ज़रा सा चक्कर लगा कर फिर वापस अपने खूंटे के पास आकर बैठ जायेगा। इस तरह वह खूंटा दो काम करता है, एक यह कि वह घोड़े को एक ख़ास हद से आगे बढ़ने से रोकता है, और दूसरा यह कि वह खूंटा उसकी पनाह की जगह बना हुआ है। वह घोड़ा इधर उधर चक्कर लगाने के बाद वापस उसी खूंटे के पास आकर बैठ जाता है।

यह मिसाल बयान करके नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि मोमिन का खूंटा उसका ईमान है, इस ईमान का तक़ाज़ा यह है कि वह मोमिन एक हद तक इधर उधर जायेगा, घूमेगा, फिरेगा, लेकिन अगर हद से आगे जाने की कोशिश करेगा तो ईमान उसकी रस्सी खींच लेगा, और इधर उधर घूमने के बाद आख़िरकार मोमिन अपने ईमान के खूंटे के पास वापस आ जायेगा। मतलब यह है कि मोमिन का ईमान इतना ताक़तवर होता है

कि वह उसको गुनाह करने नहीं देता। और अगर कभी भूल चूक से गुनाह हो गया तो फिर लौट कर वापस अपने ईमान के खूंटे के पास आ जाता है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह कितनी ख़ूबसूरत मिसाल बयान फ़रमाई है। अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल से हम सब का यह खूंटा मज़बूत फ़रमा दे, आमीन।

गुनाह लिखने में देरी की जाती है

हदीस शरीफ़ में आता है कि हर इन्सान के साथ दो फ़रिश्ते होते हैं। एक नेकियां लिखने वाला और एक बुराइयां लिखने वाला। मैंने अपने शैख़ हज़रत मौलाना मसीहुल्लाह ख़ां साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि से सुना है कि नेकी लिखने वाले फ़रिश्ते को यह हुक्म है कि जब वह इन्सान नेकी करे तो फ़ौरन उसको लिख लो। और बदी लिखने वाले फ़रिश्तो को हुक्म यह है कि जब वह इन्सान बदी करे तो लिखने से पहले नेकी लिखने वाले फ़रिश्ते से पूछे कि लिखूं या न लिखूं। गोया कि नेकी लिखने वाला फ़रिश्ता उसका अमीर है। चुनांचे जब इन्सान कोई गुनाह करता है तो वह बदी लिखने वाला फ़रिश्ता नेकी लिखने वाले फ़रिश्ते से पूछता है कि लिखूं या न लिखूं? नेकी वाला कहता है कि नहीं, अभी मत लिखो। क्योंकि हो सकता है कि यह तौबा कर ले और इस्तिग़फ़ार कर ले, तो फिर लिखने की ज़रूरत ही पेश न आये। अगर वह शख़्स दोबारा गुनाह कर लेता है और अपने पहले गुनाह से तौबा नहीं करता तो फिर पूछता है कि अब लिख लूं? नेकी वाला फ़रिश्ता कहता है कि नहीं, अभी ठहर जाओ, फिर जब तीसरी बार गुनाह कर लेता है तो फिर पूछता है कि लिखूं या नहीं? अब जाकर वह कहता है कि हां अब लिख लो। उसके बाद वह गुनाह उसके नामा–ए–आमाल में लिख दिया जाता है। अल्लाह तआ़ला ने अपने बन्दों के लिये इतना आसानी का मामला कर दिया है कि नेकी फ़ौरन लिख ली जाती है और बदी के लिखने में ताख़ीर और देरी की जाती है कि शायद यह गुनाह से तौबा कर ले।

जहां गुनाह किया, वहीं तौबा कर लो

इसी वजह से बुज़ुर्गों ने फ़रमाया कि जब कोई गुनाह सर्ज़द हो जाये तो फ़ौरन बिना देरी किए तौबा और इस्तिग़फ़ार कर लो, ताकि वह गुनाह तुम्हारे नामा—ए—आमाल के अन्दर लिखा ही न जाये। और बुज़ुर्गों ने यह भी फ़रमाया कि जिस ज़मीन पर गुनाह किया है, उसी ज़मीन पर फ़ौरन तौबा और इस्तिग़फ़ार कर लो, ताकि क़ियामत के दिन जब वह ज़मीन तुम्हारी गुनाह की गवाही दे तो उसके साथ साथ वह ज़मीन तुम्हारी तौबा की भी गवाही दे, कि इस शख़्स ने मेरे सीने पर गुनाह किया था, उसके बाद मेरे सीने पर ही तौबा कर ली थी। यह सब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इस इर्शाद की तामील हो रही है कि ईमान मोमिन का खूंटा है, जब मोमिन इधर उधर चला जाता है तो घूम फिर कर वापस अपने खूंटे के पास आ जाता है।

गुनाहों से बचने की पाबन्दी करें

इसलिये पहले तो गुनाहों से बचने की पाबन्दी और फ़िक्र करें, पाबन्दी और फ़िक्र के बग़ैर गुनाहों से बचा नहीं जा सकता। अगर पाबन्दी और फ़िक्र के बावजूद किसी मजबूरी से या भूल से या ग़लती से गुनाह सर्ज़द हो जाये तो फ़ौरन तौबा करो, इस्तिग़फ़ार करो और अल्लाह तआ़ला की तरफ़ रुजू करो। यह करते रहोगे तो फिर अल्लाह तआ़ला की रहमत से उम्मीद है कि अल्लाह तआ़ला उस गुनाह को माफ़ फ़रमा देंगे। और यह ग़फ़लत और ला परवाही सब से बड़ी बला है, कि इन्सान को फ़िक्र और ध्यान और तवज्जोह ही न हो, बल्कि अपने गुनाहों पर नादिम और शर्मिन्दा होने के बजाए उसको सही साबित करने की कोशिश करे। अल्लाह तआ़ला मुझे और आप सबको गुनाहों के वबाल से महफ़ूज़ फ़रमाये, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

बुराईयों को रोको वर्ना......

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

"عن ابی سعیدالخدری رضی اللّٰہ عنه قال: سمعت رسول اللّٰہ صلی اللّٰہ علیه وسلم یقول: من رای منکم منکرا فلیغیره بیده، فان لم یستطع فبلسانه، فان لم یستطع فبقلبه، وذالك اضعف الایمان" (صحیح مسلم)

बुराईयों को रोकने के तीन दर्जे

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि जनाब मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः जो शख़्स तुम में से कोई बुराई होती हुई देखे तो उसको चाहिये कि उस बुरे काम को अपने हाथ से तब्दील कर दे, यानी उस बुराई को न सिर्फ़ रोके बल्कि उसको अच्छाई में बदल दे। अगर हाथ से रोकने की कुदरत और ताक़त नहीं है तो दूसरा दर्जा यह है कि ज़बान से उसको बदल दे। यानी जो शख़्स उस बुराई का इर्तिकाब कर रहा है उस से कहे कि भाईः यह काम जो तुम कर रहे हो यह अच्छा नहीं है। इसके बाजाए नेकी की तरफ़ आ जाओ। और अगर ज़बान से भी कहने की ताक़त और कुदरत नहीं है तो अपने दिल से उस बुराई को बदल दे। यानी अपने दिल से उस काम को बुरा समझे, और इस तीसरे दर्जे के बारे में फ़रमाया कि यह ईमान का

बहुत ज़ईफ़ और कमज़ोर दर्जा है।

घाटे से बचने के लिये चार काम

सूरः "अस्र" में अल्लाह तआला ने एक आम क़ायदा बयान फ़रमा दिया कि:

"والعصران الانسان لفی خسر،الا الذین اٰمنوا وعملواالصالحات وتواصوا بالحق وتواصوا بالصبر"

ज़माने की क़सम खाते हुए अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि तमाम इन्सान घाटे में और नुक़सान में हैं, सिवाए उन लोगों के जो ये चार काम कर लें। गोया कि घाटे और नुक़सान से बचने के लिये चार काम ज़रूरी हैं। एक ईमान लाना, दूसरे नेक काम करना, तीसरे एक दूसरे को हक़ बात की वसीयत और नसीहत करना, और चौथे एक दूसरे को सब्र की वसीयत और नसीहत करना। "हक़" के मायने यह हैं कि तमाम फ़र्ज़ों को बजा लाने की वसीयत और "सब्र" के मायने हैं गुनाहों से बचने की नसीहत और वसीयत, इसलिये घाटे से बचने के लिये अल्लाह तआला ने ईमान और नेक अमल को काफ़ी क़रार नहीं दिया। बल्कि यह भी फ़रमा दिया कि दूसरों को "हक़" और "सब्र" की वसीयत और नसीहत करे। यह काम भी इतना ही ज़रूरी है जितना नेक अमल ज़रूरी है।

एक इबादत गुज़ार बन्दे के हलाक होने का वाक़िआ

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक क़ौम का वाक़िआ बयान करते हुए फ़रमाया कि वह क़ौम तरह तरह के गुनाह, मासियतों और बुराईयों में मुब्तला थी, अल्लाह तआला ने उस क़ौम पर अज़ाब नाज़िल करने का फ़ैसला फ़रमा लिया। चुनांचे अल्लाह तआला ने फ़रिश्तों को हुक्म दिया कि फ़लां बस्ती वाले गुनाहों और ना फ़रमानियों के अन्दर मुब्तला हैं। और उस पर कमर बांधी हुई है, तुम जाकर उस बस्ती को पलट दो। यानी ऊपर का हिस्सा नीचे और नीचे का हिस्सा ऊपर कर दो। और उनको हलाक

कर दो। हज़रत जिब्राईल अलैहिस्सलाम ने अर्ज़ किया कि या अल्लाह! आपने फ़लां बस्ती को उलटने का हुक्म दिया है। और उसमें से किसी को अलग नहीं फ़रमाया। बल्कि पूरी बस्ती को तबाह करने का आपने हुक्म दिया है। हालांकि मैं जानता हूं कि उस बस्ती में एक ऐसा शख़्स भी है जिसने एक लम्हे के लिये भी आपके किसी हुक्म की ना फ़रमानी नहीं की। और सारी उम्र उसने इताअ़त और इबादत के अन्दर गुज़ार दी है। और उसने कोई गुनाह भी नहीं किया। तो क्या उस शख़्स को भी हलाक कर दिया जाए? अल्लाह तआ़ला ने फ़रमायाः हां जाओ और पूरी बस्ती को तबाह कर दो, और उस शख़्स को भी तबाह कर दो। इसलिये कि वह शख़्स अपनी ज़ात में बड़े नेक काम करता रहा, और इबादत और इताअ़त में मश्गूल रहा। लेकिन किसी गुनाह को होता हुआ देख कर उसके माथे पर कभी शिकन (सलवट) भी नहीं आई। और किसी गुनाह को बुरा भी नहीं समझा। और उसका चेहरा बदला भी नहीं। और उन गुनाहों को रोकने के लिये न कोई क़दम उठाया। इसलिए उस शख़्स को भी उसकी क़ौम के साथ तबाह कर दो।

बे गुनाह भी अ़ज़ाब की लपेट में आ जायेंगे

इसी तरफ़ इशारा करते हुए अल्लाह तआ़ला ने एक दूसरी आयत में इर्शाद फ़रमायाः

"وَاتَّقُوْا فِتْنَةً لَّا تُصِيْبَنَّ الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا مِنْكُمْ خَآصَّةً" (سورة انفال:٢٥)

यानी उस अ़ज़ाब से डरो जो सिर्फ़ उन लोगों पर नहीं आयेगा जो गुनाह में मुब्तला हैं। बल्कि वह अ़ज़ाब बे गुनाहों को भी अपनी लपेट में ले लेगा। इसलिये कि ये लोग बज़ाहिर तो बे गुनाह थे, लेकिन जो गुनाह हो रहे थे उनको रोकने के लिये उन्होंने कोई क़दम नहीं उठाया। न ज़बान हिलाई, और उन गुनाहों को होता हुआ देख कर उनके चेहरे पर शिकन आई, इसलिये उन पर भी वह अ़ज़ाब आ जायेगा।

बहर हाल यह नेकी का हुक्म करना और बुराई से रोकना अहम फ़रीज़ा है। जिस से हम और आप ग़फ़लत में हैं। अपनी आंखों से देख रहे हैं कि गुनाह और ना फ़रमानियां हो रही हैं, और बस अपने आपको बचाकर फ़ारिग़ हो जाते हैं, दूसरों को नसीहत नहीं करते, और गुनाहों से बचाने की फ़िक्र नहीं करते।

बुराईयों को रोकने का पहला दर्जा

जो हदीस मैंने शुरू में तिलावत की थी, उसमें हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बुराईयों से रोकने के तीन दर्जे बयान फ़रमाये हैं। पहला दर्जा यह है कि अगर किसी जगह पर तुम्हें बुराई को हाथ से रोकने की ताक़त है, तो उसको अपने हाथ से रोक दो। अगर हाथ से रोकने की ताक़त थी, इसके बावजूद आपने हाथ से नहीं रोका तो आपने ख़ुद गुनाह का जुर्म कर लिया। जैसे एक शख़्स ख़ानदान का बड़ा है। ख़ानदान के अन्दर उसकी बात चलती है। लोग उसकी बात को मानते हैं। वह यह देख रहा है कि मेरे ख़ानदान वाले एक ना जायज़ और गुनाह के काम में मुब्तला हैं। और वह यह भी देख रहा है कि अगर मैं इस काम को अपने हुक्म के ज़ोर पर रोक दूंगा तो यह काम बन्द हो जायेगा। और उसके बन्द होने से कोई फ़ितना खड़ा नहीं होगा। ऐसी सूरत में उस बड़े पर फ़र्ज़ है कि वह अपने हाथ से और ताक़त से उस बुराई को रोके। सिर्फ़ इस ख़्याल से न रोकना कि अगर मैं रोकूंगा तो फ़लां शख़्स नाराज़ हो जायेगा, या फ़लां शख़्स का दिल टूटेगा, ठीक नहीं, इसलिये कि अल्लाह तआ़ला के हुक्म टूटने के मुक़ाबले में किसी के दिल टूटने की कोई हक़ीक़त नहीं।

"फ़ैज़ी" शायर का एक वाक़िआ़

अकबर बादशाह के ज़माने में एक मश्हूर शायर गुज़रे हैं, जिनका तख़ल्लुस "फ़ैज़ी" था। एक बार "फ़ैज़ी" हज्जाम से ख़त बनवा रहे थे, और दाढ़ी भी साफ़ करा रहे थे। उस वक़्त एक बुज़ुर्ग उनके

क़रीब से गुज़रे और फ़रमायाः "आगाः रीश मी तराशी?" जनाब! क्या आप दाढ़ी मुंडवा रहे हैं? क्योंकि फ़ैज़ी शायर इल्म व फ़ज़्ल के भी मुद्दई थे, उन्होंने ही कुरआने करीम की बग़ैर नुक़्तों की तफ़सीर लिखी है। उन बुज़ुर्ग का कहना यह था कि तुम आलिम हो, तुम्हें सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत के बारे में इल्म है। फिर भी तुम यह काम कर रहे हो? जवाब में फ़ैज़ी ने कहाः "बले, रीश मी तराशम, दिले कसे नमी ख़राशम" जी हां मैं दाढ़ी मुंडवा रहा हूं, लेकिन किसी का दिल नहीं तोड़ रहा हूं। किसी का दिल तो नहीं दुखा रहा हूं। गोया कि फ़ैज़ी ने ताना देते हुए कहा कि मैं तो यह एक गुनाह कर रहा था, लेकिन तुमने मुझे यह कह कर मेरा दिल तोड़ दिया। जवाब में उन बुज़ुर्ग ने फ़रमायाः "बले, दिले रसूलुल्लाह मी ख़राशी" किसी और का दिल तो नहीं तोड़ रहे हो, लेकिन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का दिल तोड़ रहे हो। इसलिये कि सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तो मना फ़रमाया कि यह काम मत करो, इसके बावजूद तुम कर रहे हो।

दिल टूटने की परवाह न करे

बहर हाल लोगों में जो यह बात मश्हूर है कि दिल न दुखाना चाहिये। तो बात यह है कि अगर मुहब्बत, प्यार और शफ़्क़त और नर्मी से ज़लील किये बग़ैर वह किसी दूसरे शख़्स को मना कर रहा है कि यह काम मत करो, इसके बावजूद उसका दिल टूट रहा है तो टूटा करे, उसके टूटने की कोई परवाह न करे। क्योंकि अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हुक्म दिल टूटने से ज़्यादा बुलन्द है। लेकिन इतना ज़रूर करे कि कहने में ऐसा अन्दाज़ इख़्तियार न करे जिस से दूसरे का दिल टूटे, और उसकी तौहीन न करे, और उसको ज़लील न करे। और ऐसे अन्दाज़ से न कहे जिस से वह अपनी हल्कापन महसूस करे। बल्कि तन्हाई में

मुहब्बत से शफ़्कत से उसको समझा दे। उसके बावजूद अगर दिल टूटता है तो उसकी परवाह न करे।

फ़र्ज़ छोड़ने के गुनाह का जुर्म करने वाला

इसलिये अगर कोई शख़्स अपने ख़ानदान का बड़ा और सरदार है। ख़ानदान में उसकी बात मानी जाती है। वह देख रहा है कि बच्चे ग़लत रास्ते पर जा रहे हैं, या घर वाले गुनाहों का इर्तिकाब कर रहे हैं, फिर भी उनको नहीं रोकता, तो यह गुनाह के अन्दर दाख़िल है। इसलिये कि घर के बड़े पर उनको हाथ से रोकना फ़र्ज़ था। या कोई उस्ताद है, वह शागिर्द को गुनाह से नहीं रोकता, या कोई शैख़ है, और अपने मुरीद को गुनाह से नहीं रोकता, या कोई अफ़सर है वह अपने मातहत को गुनाह से नहीं रोकता, जब कि उन लोगों को रोकने की ताक़त हासिल है, तो ये हज़रात फ़र्ज़ छोड़ने के गुनाह का जुर्म कर रहे हैं।

फ़ितने के अन्देशे के वक़्त ज़बान से रोके

लेकिन कभी कभी इस बात का डर होता है कि अगर हम उसको उस बुराई से रोकेंगे तो फ़ितना खड़ा हो जायेगा। या तबीयत में बग़ावत पैदा हो जायेगी। और बग़ावत पैदा होने के नतीजे में उस से भी बड़े गुनाह में मुब्तला होने का डर है। तो उस वक़्त अगर हाथ से न रोके, बल्कि सिर्फ़ ज़बान से कहने पर बस करे तो इसकी भी गुन्जाइश है। चुनांचे हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली साहिब थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह जो फ़रमाया कि अगर हाथ से रोकने की ताक़त न हो तो ज़बान से रोके, उस ताक़त के न होने में यह बात भी दाख़िल है। जैसे सनिमा हाल के बाहर गन्दी तस्वीरें लगी हुई हैं। अब आपको ताक़त हासिल है कि चन्द आदमियों को लेकर जायें और उन तस्वीरों को गिराने की कोशिश करें, लेकिन उस ताक़त के नतीजे में ख़ुद भी फ़ितने में मुब्तला होगे

और दूसरों को भी फितने और फसाद में मुब्तला करोगे, इसलिये कि जोश में आकर वह काम कर तो लिया, लेकिन फिर खुद भी पकड़े गये और दूसरों को भी पकड़वा दिया। और उसके नतीजे में ना काबिले बर्दाश्त मुसीबत खड़ी हो गयी। इसलिये यह काम ताक़त से खारिज समझा जायेगा। ताक़त में दाख़िल नहीं होगा। इसलिये उस मौके पर सिर्फ़ ज़बान से रोकने पर इक्तिफ़ा करे।

ख़ानदान के बड़े बुराईयों को रोक दें

आज हमारे समाज में जो फ़साद फैला हुआ है। उसकी बुनियादी वजह यह है कि ख़ानदान के वे बड़े जो ख़ानदान के सियाह सफ़ेद के मालिक हैं। वे जब ख़ानदान के अफ़राद को किसी गुनाह के अन्दर मुब्तला देखते हैं तो उनको रोकने और टोकने के बजाए वे भी उनके साथ उस गुनाह के अन्दर शरीक हो जाते हैं। जैसे आजकल जो शादी विवाह हो रहे हैं, उन शादी विवाहों में बुराईयों का एक सैलाब उमडा हुआ है। बाज़ बुराईयां मामूली दर्जे की हैं। बाज़ बुराईयां दरमियानी दर्जे की हैं, और बाज़ बुराईयां शदीद संगीन क़िस्म की हैं। जैसे अब यह बात आम होती जा रही है कि शादी विवाह के इज्तिमाआत मख़्लूत (यानी मर्द औरतों के एक साथ) होने लगे हैं। यह बात इसलिये आम होती जा रही है कि ख़ानदान के बड़े इस बुराई को अपनी आंखों से देख रहे हैं, फिर भी न तो ज़बान से उसको रोकते हैं, और न हाथ से रोकने की कोशिश करते हैं। बल्कि वे भी उन तक़रीबात में शरीक होते हैं। और यह कहते हैं कि भाई, क्या करें, फ़लां भतीजे की शादी है, मुझे तो उसमें शरीक होना है। देखिये, अगर वे लोग आपको शरीक करना चाहते हैं तो फिर उनको चाहिये कि वे आपके उसूलों के मुताबिक़ इन्तिज़ाम करें। और आपको यह स्टैन्ड लेना ज़रूरी है कि मैं उस वक़्त तक उस तक़रीब में शरीक नहीं हूंगा जब तक यह मख़्लूत इज्तिमा ख़त्म नहीं किया जाता। अगर तुम मख़्लूत इज्तिमा करते हो तो फिर मेरे न आने से आपको नाराज़ होने का कोई हक़ हासिल नहीं। अगर ख़ानदान का

बड़ा यह काम नहीं करेगा तो कियामत के दिन उसकी पकड़ होगी कि तुम हाथ से उस बुराई को इस तरह रोक सकते थे कि ख़ुद शरीक न होते, और शिर्कत से इन्कार कर देते।

शादी की तक़रीब या नाच की महफ़िल

आज हम लोग क़दम क़दम पर इन बुराईयों के सामने हथियार डालते जा रहे हैं। एक ज़माना वह था कि जब शादी विवाह की तक़रीबात में इतनी बुराईयां नहीं थीं। लेकिन धीरे धीरे एक के बाद दूसरी बुराई आयी। दूसरी के बाद तीसरी बुराई शुरू हुई, इस तरह बुराईयों में इज़ाफ़ा होता चला गया, और किसी बुराई के मौक़े पर ख़ानदान में से किसी अल्लाह के बन्दे ने स्टैन्ड नहीं लिया। जिसका नतीजा यह हुआ कि बुराईयां फैलती चली गयीं। याद रखिये, अगर हम आज स्टैन्ड नहीं लेंगे और इन बुराईयों को रोकने की कोशिश नहीं करेंगे तो ये बुराईयां और आगे बढ़ेंगी। चुनांचे तक़रीबात में मर्द व औरत के मख़्लूत (मिले जुले) इज्तिमा का सिलसिला तो जारी था, अब सुनने में यह आ रहा है कि उन इज्तिमाआत में नौजवान लड़कों और लड़कियों का नाच भी शुरू होता जा रहा है। अब आप इस मौक़े पर भी हथियार डाल कर ख़ामोश बैठ जायें। और अपनी बहू बेटियों को नाचती हुई देखा करें, लेकिन शिर्कत करना न छोड़ें। कब तक हथियार डालते जाओगे? कब तक उनके बुरा मानने की परवाह करोगे? कोई आख़िर हद तो होगी जहां जाकर यह सैलाब रुकेगा? याद रखिये, यह सैलाब उस वक़्त तक नहीं रुकेगा जब तक कोई अल्लाह का बन्दा डट कर यह नहीं कहेगा कि या तो मुझे शरीक न करो, और अगर शरीक करना है तो यह काम न करो। अगर ख़ानदान के दो चार बा असर अफ़राद यह कह दें कि हम तो ऐसी तक़रीब में शरीक नहीं होंगे, तो वह शख़्स उस बुराई को छोड़ने पर मजबूर होगा, या फिर आप से ताल्लुक़ ख़त्म करेगा।

कभी कभी इन्सान अपने ख़ानदानी हुक़ूक़ की वजह से मना करता है, कि चूंकि मेरे साथ फ़लां मौक़े पर अच्छा सुलूक नहीं किया

गया, या मेरी इज़्ज़त नहीं की गयी, या फ़लां मौक़े पर मेरा फ़लां हक़ ज़ाया किया गया, इसलिये जब तक मुझ से माफ़ी नहीं मांगी जायेगी, उस वक़्त तक में उस तक़रीब में शरीक नहीं हूंगा। शादी विवाह के मौक़े पर ख़ानदानी हुक़ूक़ की बुनियाद पर इस क़िस्म के बेशुमार झगड़े खड़े हो जाते हैं। इसी तरह अगर कोई अल्लाह का बन्दा दीन की ख़ातिर मना कर दे, कि अगर मख़्लूत इज्तिमा होगा या नाच होगा तो हम शरीक नहीं होंगे, तो इन्शा अल्लाह इन बुराईयों पर रोक लग जायेगी।

वर्ना हम सर पकड़ कर रोएंगे

लेकिन कभी कभी लोग इस मामले में कमी और ज़्यादती में मुब्तला हो जाते हैं, यह नाज़ुक मामला है कि आदमी किस बात पर और किस मौक़े पर स्टैन्ड ले, और किस बात पर न ले। और किस जगह डट जाये, और किस जगह पर नर्म पड़ जाये। यह चीज़ ऐसी नहीं है जो दो और दो चार की तरह बता दी जाये, बल्कि इसको समझने के लिये किसी रहबर और रहनुमा की ज़रूरत होती है। वह बताता है कि इस मौक़े पर क्या करना चाहिये। किस जगह पर सख़्त बन जाओ, और किस जगह पर नर्म पड़ जाओ। अपनी तरफ़ से फ़ैसला करने में कभी कभी इन्सान कमी और ज़्यादती में मुब्तला हो जाता है। इसलिये कभी कभी ऐसा भी हो जाता है कि आदमी ऐसी बात पर स्टैन्ड ले लेता है कि उस से फ़ायदे के बजाए उल्टा नुक़सान हो जाता है। इसलिये यह फ़ैसला किसी रहनुमा की रहनुमाई में करना चाहिये।

लेकिन मख़्लूत इज्तिमा (यानी औरतों और मर्दों की मिली जुली महफ़िल) वाला मामला ऐसा है कि इसके बारे में हर शख़्स को चाहिये कि वह स्टैन्ड ले। याद रखिये, अगर आज हम स्टैन्ड नहीं लेंगे तो कल सर पकड़ कर रोयेंगे, और जब पानी सर से गुज़र जायेगा उस वक़्त याद करोगे कि किसी कहने वाले ने क्या बात कही

थी। अभी वक़्त है कि इस फ़ितने को रोका जा सकता है। इसलिये इस तरीक़े से फ़ितने को रोकने की कोशिश कीजिये। ख़ुदा के लिये अपनी जानों पर रहम करें, और यह सोचें कि हमें अल्लाह तआला के सामने जवाब देना है, और अपनी क़ब्र में जाना है, और अपने मौजूदा तर्ज़े अमल पर दोबारा ग़ौर करें। और यह जो ग़फ़लत का आलम तारी है कि जो शख़्स जिस तरफ़ जा रहा है जाने दो, उसको रोकने की कोई फ़िक्र और परवाह नहीं है। और न ही उसके जाने से दिल दुखता है। यह तरीक़ा बड़ा ख़तरनाक है। इसको बदलने की ज़रूरत है। अल्लाह तआला हम सब को इसकी तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

बुराईयों से रोकने का दूसरा दर्जा

इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बुराई से रोकने का दूसरा दर्जा यह बयान फ़रमाया कि अगर उस बुराई को हाथ से रोकने की ताक़त न हो तो ज़बान से रोको। ज़बान से रोकने का मतलब यह है कि जो शख़्श बुराई के अन्दर मुब्तला है, उसको हमदर्दी से कहे कि भाई साहिब, आप यह काम ग़लत कर रहे हैं। यह काम न करें। लेकिन ज़बान से कहते वक़्त हमेशा यह उसूल पेशे नज़र रहना चाहिये कि हक़ गोई, या हक़ की दावत या तब्लीग़ यह कोई पत्थर नहीं है कि उसको तुमने उठा कर मार दिया। यह कोई लठ नहीं है कि उस से दूसरे का सर फाड़ दिया, बल्कि यह एक ख़ैर ख़्वाही और मुहब्बत व शफ़क़त के अन्दाज़ से कहने वाली चीज़ है, अल्लाह तआला ने साफ़ साफ़ फ़रमा दिया कि:

"اُدْعُ اِلٰی سَبِیْلِ رَبِّكَ بِالْحِكْمَةِ وَالْمَوْعِظَةِ الْحَسَنَةِ" (سورة النحل:١٢٥)

यानी लोगों को अपने रब के रास्ते की तरफ़ हिक्मत और नर्मी से और उम्दा नसीहत से बुलाओ।

हज़रत मूसा अलै. को नर्म अन्दाज़ से बात करने की तल्क़ीन

मेरे वालिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि जब अल्लाह तआ़ला ने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम को फ़िरऔ़न की तरफ़ भेजा तो हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम और हज़रत हारून अलैहिस्सलाम को तल्क़ीन करते हुए फ़रमायाः

"فَقُوْلَا لَهٗ قَوْلًا لَّيِّنًا" (سورة طه:٤٤)

ऐ मूसा और हारून, जब तुम फ़िरऔ़न के पास जाओ, तो उस से नर्मी से बात करना। अब देखिये यह तल्क़ीन फ़िरऔ़न के बारे में फ़रमाई, जब कि अल्लाह तआ़ला को मालूम था कि यह बदबख़्त सही रास्ते पर आने वाला नहीं है। यह ज़िद्दी और हटधर्म है, और आख़िर वक़्त तक ईमान नहीं लायेगा। लेकिन इसके बावजूद उसके बारे में हुक्म दिया कि उस से नर्मी से बात करना। मेरे वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि आज तुम हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से बढ़ कर इस्लाह करने वाले नहीं हो सकते, और तुम्हारा मुख़ातब फ़िरऔ़न से बढ़ कर गुमराह नहीं हो सकता। जब उनको नर्मी से बात करने का हुक्म दिया गया है तो फिर हमारे लिये तो और ज़्यादा वाजिब है कि हम नर्मी से बात करें। यह न हो कि जब दूसरे को बुराई में मुब्तला देख कर ज़बान चलानी शुरू की तो वह ज़बान तलवार बन जाये।

ज़बान से रोकने के आदाब

बल्कि ज़बान से रोकने के भी कुछ आदाब हैं, जैसे यह कि मजमे के सामने न कहे, उसको रुस्वा और ज़लील न करे, ऐसे अन्दाज़ से न कहे जिस से उसको अपनी सुबकी और हल्कापन महसूस हो, बल्कि तन्हाई में मुहब्बत और शफ़क़त और प्यार से, ख़ैर ख़्वाही से समझाए। बाज़ लोग यह उज़्र पेश करते हैं कि आजकल

लोग नर्मी से बात नहीं मानते, बक़ौल किसी केः "लातों के भूत बातों से नहीं मानते" तो भाई अगर वे तुम्हारी बात नहीं मानते तो तुम दारोग़ा नहीं हो। अल्लाह तआला की तरफ़ से तुम्हारे ऊपर यह फ़रीज़ा आयद नहीं किया गया कि तुम्हारी ज़बान से दूसरे की ज़रूर इस्लाह हो जानी चाहिये, बल्कि तुम्हारा फ़रीज़ा सिर्फ़ इतना है कि तुम हक़ नियत से, हक़ तरीक़े से, हक़ बात कह दो। इसलिये ज़बान से कहते वक़्त उसकी इस्लाह की नियत होनी चाहिये, अगर कोई शख़्स बीमार हो जाये तो डा. उसका इलाज करता है, उसके ऊपर तरस खाता है। इसी तरह जो शख़्स किसी गुनाह के अन्दर मुब्तला है, वह हक़ीक़त में बीमार है, वह तरस खाने के लायक़ है। इसलिये उस पर ग़ुस्सा न करो, बल्कि उसको शफ़्क़त और मुहब्बत के साथ समझाने की कोशिश करो।

एक नौजवान का वाक़िआ

एक नौजवान हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में आया, और अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह, मुझे ज़िना करने और बदकारी करने की इजाज़त दीजिये, इसलिये कि मैं अपने ऊपर कन्ट्रोल नहीं कर सकता। आप ज़रा अन्दाज़ा लगाइये कि वह नौजवान एक ऐसे काम की इजाज़त हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से तलब कर रहा है जिसके हराम होने पर तमाम मज़ाहिब मुत्तफ़िक़ हैं। आज अगर किसी पीर या शैख़ से कोई शख़्स इस तरह की इजाज़त मांगे तो ग़ुस्से के मारे उसका पारा कहीं से कहीं पहुंच जाये, लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ात पर क़ुर्बान जाइये कि आपने उस पर ज़र्रा बराबर भी ग़ुस्सा नहीं किया, और न उस पर नाराज़ हुए, आप समझ गये कि यह बेचारा बीमार है, यह ग़ुस्से का मुस्तहिक़ नहीं है, बल्कि तरस खाने का मुस्तहिक़ है। चुनांचे आपने उस नौजवान को अपने क़रीब बुलाया, और उसके कन्धे पर हाथ रखा, फिर उस से फ़रमाया कि ऐ भाई तुमने मुझ से एक सवाल किया, क्या एक सवाल मैं भी तुम से कर लूं? उस

नौजवान ने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! क्या सवाल है? आपने फ़रमाया कि यह बताओ कि अगर कोई दूसरा आदमी तुम्हारी बहन के साथ यह मामला करना चाहे तो क्या तुम उसको पसन्द करोगे? उस नौजवान ने कहा कि नहीं या रसूलल्लाह, फिर आपने फ़रमाया कि अगर कोई शख़्स तुम्हारी बेटी के साथ या तुम्हारी मां के साथ यह मामला करना चाहे तो क्या तुम इसको पसन्द करोगे? उस नौजवान ने कहा कि नहीं या रसूलल्लाह, मैं तो पसन्द नहीं करूंगा। फिर आपने फ़रमाया कि तुम जिस औरत के साथ यह मामला करोगे वह भी तो किसी की बहन होगी, किसी की बेटी होगी, किसी की मां होगी, तो दूसरे लोग अपनी बहन से, अपनी बेटी से और अपनी मां के साथ इस मामले को कैसे पसन्द करेंगे? यह सुनकर उस नौजवान ने कहा कि या रसूलल्लाह, अब बात समझ में आ गयी। अब मैं दोबारा यह काम नहीं करूंगा। और अब मेरे दिल में इस काम की नफ़रत बैठ गयी है। इस तरीक़े से आपने उसकी इस्लाह फ़रमाई।

एक देहाती का वाक़िआ

एक देहाती मस्जिदे नबवी में आया, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सहाबा-ए-किराम के साथ मस्जिदे नबवी में बैठे हुए थे। उस देहाती ने आकर जल्दी जल्दी दो रक्अतें पढ़ीं, और नमाज़ के बाद यह अजीब व ग़रीब दुआ मांगी कि:

"اَللّٰهُمَّ ارْحَمْنِیْ وَمُحَمَّدًا وَّلَا تَرْحَمْ مَعَنَا اَحَدًا"

ऐ अल्लाह! मुझ पर और हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर रहम कीजिये, और हमारे अलावा किसी पर रहम मत कीजिये।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसकी यह दुआ सुनकर फ़रमाया कि तुमने अल्लाह तआला की कुशादा रहमत को तंग कर दिया। थोड़ी देर के बाद उस देहाती ने मस्जिदे नबवी के सेहन में बैठ कर पेशाब कर दिया। सहाबा-ए-किराम ने जब उसको यह हर्कत करते हुए देखा तो उसको रोकने के लिये उसकी तरफ़ दौड़े। और उसको बुरा भला कहना शुरू कर दिया। जब हुज़ूर सल्लल्लाहु

अलैहि व सल्लम ने देखा तो आपने सहाबा-ए-किराम को रोका और फ़रमाया कि उसका पेशाब मत बन्द करो, उसको पेशाब करने दो। जब वह पेशाब कर चुका तो फिर सहाबा-ए-किराम से फ़रमाया कि अब जाकर मस्जिद को धोकर पाक कर दो। फिर उस देहाती को आपने बुलाकर समझाया कि यह मस्जिद इस मक़सद के लिये नहीं है कि इसमें गन्दगी की जाये, और इसको नापाक किया जाये, यह तो अल्लाह का घर है, इसको पाक रखना चाहिये। इस तरह आपने प्यार और शफ़्क़त के साथ उसको समझा दिया। आज हमारे सामने कोई इस तरह पेशाब कर दे तो हम लोग उसकी तिका बोटी कर दें। लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसको डांटा तक नहीं।

हमारा तब्लीग़ का अन्दाज़

इस हदीस के ज़रिये आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तब्लीग़ व दावत के आदाब बताये। आज या तो लोगों के अन्दर दावत व तब्लीग़ करने का जज़्बा ही पैदा नहीं होता, लेकिन अगर किसी के दिल में यह जज़्ब पैदा हो गया तो बस अब दुनिया वालों पर आफ़त आ गयी। किसी को भी मस्जिद के अन्दर कोई ग़लत काम करते हुए देख लिया तो अब उसको डांट डपट शुरू कर दी। यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत नहीं है। हर बात कहने का एक ढंग और सलीक़ा होता है। उस ढंग से बात कहनी चाहिये। और दिल में यह जज़्बा होना चाहिये कि यह अल्लाह का बन्दा एक ग़लती में किसी वजह से मुब्तला हो गया है, मैं इसको सही बात बता दूं। ताकि यह सही रास्ते पर आ जाये। अपनी बड़ाई जताने का जज़्बा या अपना इल्म बघारने का जज़्बा न हो, क्योंकि यह जज़्बा दावत के असर को ख़त्म कर देता है।

तुम्हारा काम बात पहुंचा देना है

अब एक इश्काल यह होता है कि अगर हम इस तरह प्यार और नर्मी से लोगों को रोकते हैं तो लोग मानते नहीं हैं। इसका जवाब

यह है कि लोगों का मानना तुम्हारी ज़िम्मेदारी नहीं है। बल्कि अपनी बात लोगों तक पहुंचा देना यह तुम्हारी ज़िम्मेदारी है। क़ुरआने करीम में वाक़िआ लिखा है कि एक क़ौम गुमराही में ना फ़रमानी में ग़र्क़ थी। उसकी इस्लाह की कोई उम्मीद नहीं थी, और उन पर अल्लाह का अज़ाब आने वाला था। लेकिन अज़ाब आने से पहले कुछ अल्लाह के नेक बन्दे उनको तब्लीग़ करते रहे और नर्मी से समझाते रहे कि यह काम मत करो। किसी ने उन नसीहत करने वालों से कहाः

"لِمَ تَعِظُونَ قَوْمًا اللّٰهُ مُهْلِكُهُمْ" (سورة الاعراف:١٦٤)

तुम एक ऐसी क़ौम को नसीहत क्यों कर रहे हो जिसको अल्लाह तआला ने हलाक करने का फ़ैसला कर लिया है। अब तो उनकी इस्लाह की कोई उम्मीद नहीं है। उन अल्लाह के नेक बन्दों ने सुब्हानल्लाह क्या अजीब जवाब दिया, फ़रमाया किः

"مَعْذِرَةً اِلٰى رَبِّكُمْ"

यानी यह तो हमें भी मालूम है कि ये लोग दुश्मन हैं, हटधर्म हैं। बात नहीं मानेंगे। लेकिन हम उनको नसीहत कर रहे हैं, ताकि हमारे लिये अल्लाह तआला के सामने कहने का उज़्र हो जायेगा। जब अल्लाह तआला के सामने पेशी होगी, और पूछा जायेगा कि तुम्हारे सामने ये गुनाह हो रहे थे। तुमने उनको रोकने के लिये क्या कोशिश की थी? उस वक़्त हम यह उज़्र पेश कर सकेंगे कि या अल्लाह! ये गुनाह हमारे सामने हो रहे थे, लेकिन हमने अपने तौर पर उनको समझाने की कोशिश की थी, और सही रास्ते पर लाने की कोशिश की थी। ऐ अल्लाह! हम उनके अन्दर शामिल नहीं थे। एक हक़ कह तसफ़ दावत देने वाला और तब्लीग़ करने वाला अपने दिल में इस जवाब देही के एहसास को रखते हुए दावत दे। फिर चाहे कोई माने या न माने, वह इन्शा अल्लाह ज़िम्मेदारी से बरी हो जाएगा। हज़रत नूह अलैहिस्सलाम साढ़े नौ सौ साल तब्लीग़ करते रहे, लेकिन सिर्फ़ १६ आदमी मुसलमान हुए। अब इसका कोई वबाल हज़रत नूह अलैहिस्सलाम पर नहीं होगा, इसलिये कि मुसलमान बना देना उनकी

ज़िम्मेदारी नहीं थी। इसलिये तुम भी हक़ बात हक़ नियत से हक़ तरीक़े से नर्मी और ख़ैर ख़्वाही के जज़्बे से कह दो, इन्शा अल्लाह तुम ज़िम्मेदारी से बरी हो जाओगे। तजुर्बा यह है कि अगर आदमी लगातार इस जज़्बे के साथ बात कहता रहता है तो अल्लाह तआला फ़ायदा भी पहुंचा देता है।

बुराईयों को रोकने का तीसरा दर्जा

तीसरा और आख़री दर्जा इस हदीस में यह बयान फ़रमाया कि अगर किसी के अन्दर हाथ और ज़बान से रोकने की ताक़त नहीं है तो फिर तीसरा दर्जा यह है कि दिल से उसको बुरा समझे, और दिल में यह ख़्याल लाये कि यह काम अच्छा नहीं कर रहा है। लेकिन एक सवाल पैदा होता है कि जब ज़बान से कहने की ताक़त न हो, उस वक़्त यह तीसरा दर्जा आता है, लेकिन ज़बान से कहने की ताक़त तो हर वक़्त इन्सान के अन्दर मौजूद होती है। फिर ज़बान से कहने की ताक़त न होने का क्या मतलब? इसका जवाब यह है कि ज़बान से कहने की ताक़त न होने का मतलब यह है कि यह शख़्स उसको ज़बान से रोक तो देगा, लेकिन उस रोकने के नतीजे में उस अमल से भी ज़्यादा बुरे निकलेंगे। ऐसी सूरत में कभी कभी ख़ामोश रहना बेहतर होता है। जैसे एक शख़्स सुन्नत के ख़िलाफ़ कोई काम कर रहा है। आपको इस बात का यक़ीन है कि अगर मैं उसको रोकूंगा तो यह शख़्स बात मानने के बजाए उल्टा इस सुन्नत का मज़ाक़ उड़ाना शुरू कर देगा। अब अगरचे आपके अन्दर यह ताक़त है कि आप उस से कह दें कि यह अमल सुन्नत के ख़िलाफ़ है, ऐसा मत करो बल्कि सुन्नत के मुताबिक़ करो। लेकिन आपके कहने का नतीजा यह होगा कि अब तक तो वह सिर्फ़ सुन्नत के ख़िलाफ़ कर रहा था, लेकिन अब सुन्नत का मज़ाक़ उड़ायेगा। और उसके नतीजे में कुफ़्र के अन्दर मुब्तला होने का अन्देशा हो जायेगा। ऐसे मौक़े पर कभी कभी ख़ामोश रहना और कुछ न कहना ज़्यादा मुनासिब होता है। और उस वक़्त में सिर्फ़ दिल से बुरा

समझना मुनासिब होता है।

बुराई को दिल से बदलने का मतलब

अगर इस हदीस का सही तर्जुमा किया जाये तो यह तर्जुमा होगा कि अगर किसी शख़्स के अन्दर किसी बुराई को ज़बान से बदलने की ताक़त नहीं है तो उसको अपने दिल से बदल दे। यह नहीं फ़रमाया कि दिल से बुरा समझे, बल्कि दिल से बदलने का हुक्म दिया। अब सवाल यह पैदा होता है कि दिल से बदलने का क्या मतलब है? उलमा–ए–किराम ने इसका मतलब यह बयान फ़रमाया कि अगर कोई शख़्स ताक़त न होने की वजह से हाथ इस्तेमाल न कर सका, न ही ज़बान इस्तेमाल कर सका तो अब उसके दिल में उस बुराई के ख़िलाफ़ इतनी नफ़रत हो, और उसके दिल में इतनी घुटन हो कि उसके चेहरे पर नागवारी का असर आ जाये, और उसकी पेशानी पर बल पड़ जाये, और आदमी मौक़े की तलाश में रहे कि कब मौक़ा आये तो फिर इसको ज़बान और हाथ से बदल दूं। जब इन्सान के दिल में किसी चीज़ की बुराई बैठ जाती है, और दिल में यह जज़्बा और तक़ाज़ा पैदा होता है कि किसी तरह यह बुराई ख़त्म हो जाये तो वह शख़्स दिन रात इस फ़िक्र और सोच में रहता है कि मैं इस बुराई को अपने हाथ से और ज़बान से रोकने के लिये क्या तरीक़ा इख़्तियार करूं। जैसे एक शख़्स की औलाद ख़राब हो गयी, अब अगर बाप जब्र और सख़्ती करता है, और हाथ इस्तेमाल करता है तो उसका फ़ायदा नहीं होता। अगर ज़बान से समझाता है तो उसका असर भी ज़ाहिर नहीं होता। ऐसा शख़्स दिल के अन्दर कितना बेचैन होगा, उसकी रातों की नींदें हराम हो जायेंगी कि मैं किस तरह उसको बुरी आदत से निकाल दूं। ये बेचैनी और बेताबी इन्सान को ख़ुद रास्ता समझा देती है कि किस मौक़े पर किस तरह बात कहूं, और किस तरह उसके दिल में अपनी बात उतार दूं। उसके नतीजे में एक न एक दिन उसकी बात का असर होगा।

अपने अन्दर बेचैनी पैदा करें

आज हमारे समाज में जितने मुन्करात, बुराईयां और गुनाह खुलेआम हो रहे हैं। फ़र्ज़ करें कि आज हमारे अन्दर उनको हाथ से बदलने की ताक़त नहीं है, ज़बान से कहने की ताक़त नहीं, लेकिन अगर हम में से हर शख़्स अपने दिल के अन्दर यह बेचैनी पैदा कर ले कि समाज के अन्दर यह क्या हो रहा है, इन बुराईयों को किसी तरह रुकना चाहिये। और यह बेचैनी और बेताबी इस दर्जा में होनी चाहिये जिस तरह एक आदमी के पेट में दर्द हो रहा हो। जब तक वह दर्द ख़त्म नहीं हो जाता उस वक़्त तक इन्सान बेचैन रहता है। इसी तरह हम सब के दिलों में यह बेचैनी और बेताबी पैदा हो जाये तो उसके नतीजे में आख़िरकार समाज से यह मुन्करात और बुराईयां ख़त्म हो जयेंगी, और इन बुराईयों को रोकने का रास्ता मिल जायेगा।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और बेचैनी

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक ऐसे समाज के अन्दर तशरीफ़ लाये थे जहां गुनाह तो गुनाह, बल्कि शराब, कुफ़्र, बुत परस्ती, अल्लाह तआ़ला के साथ खुल्लम खुल्ला बग़ावत, खुलेआम ना फ़रमानियां हो रही थीं, कोई शख़्स भी बात सुनने को तैयार नहीं था, उस वक़्त आपको यह हुक्म दिया गया कि उन सब की इस्लाह आपको करनी है। नुबुव्वत दिए जाने के बाद तीन साल ऐसे गुज़रे हैं कि उनमें आपको तब्लीग़ और दावत की भी इजाज़त नहीं थी। उन तीन साल के अन्दर आप समाज में होने वाली बुराईयों को देखते रहे, और ग़ारे हिरा की तन्हाईयों में जाकर अल्लाह जल्ल शानुहू से मुनाजात फ़रमा रहे हैं और समाज में होने वाली बुराईयों को देख कर तबीयत में एक घुटन और एक बेचैनी पैदा हो रही है, कि किस तरह इसको दूर करूं। आख़िरकार आपकी यह बेचैनी और बेताबी रंग लाती है और उसके बाद जब आपको तब्लीग़ और दावत की

इजाज़त मिलती है तो फिर आप उसी बुरे माहौल के अन्दर अपनी दावत के ज़रिये इन्क़िलाब बरपा फ़रमाते हैं। उस बेचैनी और बेताबी का ज़िक्र कुरआने करीम ने इस तरह फ़रमाया है कि:

"لَعَلَّكَ بَاخِعٌ نَّفْسَكَ اَنْ لَّا يَكُوْنُوْا مُؤْمِنِيْنَ" (سورة الشعرآء:٣)

क्या आप अपनी जान को इस अन्देशे में हलाक कर डालेंगे कि ये लोग ईमान क्यों नहीं लाते?"

अल्लाह तआला हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को तसल्ली देते हुए फ़रमाते हैं कि: "इन् अलै-क इल्लल् बलाग़" आपके ज़िम्मे सिर्फ़ तब्लीग़ का फ़रीज़ा है, आप अपनी जान को हलाक न कीजिये, और इतने परेशान न हों। लेकिन आपके दिल में इस क़द्र बेचैनी थी कि जो शख़्स भी आपके पास आता, आप उसके बारे में यह ख़्वाहिश करते कि किसी तरह इसको जहन्नम के अज़ाब से बचा लूं और दीन की बात इसके दिल में उतार दूं।

हमने हथियार डाल दिये हैं

आज हमारे अन्दर यही ख़राबी है कि हमारे अन्दर वह बेचैनी और बेताबी नहीं है, अव्वल तो आज बुराईयों को बुरा समझने के लाले पड़े हुए हैं। समाज और माहौल के असर से हमारी यह हालत हो गयी है कि अगर हम में से कोई शख़्स बुराई नहीं भी कर रहा है, बल्कि खुद उनसे बचा हुआ है, वह सिर्फ़ यह सोच कर बचा हुआ है कि अब तो बुढ़ापा आ गया, जवानी ख़त्म हो गयी, अब क्या मैं अपने तरीक़ा-ए-कार में तब्दीली पैदा करूं, इस शर्म से वह अपनी ज़िन्दगी के पुराने तरीक़े को नहीं बदल रहा है। लेकिन औलाद जिस ग़लत रास्ते पर जा रही है उसकी बुराई दिल के अन्दर नहीं है, अगर दिल में बुराई होती तो उसके लिये बेचैन और बेताब होता। मालूम हुआ कि दिल में उनकी बुराई मौजूद नहीं। और औलाद के बारे में यह सोच लिया है कि हमने अपनी ज़िन्दगी गुज़ार ली है, यह नई नस्ल के लोग हैं। अगर इन्होंने अपनी खुश गप्पियों और खेल कूद के नए

तरीके निकाल लिये हैं तो चलो इनको करने दो। यह सोच कर ख़ामोश बैठ जाते हैं और उनको नहीं रोकते। और दिल में उनकी तरफ़ से कोई बेचैनी और बेताबी नहीं है।

बात में तासीर कैसे पैदा हो?

जब इन्सान के दिल में समाज की तरफ़ से बेचैनी और बेताबी पैदा हो जाती है तो फिर अल्लाह तआला उसकी बात में तासीर भी पैदा फ़रमा देते हैं। हज़रत मौलाना नानौतवी साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि "असल में तब्लीग़ व दावत का हक़ उस शख़्स को पहुंचता है जिसके दिल में तब्लीग़ व दावत का जज़्बा ऐसा हो गया हो, जैसे लाज़मी ज़रूरतों को पूरा करने का जज़्बा पैदा होता है। जैसे भूख लग रही है और जब तक खाना नहीं खा लेगा चैन नहीं आयेगा। जब तक ऐसा जज़्बा दिल के अन्दर पैदा न हो उस वक़्त तक उसको दावत व तब्लीग़ का हक़ नहीं है। जैसे हज़रत शाह इसमाईल शहीद रह्मतुल्लाहि अलैहि थे कि अल्लाह तआला ने उनके दिल में तब्लीग़ व दावत का ऐसा ही जज़्बा पैदा फ़रमा दिया था, जिसका नतीजा यह था कि उनके एक एक वाज़ (तक़रीर) में सैंकड़ों इन्सान उनके हाथ पर गुनाह से तौबा करते थे। इसलिये कि बात दिल से निकलती थी और दिल पर असर डालती थी।

हज़रत शाह इसमाईल शहीद रह. का एक वाक़िआ

हज़रत शाह इसमाईल शहीद रह्मतुल्लाहि अलैहि का वाक़िआ है कि एक बार देहली की जामा मस्जिद में डेढ़ दो घन्टे वाज़ फ़रमाया। वाज़ (तक़रीर) से फ़ारिग़ होने के बाद आप जामा मस्जिद की सीढ़ियों से नीचे उतर रहे थे, इतने में एक शख़्स भागता हुआ मस्जिद के अन्दर आया, और आप ही से पूछा कि क्या मौलवी इसमाईल साहिब का वाज़ ख़त्म हो गया? आपने जवाब दिया कि हां भाई, ख़त्म हो गया। उसने कहा मुझे बहुत अफ़सोस हुआ, इसलिये कि मैं तो बहुत दूर से वाज़ सुनने के लिये आया था। आपने पूछा

कि कहां से आये थे? उसने जवाब दिया कि फलां गांव से आया था। और इस ख़्याल से आया था कि मैं उनका वाज़ सुनूंगा। अफ़सोस कि उनका वाज़ ख़त्म हो गया और मेरा आना बेकार हो गया। हज़रत मौलाना ने फ़रमाया कि तुम परेशान मत हो, मेरा ही नाम इसमाईल है। आओ यहां बैठ जाओ, चुनांचे उसको वहीं सीढ़ियों पर बिठा दिया। फ़रमाया कि मैंने ही वाज़ कहा था, मैं तुम्हें दोबारा सुना देता हूं, जो कुछ मैंने वाज़ में कहा था। चुनांचे सीढ़ियों पर बैठ कर सारा वाज़ दोहरा दिया। बाद में किसी शख़्स ने कहा कि हज़रत! आपने कमाल कर दिया कि सिर्फ़ एक आदमी की ख़ातिर पूरा वाज़ दोबारा दोहरा दिया? जवाब में मौलाना ने फ़रमाया कि मैंने पहले भी एक ही की ख़ातिर वाज़ कहा था, और दोबारा भी एक ही की ख़ातिर कहा। यह मजमा कोई हकीकत नहीं रखता, जिस एक अल्लाह की ख़ातिर पहली बार कहा था, दूसरी बार भी उसी एक अल्लाह की ख़ातिर कह दिया। यह थे हज़रत मौलाना शाह मुहम्मद इसमाईल शहीद रह्मतुल्लाहि अलैहि। ऐसा जज़्बा अल्लाह तआला ने उनके दिल में पैदा फ़रमा दिया था। अल्लाह तआला अपनी रहमत से इस इख़्लास और जज़्बे और इस बेचैनी और बेताबी का कोई हिस्सा हमारे दिलों में भी पैदा फ़रमा दे कि इन बुराईयों को देख कर यह बेचैनी और बेताबी पैदा हो जाये कि इन बुराईयों को किस तरह ख़त्म किया जाये, और किस तरह मिटाया जाये।

याद रखिये! जिस दिन हमारे दिलों में यह बेताबी और बेचैनी पैदा हो गयी, उस दिन आदमी कम से कम अपने घर की इस्लाह तो ज़रूर कर लेगा, अगर घर की इस्लाह नहीं हो रही है तो इसका मतलब यह है कि ऐसी बेचैनी और बेताबी दिल में मौजूद नहीं है, बल्कि आदमी वक़्त गुज़ार रहा है।

ख़ुलासा

बहर हाल! हर इन्सान के ज़िम्मे इन्फ़िरादी तब्लीग़ फ़र्ज़े ऐन है,

जब इन्सान अपने सामने कोई बुराई होती हुई देखे तो उस बुराई को ख़त्म करने की कोशिश करे। पहले हाथ से ख़त्म करने की कोशिश करे, अगर हाथ से न हो सके तो ज़बान से रोकने की कोशिश करे, और अगर ज़बान से न हो सके तो दिल से उसको बुरा जाने। अल्लाह तआला हमें इन तमाम बातों पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

واخردعوانا ان الحمد لله رب العالمين

जन्नत के नज़ारे

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ۔

"وَتِلْكَ الْجَنَّةُ الَّتِىْٓ اُوْرِثْتُمُوْهَا بِمَاكُنْتُمْ تَعْمَلُوْنَ، لَكُمْ فِيْهَافَاكِهَةٌ كَثِيْرَةٌمِّنْهَا تَاْكُلُوْنَ" (الزخرف: ٧٢،٧٣)

اٰمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظيم وصدق رسوله النبى الكريم، ونحن علىٰ ذالك من الشاهدين والشاكرين، والحمد للّٰه رب العالمين۔

आख़िरत के हालात जानने का रास्ता

मुहतरम बुज़ुर्गो और प्यारे भाईयो! मरने के बाद के हालात के जानने का इन्सान के पास कोई रास्ता नहीं है, कोई इल्म, कोई फ़न, कोई मालूमात ऐसी नहीं हैं जो इन्सान को मरने के बाद के हालात से बा ख़बर कर सके। जो शख़्स इस दुनिया से वहां चला जाता है उसको वहां के हालात की ख़बर होती है, लेकिन हमें फिर उस जाने वाले की ख़बर नहीं रहती।

एक बुज़ुर्ग का अजीब क़िस्सा

मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि एक बुज़ुर्ग का क़िस्सा सुनाया करते थे, कि एक बुज़ुर्ग थे, उनके मुरीदों ने एक बार उन बुज़ुर्ग से कहा कि हज़रत! जो शख़्स भी मरने के बाद इस दुनिया से जाता है, वह ऐसा जाता है कि पलट कर ख़बर नहीं लेता, न तो यह बताता है कि कहां पुहंचा,

और न यह बताता है कि उसके साथ क्या मामला हुआ, और न यह बताता है कि उसने क्या मनाज़िर देखे। कोई ऐसी तदबीर बताइये कि हमें भी वहां की कोई ख़बर मिल जाये। उन बुज़ुर्ग ने फ़रमाया: ऐसा करो कि जब मेरा इन्तिक़ाल हो जाये और मुझे क़ब्र में दफ़न कर दो तो क़ब्र के अन्दर मेरे पास तुम एक काग़ज़ और क़लम रख देना, मुझे अगर मौक़ा मिला तो मैं तुम्हें वहां की ख़बर बतला दूंगा कि वहां क्या वाक़िआत पेश आये। लोग बहुत ख़ुश हुए कि चलो कोई बताने वाला तो मिला।

जब उन बुज़ुर्ग का इन्तिक़ाल हुआ तो उनकी वसीयत के मुताबिक़ उनको दफ़न करते वक़्त उनके साथ एक काग़ज़ और क़लम भी रख दिया। उन बुज़ुर्ग ने यह भी वसीयत की थी कि दूसरे दिन क़ब्र पर आकर वह काग़ज़ उठा लेना, उस पर तुम्हें लिखा हुआ मिलेगा। चुनांचे अगले दिन लोग उनकी क़ब्र पर पहुंचे तो देखा कि एक पर्चा उनकी क़ब्र पर लिखा हुआ पड़ा है। उस पर्चे को देख कर लोग बहुत ख़ुश हुए कि आज हमें उस दुनिया की ख़बर मिल जायेगी, लेकिन जब पर्चा उठा कर पढ़ा तो उस पर यह लिखा हुआ था कि:

"यहां के हालात देखने वाले हैं, बताने वाले नहीं"।

अल्लाह ही जानते हैं कि यह वाक़िआ कैसा है? सच्चा है या झूठा है? अल्लाह तआला की कुदरत में तो है कि ऐसा कर देते। इसलिये यह वाक़िआ सच्चा भी हो सकता है और झूठा और मन घड़त भी हो सकता है। लेकिन हकीक़त यही है कि वहां के हालात बताने के नहीं हैं, देखने के हैं। इसी वजह से अल्लाह तआला ने वहां के हालात को ऐसा राज़ के अन्दर रखा है कि किसी पर ज़रा सा ज़ाहिर नहीं होता। बस कुरआन में अल्लाह तआला ने और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हदीसों में जितनी बातें बता दीं उस से ज़्यादा किसी को वहां के हालात के बारे में मालूम होने का कोई रास्ता नहीं। कुरआन और हदीस के ज़रिये जो हालात हम

तक पहुंचे हैं, उनको यहां थोड़ा सा बयान करना मक़सूद है।

अदना जन्नती की जन्नत का हाल

चुनांचे हज़रत मुग़ीरा बिन शोबा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है, वह फ़रमाते हैं कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने अल्लाह तआला से पूछा कि ऐ परवर्दिगार! जन्नत वालों में सब से कम दर्जा किसका होगा? और सब से अदना आदमी जन्नत में कौन होगा? जवाब में अल्लाह तआला ने इर्शाद फ़रमाया कि जब सारे जन्नती जन्नत में चले जायेंगे और जहन्नम वाले जहन्नम में चलें जायेंगे, एक आदमी जन्नत में जाने से रह गया होगा और जन्नत के आस पास के इलाक़े में बैठा होगा, अल्लाह तआला उस से फ़रमायेंगे कि जब तुम दुनिया में थे उस वक़्त तुमने बड़े बड़े बादशाहों का ज़िक्र सुना होगा, उन बादशाहों में से अपनी मर्ज़ी से चार बादशाहों का चयन करके मेरे सामने बयान करो, और फिर उन बादशाहों की हुकूमतों के जितने हिस्से थे, उनमें से जितने हिस्सों का तुम नाम बयान कर सकते हो बयान करो। चुनांचे वह शख़्स कहेगा कि या अल्लाह! मैंने फ़लां फ़लां बादशाह का ज़िक्र सुना था, उनकी हुकूमत बहुत बड़ी थी, उनको बड़ी नेमतें मिली हुई थीं। मेरा दिल चाहता है कि मुझे भी वैसी ही हुकूमत मिल जाये। इस तरह वह एक एक करके चार मुख़्तलिफ़ बादशाहों की हुकूमत का नाम लेगा। अल्लाह तआला उस से फ़रमायेंगे कि तुमने उनकी हुकूमतों के और उनके इलाक़ों के नाम तो बता दिये, लेकिन उन बादशाहों को जो लज़्ज़तें हासिल थीं और उनके बारे में तुमने सुना होगा कि फ़लां बादशाह ऐसे ऐश व आराम में है, उन लज़्ज़तों में से जो लज़्ज़त तुम हासिल करना चाहते हो, उनका ज़िक्र करो। चुनांचे वह शख़्स उन लज़्ज़तों का ज़िक्र करेगा कि मैंने सुना था कि फ़लां बादशाह को यह नेमत हासिल थी, फ़लां बादशाह को यह लज़्ज़त हासिल थी, ये लज़्ज़तें मुझे भी मिल जायें।

फिर अल्लाह तआला उस से सवाल करेंगे कि जिन बादशाहों का तुमने नाम लिया है और उनकी जिन हुकूमतों को तुमने गिनवाया है

और उनकी जिन नेमतों और लज़्ज़तों का तुमने ज़िक्र किया है, अगर वे तुम्हें मिल जायें तो तुम राज़ी हो जाओगे? वह बन्दा अर्ज़ करेगा कि या अल्लाह! इस से बड़ी और क्या नेमत हो सकती है, मैं तो ज़रूर राज़ी हो जाऊंगा। अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे कि अच्छा तुमने जितनी हुकूमतों का नाम लिया और उनकी जिन नेमतों और लज़्ज़तों का तुमने नाम लिया उस से दस गुना ज़्यादा तुम्हें अ़ता करता हूं। अल्लाह तआ़ला हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से फ़रमायेंगे कि जन्नत का सब से कमतर आदमी जिसको सब से अदना दर्जे की जन्नत मिलेगी वह यह शख़्स होगा। मूसा अ़लैहिस्सलाम फ़रमायेंगे कि या अल्लाह! जब अदना आदमी का यह हाल है तो जो आपके पसन्दीदा बन्दे होंगे जिनको आला तरीन दर्जे अ़ता किये गये होंगे, उनका क्या हाल होगा? जवाब में अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे कि ऐ मूसा! जो मेरे पसन्दीदा बन्दे होंगे उनके इकराम (सम्मान) की चीज़ें तो मैंने अपने हाथ से बनाकर उनको ख़ज़ानों में मुहर लगा कर महफ़ूज़ करके रख दी हैं, और उनमें वे चीज़ें हैं कि:

"مالم ترعين ولم يسمع اذن ولم يخطر على قلب احد من الخلق"

यानी वे नेमतें ऐसी हैं कि आज तक किसी आंख ने नहीं देखा, और आज तक किसी कान ने उनका ज़िक्र नहीं सुना, और आज तक किसी इन्सान के दिल पर उनका ख़्याल भी नहीं गुज़रा। ऐसी नेमतें मैंने तैयार करके रखी हुई हैं।

एक और अदना जन्नती की जन्नत

एक और हदीस में ख़ुद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक शख़्स का हाल बयान फ़रमाया, कि सब से आख़िर में जो शख़्स जन्नत में दाख़िल होगा, वह ऐसा शख़्स होगा जो अपने बुरे आमाल की सज़ा में जहन्नम में डाल दिया जायेगा, क्योंकि अगर आदमी चाहे मोमिन ही क्यों न हो, लेकिन अगर आमाल ख़राब किये हैं तो पहले उसको उन आमाल की सज़ा भुगतनी पड़ेगी, इसलिये

उसको पहले जहन्नम में डाल दिया जायेगा। अब वह शख़्स जहन्नम में झुलस रहा होगा तो उस वक़्त वह अल्लाह तआला से कहेगा कि या अल्लाह! इस जहन्नम की तपिश और इसकी गर्मी ने तो मुझे झुलसा दिया है, आपकी बड़ी मेहरबानी होगी कि आप मुझे थोड़ी देर के लिये जहन्नम से निकाल कर ऊपर किनारे पर बिठा दें, ताकि मैं थोड़ी देर के लिये जलने से बच जाऊं।

अल्लाह तआला उस से फ़रमायेंगे कि अगर हम तुम्हें वहां बिठा देंगे तो तुम कहोगे कि मुझे और आगे पहुंचा दो। वह बन्दा कहेगा कि या अल्लाह! मैं वायदा करता हूं कि बस एक बार यहां से निकाल कर ऊपर बिठा दें, फिर आगे जाने के लिये नहीं कहूंगा। अल्लाह तआला फ़रमायेंगे कि अच्छा हम तुम्हारी बात मान लेते हैं। चुनांचे उसको जहन्नम से निकाल कर ऊपर बिठा दिया जायेगा। जब वहां थोड़ी देर तक बैठेगा और कुछ उसके होश हवास ठिकाने पर आयेंगे तो थोड़ी देर के बाद कहेगा कि या अल्लाह! आपने मुझे यहां बिठा दिया और जहन्नम से निकाल तो दिया लेकिन अभी जहन्नम की लपट यहां तक आ रही है, थोड़ी देर के लिये और दूर कर दें कि यह लपट भी न आये।

अल्लाह तआला फ़रमायेंगे कि तुमने अभी वायदा किया था कि आगे जाने के लिये नहीं कहूंगा, अब तू वायदा ख़िलाफ़ी कर रहा है? वह कहेगा या अल्लाह! मुझे थोड़ा और आगे बढ़ा दें तो फिर मैं कुछ नहीं कहूंगा और कुछ नहीं मागूंगा। चुनांचे अल्लाह तआला उसको थोड़ा सा और दूर कर देंगे। और अब उसको उस जगह से जन्नत नज़र आने लगेगी। फिर थोड़ी देर के बाद कहेगा कि या अल्लाह! आपने मुझे जहन्नम से निकाल दिया और अब मुझे यह जन्नत नज़र आ रही है, आप थोड़ी इजाज़त दे दें कि मैं उस जन्नत का थोड़ा सा नज़ारा कर लूं और उसके दरवाज़े के पास जाकर देख आऊं कि यह जन्नत कैसी है। अल्लाह तआला फ़रमायेंगे कि तू फिर वायदा ख़िलाफ़ी कर रहा है। वह शख़्स कहेगा कि या अल्लाह! जब आपने

अपने करम से यहां तक पहुंचा दिया तो एक झलक मुझे जन्नत की भी दिखा दें। अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे कि जब तुम्हें एक नज़र जन्नत की दिखाऊंगा, तू कहेगा कि मुझे ज़रा अन्दर भी दाख़िल कर दें। वह शख़्स कहेगा कि नहीं, या अल्लाह! मुझे सिर्फ़ जन्नत की एक झलक दिखा दें, उसके बाद फिर कुछ नहीं कहूंगा।

चुनांचे अल्लाह तआ़ला उसको जन्नत की एक झलक दिखा देंगे। लेकिन जन्नत की एक झलक देखने के बाद वह अल्लाह तआ़ला से कहेगा या अल्लाह! आप सब से ज़्यादा रहम करने वाले हैं? जब आपने मुझे जन्नत के दरवाज़े तक पहुंचा दिया तो अब ऐ अल्लाह! अपने फ़ज़्ल से मुझे अन्दर भी दाख़िल फ़रमा दें। अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे कि देख हम तुझ से पहले ही कह रहे थे कि तू वायदा ख़िलाफ़ी करेगा, लेकिन चल, जब हमने तुझे अपनी रहमत से यहां तक पहुंचा दिया तो अब हम तुझे उसमें दाख़िल भी कर देते हैं, और जन्नत में तुझे इतना बड़ा रक़बा देते हैं जितना पूरी ज़मीन का रक़बा है। वह शख़्स कहेगा या अल्लाह! आप सब से ज़्यादा रहम करने वाले हैं और मेरे साथ मज़ाक़ करते हैं? मैं कहां और जन्नत का इतना बड़ा रक़बा कहां? अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे कि मैं मज़ाक़ नहीं करता हूं। तुम्हें वाक़ई जन्नत का इतना बड़ा रक़बा अ़ता किया जाता है।

हंसते हुए बयान फ़रमाई हुई हदीस

हदीस शरीफ़ में आता है कि हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह हदीस हंसते हुए बयान फ़रमाई, और फिर जिन सहाबी ने यह हदीस सुनी थी उन्होंने भी यह हदीस अपने शागिर्दों के सामने हंसते हुए बयान फ़रमाई, फिर उन्होंने अपने शागिर्दों को हंसते हुए बयान फ़रमाई, यहां तक कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के वक़्त से लेकर आज तक जब भी यह हदीस बयान की जाती है तो बयान करने वाला भी हंसता है और सुनने वाले भी हंसते हैं। इसी वजह से यह हदीस "मुसलसल बिज़्ज़हक" कहलाती है।

पूरी ज़मीन के रक़बे के बराबर जन्नत

बहर हाल, यह वह शख़्स होगा जो सब से आख़िर में जन्नत में दाख़िल किया जायेगा। अब आप अन्दाज़ा करें कि सब से आख़िर में जन्नत में दाख़िल होने वाले के बारे में यह कहा जा रहा है कि जितना पूरी ज़मीन का रक़बा है, उतना हिस्सा जन्नत में अ़ता किया जायेगा, तो फिर ऊपर के दर्जे वालों का क्या हाल होगा और उनको जन्नत में कितना बड़ा मक़ाम दिया जायेगा। बात असल में यह है कि हम इस दुनिया की चार दिवारी में बैठे हुए हैं, हमें उस दुनिया की हवा भी नहीं लगी, इस वजह से उस दुनिया के इतना बड़ा होने का कोई अन्दाज़ा कर ही नहीं सकते। इसी लिये हमें इस पर ताज्जुब होता है कि एक आदमी को पूरी ज़मीन के रक़बे के बराबर जगह कैसे मिलेगी? और मिल भी जायेगी तो वह इतनी बड़ी ज़मीन लेकर क्या करेगा? यह इश्काल भी इसलिये हो रहा है कि उस दुनिया की हमें हवा भी नहीं लगी।

आख़िरत की मिसाल

इस आ़लम यानी आख़िरत के मुक़ाबले में हमारी मिसाल ऐसी है जैसे मां के पेट में बच्चा, उस बच्चे को इस दुनिया की हवा नहीं लगी होती, इसलिये वह बच्चा इस दुनिया की वुस्अ़तों (लम्बाई चौड़ाई) का अन्दाज़ा नहीं कर सकता। वह बच्चा मां के पेट ही को सब कुछ समझता है, लेकिन जब वह बच्चा दुनिया में आता है तो उस वक़्त उसको पता चलता है कि मां का पेट तो इस दुनिया के मुक़ाबले में कुछ भी नहीं था। अल्लाह तआ़ला हम सब को आख़िरत का आ़लम अपनी रिज़ा के साथ दिखा दे तो पता चले कि वह आख़िरत की दुनिया क्या चीज़ है, और उसके अन्दर कितनी वुस्अ़त है। और वह दुनिया मोमिनों के लिये तैयार की गई है।

यह जन्नत तुम्हारे लिये है

हमारे हज़रत डा. अ़ब्दुल हई साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि

फ़रमाया करते थे कि अल्हम्दु लिल्लाह, जन्नत मोमिनों के लिये तैयार की गयी है। ईमान वाले के लिये तैयार की गयी है। अगर तुम अल्लाह जल्ल जलालुहू पर ईमान रखते हो तो यक़ीन करो कि वह तुम्हारे लिये ही तैयार की गयी है, हां लेकिन उस जन्नत तक पहुंचने के लिये और उसके रास्तों की रुकावटों को दूर करने के लिये थोड़ा सा काम करना है, बस वह काम कर लो तो इन्शा अल्लाह वह जन्नत तुम्हारी है और तुम्हारे लिये तैयार की गयी है। अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत और अपने फ़ज़्ल व करम से हम सब को जन्नत अ़ता फ़रमाये, आमीन।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि. और आख़िरत का ध्यान

एक रिवायत में आता है कि हज़रत सईद बिन मुसैयब रह. जो बड़े दर्जे के ताबिईन में से हैं, और बड़े औलिया अल्लाह में से हैं। हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु के शागिर्द हैं। वह फ़रमाते हैं कि एक बार मैं अपने उस्ताद हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु के साथ जुमा के दिन किसी बाज़ार में चला गया, उनको कोई चीज़ ख़रीदनी थी। चुनांचे बाज़ार जाकर वह चीज़ ख़रीद ली, जब बाज़ार से वापस लौटने लगे तो हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने मुझ से फ़रमाया कि ऐ सईद! मैं दुआ करता हूं कि अल्लाह तआ़ला मुझे और तुम्हें दोनों को जन्नत के बाज़ार में जमा कर दे। हज़रात सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम की शान देखिये कि वे हर आन और हर लम्हे आख़िरत की कोई न कोई बात मामूली सी मुनासबत से निकाल कर उसके ध्यान को और उसके ज़िक्र को ताज़ा करते रहते थे, ताकि दुनिया की मश्गूलियात इन्सान को इस तरह अपने अन्दर मश्गूल न कर दें कि इन्सान आख़िरत को भूल जाये। इसलिये दुनिया का काम कर रहे हैं, बाज़ार में ख़रीदारी कर रहे हैं और ख़रीदारी के दौरान शागिर्द के सामने यह दुआ कर दी।

जन्नत के अन्दर बाज़ार

हज़रत सईद बिन मुसैयब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि मैंने हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से पूछा कि क्या जन्नत में भी बाज़ार होंगे? इसलिये कि हमने यह सुना है कि जन्नत में हर चीज़ मुफ्त मिलेगी और बाज़ार में ख़रीद व बेच होती है। जवाब में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि वहां पर भी बाज़ार होंगे। मैंने हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से सुना है कि हर जुमा के दिन जन्नत में जन्नत वालों के लिये बाज़ार लगा करेगा। फिर इसकी तफ़सील हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह बयान फ़रमाई है कि जब जन्नत वाले जन्नत में चले जायेंगे और सब लोग अपने अपने ठिकानों पर पहुंच जायेंगे, और ख़ूब ऐश और आराम से ज़िन्दगी गुज़ार रहे होंगे और वहां उनको इतनी नेमतें दी जायेंगी कि वहां से कहीं और जाने का तसव्वुर भी नहीं करेंगे। तो अचानक यह ऐलान होगा कि तमाम जन्नत वालों को दावत दी जाती है कि वे अपने अपने ठिकानों से बाहर आ जायें और एक बाज़ार की तरफ़ चलें, चुनांचे जन्नत वाले अपने अपने ठिकानों से बाहर निकलेंगे और बाज़ार की तरफ़ चल पड़ेंगे। वहां जाकर एक ऐसा बाज़ार देखेंगे जिसमें ऐसी अजीब व ग़रीब चीज़ें नज़र आयेंगी जो जन्नत वालों ने उस से पहले कभी देखी नहीं होंगी, और उन चीज़ों से दुकानें सजी होंगी, लेकिन ख़रीद और बेच नहीं होगी बल्कि यह ऐलान होगा कि जिस जन्नती को जो चीज़ पसन्द हो वह दुकान से उठा ले और ले जाये। चुनांचे जन्नती एक तरफ़ से दूसरी तरफ़ बाज़ार में दुकानों के अन्दर अजीब व ग़रीब चीज़ों का नज़ारा करते हुए जायेंगे और एक से एक नेमत उनको नज़र आयेगी, और जिस जन्नती को जो चीज़ पसन्द आयेगी वह उसको उठा कर ले जायेगा।

जन्नत में अल्लाह तआला का दरबार

जब बाज़ार की ख़रीदारी ख़त्म हो जायेगी तो उसके बाद

अल्लाह तआला की तरफ़ से यह ऐलान होगा कि अब सब लोगों का अल्लाह तआला के दरबार में एक इज्तिमा होगा, और यह कहा जायेगा कि आज वह दिन है कि जब दुनिया में तुम रहते थे तो वहां जुमा का दिन आया करता था तो तुम लोग जुमा की नमाज़ के लिये अपने घरों से निकल कर एक जगह जमा हुआ करते थे, तो आज जुमा के इज्तिमा का बदल जन्नत के इज्तिमा की सूरत में अ़ता फ़रमा रहे हैं, और अल्लाह तआला का दरबार लगा हुआ है, वहां पर हाज़िर होने की दावत दी जाती है। चुनांचे तमाम जन्नती अल्लाह तआला के उस दरबार में पहुंचेंगे। उस दरबार में हर शख़्स के लिये पहले से कुर्सियां लगी होंगी, किसी की कुर्सी जवाहिरात से बनी होगी, किसी की कुर्सी सोने से बनी होगी, किसी की कुर्सी मोतियों से बनी होगी और किसी की कुर्सी चांदी से बनी होगी। इस तरह दर्जों के मुताबिक़ कुर्सियां होंगी। जो शख़्स जितना आला दर्जे का होगा उसकी कुर्सी उतनी ही शानदार होगी। उन पर जन्नती लोगों को बिठाया जायेगा। और हर शख़्स अपनी कुर्सी को इतना अच्छा समझेगा कि उसको यह हसरत नहीं होगी कि काश मुझे वैसी कुर्सी मिल जाती जैसी फ़लां शख़्स की कुर्सी है। क्योंकि उस जन्नत की दुनिया में ग़म और हसरत का कोई तसव्वुर नहीं है, इसलिये उसको उम्दा की ख़्वाहिश ही नहीं होगी।

और जन्नत में जो सब से कम रुतबे के लोग होंगे उनके लिये कुर्सियों के चारों तरफ़ मुश्क व अंबर के टीले होंगे। उन टीलों पर उनकी नशिस्तें मुक़र्रर होंगी, उस पर उनको बिठा दिया जायेगा। जब सब जन्नत वाले अपनी अपनी बैठने की जगहों पर बैठ जायेंगे तो उसके बाद अल्लाह के दरबार का आग़ाज़ इस तरह होगा कि हज़रत इस्राफ़ील अ़लैहिस्सलाम (जिन्होंने क़ियामत का सूर फूंका था) से अल्लाह तआला ऐसी आवाज़ में अपना कलाम और नग़मा सुनवायेंगे कि सारी दुनिया की आवाज़ें और मौसीक़ियां उसके सामने हेच और कमतर होंगी।

मुश्क व ज़ाफ़रान की बारिश

नग़मा और कलाम सुनवाने के बाद आसमान पर बादल छा जायेंगे, जैसे घटा आ जाती है और ऐसा महसूस होगा कि अब बारिश होने वाली है। लोग उन बादलों की तरफ़ देख रहे होंगे, इतने में तमाम दरबार वालों के ऊपर मुश्क और ज़ाफ़रान का छिड़काव उन बादलों से किया जायेगा और उनके नतीजे में ख़ुशबू में पूरा दरबार महक जायेगा, और वह ख़ुशबू ऐसी होगी कि उस से पहले न किसी ने सूंघी होगी और न उसका तसव्वुर किया होगा।

फिर अल्लाह तआ़ला के हुक्म से एक हवा चलेगी और उस हवा के चलने की नतीजे में हर इन्सान को ऐसी फ़रहत और ताज़गी हासिल होगी कि उसकी वजह से उसका हुस्न व ख़ूबसूरती दोगुनी हो जायेगी। उसकी सूरत और उसका सरापा पहले से कहीं ज़्यादा हसीन और ख़ूबसूरत हो जायेगा। फिर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से जन्नत का मश्रूब (पीने की चीज़) तमाम हाज़िर लोगों को पिलाया जाएगा, वह मश्रूब ऐसा होगा कि दुनिया के किसी मश्रूब (पीने की चीज़) से उसको तश्बीह नहीं दी जा सकती।

जन्नत की सब से बड़ी नेमत "अल्लाह का दीदार"

उसके बाद अल्लाह तआ़ला पूछेंगे कि ऐ जन्नत वालो! यह बताओ कि दुनिया में जो हमने तुम से वायदे किये थे कि तुम्हारे नेक आमाल और ईमान के बदले में हम तुम्हें फ़लां फ़लां नेमतें देंगे, क्या वे सारी नेमतें तुम्हें मिल गईं या कुछ नेमतें बाक़ी हैं? तो सारे जन्नती एक ज़बान होकर अर्ज़ करेंगे कि या अल्लाह! इनसे बड़ी नेमत और क्या होगी जो आपने हमें अ़ता फ़रमा दी हैं। आपने तो सारे वायदे पूरे फ़रमा दिये, हमारे तमाम आमाल का बदला हमको मिल गया। सारी नेमतें हमको अ़ता फ़रमा दीं, अब इसके बाद हमें किसी नेमत की ख़्वाहिश नज़र नहीं आती, सारी राहतें हासिल हो गयीं, सारी लज़्ज़तें हासिल हो गयीं, अब और क्या नेमत बाक़ी है?

लेकिन रिवायत में आता है कि उस वक़्त भी उलमा काम आयेंगे। चुनांचे लोग उलमा की तरफ़ रुजू करेंगे कि आप बतायें कि कौन सी नेमत ऐसी है जो अभी बाक़ी रह गयी है और हमें नहीं मिली है। चुनांचे उलमा बतायेंगे कि एक नेमत बाक़ी है, वह अल्लाह तआला से मांगो। वह है अल्लाह तआला का दीदार। चुनांचे तमाम जन्नत वाले एक ज़ुबान होकर अर्ज़ करेंगे कि या अल्लाह! एक बड़ी नेमत बाक़ी है, वह है आपका दीदार। उस वक़्त अल्लाह तआला फ़रमायेंगे कि हां तुम्हारी यह नेमत बाक़ी है, अब तुम्हें इस नेमत से सरफ़राज़ किया जाता है। उसके बाद अल्लाह तआला का दीदार होगा और अल्लाह तआला अपना जलवा तमाम जन्नती लोगों को दिखायेंगे, और उस जलवे को देखने के बाद हर जन्नती यह महसूस करेगा कि सारी नेमतें जो इस से पहले दी गयीं थीं वे इस बड़ी नेमत के आगे बे हक़ीक़त हैं, इस से बड़ी नेमत कोई और नहीं हो सकती। दीदार की नेमत से सरफ़राज़ होने के बाद उस दरबार का समापन होगा और फिर तमाम अहले जन्नत अपने अपने ठिकानों की तरफ़ वापस चले जायेंगे।

हुस्न व ख़ूबसूरती में इज़ाफ़ा

जब वे जन्नत वाले अपने ठिकानों पर वापस पहुंचेंगे तो उनकी बीवियां और हूरें उनसे कहेंगी कि आज क्या बात हुई कि आज तुम्हारे हुस्न व ख़ूबसूरती पहले से कहीं ज़्यादा हो चुकी है। आज तो तुम बहुत हसीन व जमील बनकर लौटे हो। जवाब में अहले जन्नत अपनी बीवियों से कहेंगे कि हम तुम्हें जिस हालत में छोड़ कर गये थे, तुम उस से कहीं ज़्यादा हसीन और ख़ूबसूरत नज़र आ रही हो। हदीस शरीफ़ में नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यह दोनों के हुस्न व ख़ूबसूरती में इज़ाफ़ा उस ख़ुशगवार हवा की बदौलत होगा जो अल्लाह तआला ने चलाई थी। बहर हाल, यह जन्नत में जुमा के दिन के इज्तिमा और अल्लाह के दरबार की

एक छोटी सी मन्ज़र कशी है, जो अल्लाह तआला अपनी रहमत से अपने नेक बन्दों को अता फ़रमायेंगे। अल्लाह तआला हम सब को भी उसका कुछ हिस्सा अता फ़रमा दें, आमीन।

जन्नत की नेमतों का तसव्वुर नहीं हो सकता

लेकिन जैसा कि मैंने पहले अर्ज़ किया था कि कोई भी लफ़्ज़ और कोई भी ताबीर और कोई भी मन्ज़र कशी जन्नत के हालात का सही मन्ज़र नहीं खींच सकती। इसलिये कि एक हदीसे कुदसी में खुद अल्लाह जल्ल शानुहू ने फ़रमाया कि:

"اعددت لعبادی الصالحین مالا عین رأت، ولااذن سمعت، ولا خطر علی قلب بشر"

"यानी मैंने अपने बन्दों के लिये वे चीज़ें तैयार कर रखी हैं जो आज तक किसी आंख ने देखी नहीं, किसी कान ने सुनी नहीं और किसी दिल में उसका ख़्याल भी नहीं गुज़रा"

इसलिये उलमा-ए-किराम ने फ़रमाया कि जन्नत की नेमतों के नाम तो दुनिया की नेमतों जैसे हैं, जैसे वहां पर तरह तरह के फल होंगे, अनार होंगे, खजूर होंगी, लेकिन उनकी हकीकत ऐसी होगी कि आज हम दुनिया में उसका तसव्वुर नहीं कर सकते, कि वह कैसी खजूर होगी, कैसा अनार होगा और कैसे अंगूर होंगे, उनकी हकीकत कुछ और होगी।

रिवायत में आता है कि जन्नत में महल होंगे। अब हम यह समझते हैं कि दुनिया में जैसे मुहल होते हैं, ऐसे मुहल होंगे। लेकिन हकीकत में यहां बैठ कर उन महलों का तसव्वुर ही नहीं कर सकते। इसी तरह रिवायतों में आता है कि शराब और दूध और शहद की नहरें होंगी। अब हम यह तसव्वुर करते हैं कि दुनिया के दूध और शहद की तरह होंगे। जिसकी वजह से उसकी कद्र व इज़्ज़त हमारे दिल में पैदा नहीं होती, हालांकि वहां के शहद, शराब और दूध का हम यहां बैठ कर तसव्वुर ही नहीं कर सकते।

जन्नत में ख़ौफ़ और ग़म नहीं होगा

जन्नत की नेमतों में सब से बड़ी नेमत जो दुनिया के अन्दर हमारे लिये ना क़ाबिले तसव्वुर है वह दुनिया में किसी इन्सान के तसव्वुर में आ ही नहीं सकती। वह यह है कि वहां न ख़ौफ़ होगा और न रंज और ग़म होगा। वहां न माज़ी (गुज़रे हुए) का ग़म होगा न मुस्तक़बिल का अन्देशा होगा। यह वह नेमत है जो दुनिया में कभी किसी को मयस्सर आ ही नहीं सकती। इसलिये कि यह आलमे दुनिया अल्लाह तआला ने ऐसा बनाया है कि यहां कोई ख़ुशी कामिल नहीं, कोई लज़्ज़त कामिल नहीं, फिर हर ख़ुशी के साथ कोई न कोई ग़म ज़रूर लगा हुआ है। हर लज़्ज़त के साथ कोई न कोई कड़वाहट ज़रूर लगी हुई है। जैसे आप खाना खा रहे हैं, खाना बड़ा लज़ीज़ है, खाने में बड़ा मज़ा आ रहा है, लेकिन यह अन्देशा लगा हुआ है कि अगर ज़्यादा खा लिया तो बद हज़मी हो जायेगी। या जैसे आप कोई पीने की चीज़ पी रहे हैं, बड़ा अच्छा लग रहा है, लेकिन साथ यह अन्देशा लगा हुआ है कि अगर ज़्यादा पी लिया तो कहीं फन्दा न लग जाये। किसी न किसी तक्लीफ़ का, किसी न किसी रन्ज का, किसी न किसी ग़म का अन्देशा ज़रूर लगा हुआ है। लेकिन अल्लाह तआला ने जन्नत के आलम को हर अन्देशे, हर ग़म, हर तक्लीफ़ से ख़ाली बनाया है, वहां कोई अन्देशा नहीं होगा, कोई ग़म नहीं होगा, वहां पर न माज़ी का ग़म होगा, और न मुस्तक़बिल का अन्देशा होगा। वहां किसी ख़्वाहिश के पूरा न होने की हसरत नहीं होगी बल्कि जो ख़्वाहिश होगी वह पूरी होगी।

जन्नत की नेमतों की दुनिया में एक झलक

हदीस शरीफ़ में आता है कि जन्नत वालों की हर ख़्वाहिश को पूरा किया जाएगा, जैसे यह ख़्वाहिश पैदा हुई कि फ़लां अनार का रस पियूं, अब यह नहीं होगा कि तुम्हें अनार तोड़ कर उसका जूस निकालना पड़ेगा, बल्कि अनार का जूस ख़ुद तुम्हारे सामने हाज़िर

कर दिया जाएगा। अल्लाह तआला ने उस जन्नत की नेमतों की थोड़ी थोड़ी झल्कियां दुनिया के अन्दर भी दिखाई हैं। पहले जन्नत की नेमतों की नेमतों का तज़्किरा किया जाता था तो लोग उनको बहुत अजीब ना क़ाबिले यक़ीन समझते थे, कि ये जादूई बातें हैं और इन बातों पर यक़ीन करने में लोगों को संकोच होता था। लेकिन आज अल्लाह तआला ने दिखा दिया कि जब इन्सान ने अपनी सीमित से सीमित अक़्ल के बल बूते पर और तजुर्बे के बल बूते पर ऐसे काम कर दिखाए कि अगर सौ साल पहले इन कामों के बारे में लोगों के बारे में बता दिया जाता तो लोग पागल और दीवाना कहते। जैसे सौ साल पहले तो दूर की बात है, अगर आज से सिर्फ़ बीस साल पहले यह कहा जाता कि एक आला ऐसा ईजाद होने वाला है जो एक मिन्ट में तुम्हारे ख़त को अमेरिका और दुनिया के कोने कोने में पहुंचा देगा तो ख़बर देने वाले को पागल कहा जाता, कि हमारा मुल्क कहां और अमेरिका कहां, अगर हवाई जहाज़ से भी जाए तब भी कम से कम बीस बाईस घन्टे लगेंगे। एक मिन्ट में ख़त कैसे पहुंच जाएगा? अल्लाह तआला ने फ़ैक्स मशीन और टीलैक्स मशीन की ईजाद के ज़रिये दिखा दिया, यहां फ़ैक्स मशीन में ख़त डाला और वहां उसकी कॉपी उसी वक़्त निकल आई। इस सीमित अक़्ल ज़रिए अल्लाह तआला ने ऐसे ऐसे आलात ईजाद करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमा दी। जब सीमित इन्सान अपनी सीमित अक़्ल के बल बूते पर ऐसे ऐसे काम करने पर क़ुदरत रखता है तो क्या अल्लाह तआला अपनी कामिल क़ुदरत और अपनी कामिल रहमत से अपने बन्दों के लिए ऐसे असबाब मुहैया नहीं फ़रमा सकते इधर उसके दिल में ख़्वाहिश पैदा हुई और उधर वह ख़्वाहिश पूरी हो जाए।

यह जन्नत परहेज़गारों के लिये है

बात असल में यह है कि जब तक इन्सान के सामने हक़ाइक़ (तथ्य) नहीं आते, उस वक़्त तक वह बुलन्द दर्जे की चीज़ों को ना

काबिले यकीन तसव्वुर करता है। लेकिन हज़रात अंबिया अलैहिमुस्सलाम जिनको अल्लाह तआला ने वह इल्म अता फ़रमाया जो दुनिया के किसी भी इन्सान को अता नहीं किया गया। उन्होंने हमें जन्नत और उसकी नेमतों के बारे में यकीनी ख़बरें दी हैं, कि उस से ज़्यादा यकीनी ख़बरें और कोई नहीं हो सकतीं। इसलिये ये सारी ख़बरें सच्ची हैं और हज़ार दर्जे सच्ची हैं, और जन्नत हक़ है, उसकी नेमतें हक़ हैं, उसी के बारे में अल्लाह तआला ने इर्शाद फ़रमायाः

"وَسَارِعُوآ اِلٰی مَغْفِرَةٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَجَنَّةٍ عَرْضُهَا السَّمٰوَاتُ وَالْاَرْضُ اُعِدَّتْ لِلْمُتَّقِيْنَ" (ال عمران:۱۳۳)

यानी अपने रब की मग़फ़िरत की तरफ़ और उसकी जन्नत की तरफ़ दौड़ो जिसकी वुस्अत आसमान और ज़मीन के बराबर है, और यह जन्नत मुत्तक़ीन के लिये तैयार की गयी है, जो अल्लाह से डरने वाले हों, तक़वा इख़्तियार करने वाले हों और अल्लाह तआला के अहकाम की पाबन्दी करने वाले हों।

जन्नत के गिर्द कांटों की बाड़

बहर हाल, यह जन्नत जो अज़ीमुश्शान है, और जिसकी नेमतें अज़ीमुश्शान हैं, लेकिन उसी जन्नत के बारे में एक हदीस में नबी—ए—करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया किः

"ان الجنة حفت بالمكاره"

यानी अल्लाह तबारक व तआला ने उस जन्नत को ऐसी चीज़ों से घेरा हुआ है जो ज़ाहिरी तौर पर इन्सान के नफ़्स को भारी होती हैं और नागवार होती हैं। जैसे एक बहुत आलीशान महल है, लेकिन उस महल के इर्द गिर्द कांटों की बाड़ लगी हुई है। उस महल में दाख़िल होने के लिये कांटों की बाड़ को पार करना ही पड़ेगा, और जब तक कांटों की उस बाड़ को पार नहीं करोगे उस महल की लज़्ज़तें और नेमतें हासिल नहीं हो सकतीं। इसी तरह अल्लाह

तआला ने उस आलीशान जन्नत के गिर्द उन चीजों की बाड़ लगायी है जो इन्सान के नफ़्स को भारी गुज़रती हैं, जैसे फ़राइज़ और वाजिबात लाज़िम कर दिये कि ये फ़राइज़ अन्जाम दो। अब आदमी के नफ़्स को यह बात भारी गुज़रती है कि अपने सब काम छोड़ कर मस्जिद जाये और मस्जिद में जाकर नमाज़ अदा करे। इसी तरह बहुत से काम जिनके करने को इन्सान का दिल चाहता है, लेकिन उनको हराम और गुनाह क़रार दे दिया गया। जैसे यह हुक्म दे दिया गया कि इस निगाह की हिफ़ाज़त करो, यह निगाह ग़लत जगह न पड़े, ना मेहरम पर न पड़े, और यह निगाह ग़लत और ना जायज़ प्रोग्राम न देखे। इन सब कामों से रुकना इन्सान पर भारी गुज़रता है। अब उसका दिल तो यह चाह रहा था कि यह काम करे, लेकिन उसको रोक दिया गया। यही कांटों की बाड़ है जो जन्नत के गिर्द लगी हुई है। या जैसे मज्लिस में दोस्तों के साथ बैठे हुए हैं, किसी का ज़िक्र आ गया, अब दिल चाह रहा है कि उसकी ख़ूब ग़ीबत करें, लेकिन यह हुक्म दे दिया गया कि नहीं, गीबत मत करो, अपनी ज़बान रोक लो, यह है कांटों की बाड़। अगर जन्नत को हासिल करना है तो कांटों की इस बाड़ को पार करना होगा, उसके बग़ैर जन्नत का हासिल करना मुम्किन नहीं है, अल्लाह तआला की सुन्नत और तरीक़ा यही है।

दोज़ख़ के गिर्द शहवतों की बाड़

इसी हदीस में पहला जुम्ला यह इर्शाद फ़रमाया किः

"حجبت النار بالشهوات"

यानी दोज़ख़ के गिर्द अल्लाह तआला ने शहवतों की बाड़ लगा दी है, दोज़ख़ को बड़ी ख़ुश्नुमा चीज़ों और दिलकश ख़्वाहिशों ने घेर रखा है, दिल उनकी तरफ़ भागने को चाहता है लेकिन उसके अन्दर आग ही आग है।

यह कांटों की बाड़ भी फूल बन जाती है

बहर हाल, उस जन्नत के गिर्द कांटों की बाड़ लगी हुई है, लेकिन यह कांटे भी अल्लाह तआ़ला ने ऐसे बनाये हैं कि अगर कोई शख़्स हिम्मत और अ़ज़्म कर ले कि मुझे कांटों की यह बाड़ पार करनी है तो अल्लाह तआ़ला उसके लिये उन कांटों को भी फूल बना देते हैं। ये कांटे उस वक़्त तक काटे हैं जब तक उनको दूर दूर से देखोगे, और जब तक उनका तसव्वुर करते रहोगे तो ये कांटे हैं, और उनका पार करना मुश्किल नज़र आयेगा, लेकिन जब एक बार डट कर और हिम्मत करके इरादा कर लिया कि मैं तो कांटों की यह बाड़ पार करके रहूंगा और मुझे इस कांटे की बाड़ के पीछे वह बाग़ नज़र आ रहा है और उसकी नेमतें नज़र आ रही हैं और मुझे इस कांटों की बाड़ को पार करके उस बाग़ में जाना है, तो अल्लाह तआ़ला उन कांटों को भी फूल बना देते हैं और उसको गुलज़ार बना देते हैं।

एक सहाबी का जान दे देना

एक सहाबी जिहाद में शरीक हैं, उन्होंने देखा कि दुश्मन का लश्कर बड़ी ताक़त के साथ मुसलमानों पर हमलावर हो रहा है और अब बचाव का कोई रास्ता नहीं है, तो उस वक़्त बे साख़्ता ज़बान पर जो कलिमा आया वह यह था कि:

"غدا نلقى الاحبة محمدا وصحبه"

यानी वह वक़्त आ गया कि कल हमारी मुलाक़ात अपने महबूबों से और दोस्तों से होगी, यानी मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आपके सहाबा से उस आ़लमे आख़िरत में मुलाक़ात होगी। गोया कि आग और ख़ून का जो खेल हो रहा था, जिसमें लाशें तड़प रही थीं और जान देना जो सब से ज़्यादा मुश्किल नज़र आ रहा था, लेकिन वह सहाबी उस जान देने की तक्लीफ़ को ख़ुशी ख़ुशी सहने के लिये तैयार हो गये। हदीस शरीफ़ में आता है कि जब

अल्लाह के रास्ते में लड़ने वाला शहीद होता है और उसको मौत आती है तो उसको मौत आने की तक्लीफ़ इतनी भी नहीं होती जितनी चींवटी के काटने की तक्लीफ़ होती है। यह हक़ीक़त में जन्नत तक पहुंचने के लिये कांटे की बाड़ रोक थी जिसको पार करना था, लेकिन इरादा कर लिया कि यह जान तो अल्लाह की दी हुई है, उसी को देनी है:

जान दी, कि दी हुई उसी की थी
हक़ तो यह है कि हक़ अदा न हुआ

जब यह अ़ज़्म और इरादा कर लिया तो अल्लाह तआ़ला ने उस कांटे को फूल बना दिया। अगर बिस्तर पर मरते तो न जाने किस तरह ऐड़ियां रगड़ कर मरते, क्या क्या तक्लीफ़ें उठानी पड़तीं, लेकिन हमने तुम्हारे लिये क़त्ल होने की तक्लीफ़ भी ऐसी बना दी जैसी चींवटी के काटने की तक्लीफ़ होती है।

दुनिया वालों के तानों को क़बूल कर लो

बहर हाल, ये कांटे भी दूर दूर से देखने के कांटे हैं, लेकिन जब आदमी एक बार अ़ज़्म और हिम्मत कर ले और उसकी तरफ़ चल पड़े तो अल्लाह तआ़ला उन कांटों को भी उसके लिये फूल बना देते हैं। इसलिये हम लोग जो सोचते रहते हैं कि अगर हमने दीन के फ़लां हुक्म पर अ़मल कर लिया या फ़लां गुनाह से बच गये या फ़लां काम कर लिया तो पहले नफ़्स को बड़ी मशक़्क़त होगी, फिर दूसरी तरफ़ समाज का ख़्याल आता है कि लोग क्या कहेंगे कि यह तो बिल्कुल मौलवी हो गया। यह तो पुराने वक़्त का आदमी हो गया, यह तो ज़ामने के साथ साथ चलने को तैयार नहीं। इस क़िस्म के ताने मिलने का ख़्याल आता है, याद रखो! ये सब कांटे हैं और जन्नत तक पहुंचने के लिये रास्ते में जो कांटों की बाड़ लगी हुई है ये भी उन्हीं में से हैं। जब तुम एक बार इन कांटों को ख़ुशी से क़बूल कर लोगे और उनसे यह कह दोगे कि हां! हम मौलवी हैं और पुराने ख़्याल के हैं, लेकिन हम ऐसे पुराने ख़्याल के हैं जो मुहम्मद

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत की तरफ़ देखने वाले हैं। जब तुम एक बार यह अ़ज़्म कर लोगे तो यक़ीन रखो कि ये सब कांटे तुम्हारे लिये फूल बन जायेंगे।

इज़्ज़त दीन पर चलने वालों की होती है

अल्लाह तआ़ला इस दुनिया के अन्दर दिखाते हैं कि उन ताना देने वाले और इल्ज़ाम लगाने वालों की ज़बानें रुक जाती हैं, और आख़िरकार अल्लाह तआ़ला इज़्ज़त उन्हीं लोगों को अ़ता फ़रमाते हैं जो अल्लाह तआ़ला के आगे सर झुकाते हैं। इज़्ज़त उन्हीं की है जो मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के फ़रमान के ताबे हों। हुज़ूरे पाक के ज़माने में मुनाफ़िक़ीन भी मुसलमानों से यह कहा करते थे कि हम तो इज़्ज़त वाले हैं, और मुसलमान ज़लील हैं, और जब मदीना मुनव्वरा जायेंगे तो इज़्ज़त वाले ज़लील लोगों को बाहर निकाल देंगे, यानी मुसलमानों को। चुनांचे ये मुनाफ़िक़ मुसलमानें को ज़लील होने का ताना दिया करते थे, उनके जवाब में अल्लाह तआ़ला ने इर्शाद फ़रमायाः

"وَلِلّٰهِ الْعِزَّةُ وَلِرَسُوْلِهٖ وَلِلْمُؤْمِنِيْنَ، وَلٰكِنَّ الْمُنٰفِقِيْنَ لَا يَعْلَمُوْنَ"

यानी इज़्ज़त तो अल्लाह के लिये है और अल्लाह के रसूल के लिये है और मोमिनों के लिये है, लेकिन मुनाफ़िक़ीन नहीं जानते, उनको असल हक़ीक़त का पता नहीं।

फिर इबादतों में लज़्ज़त आयेगी

तो जन्नत के इर्द गिर्द कांटे ज़रूर हैं लेकिन ये आज़माइश के कांटे हैं। जब तुम उसके क़रीब जाओगे तो अल्लाह तआ़ला उन्हीं कांटों को फूल बना देंगे और फिर यही इबादतें जो तुम पर भारी गुज़र रही थीं, इन्हीं इबादतों में वह लज़्ज़त होगी कि दुनिया के बड़े से बड़े लज़ीज़ काम में हासिल नहीं होती। चुनांचे हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़रमाया करते थे किः

"قرة عينى فى الصلوٰة"

मेरी आंखों की ठंडक नमाज़ में है। यानी यह नमाज़ वैसे तो इबादत है लेकिन इसमें अल्लाह तआ़ला ने मुझे ऐसी लज़्ज़त अ़ता फ़रमाई है कि दुनिया की सारी लज़्ज़तें उसके आगे कुछ नहीं हैं।

गुनाह छोड़ने की तक्लीफ़

इसी तरह गुनाह छोड़ने में बेशक मशक़्क़त मालूम होती है, दिल पर आरे चल जाते हैं, लेकिन दिल पर आरे चलने के बावजूद आदमी अल्लाह के लिये यह गुनाह छोड़ दे और यह कहे कि मैं अपनी इन ख़्वाहिशों को अल्लाह के लिए क़ुरबान कर रहा हूं तो शुरू में ज़रूर मशक़्क़त होती है लेकिन आख़िरकार उन ख़्वाहिशों के कुचलने ही में मज़ा आता है। जब बन्दा यह तसव्वुर करता है कि मैं ये ख़्वाहिशें अपने मालिक के लिये कुचल रहा हूं, अपने ख़ालिक़ के लिये कुचल रहा हूं तो फिर उसको उसी में लज़्ज़त हासिल होती है।

मां बच्चे की तक्लीफ़ क्यों बर्दाश्त करती है?

देखिये! एक मां है और उसका छोटा सा बच्चा है। सर्दी की रात है और मां अपने बच्चे के साथ लिहाफ़ में लेटी है, इतने में बच्चे ने पेशाब पाख़ाना कर दिया। अब वह मां उस गर्म और नर्म लिहाफ़ और बिस्तर को छोड़ कर उस बच्चे के कपड़े बदल रही है, उसका बिस्तर और कपड़े ठन्डे पानी से धो रही है, अब उस वक़्त में अपनी नींद ख़राब करके ठन्डे पानी से यह काम करना कितना मुश्किल काम है। लेकिन जब वह यह तसव्वुर करती है कि मैं यह काम अपने बच्चे के लिये कर रही हूं, अपने जिगर के टुक्ड़े के लिये कर रही हूं तो उस मशक़्क़त ही में उसको लुत्फ़ और मज़ा आने लगता है। अब अगर कोई शख़्स उस औरत से कहे कि तुझे बड़ी मशक़्क़त उठानी पड़ती है, रातों को उठना पड़ता है, सर्दी का मुक़ाबला करना पड़ता है, अगर तेरा यह बच्चा तुझ से छिन जाये तो तेरी ये मशक़्क़तें और तक्लीफ़ें दूर हो जायें, तो औरत यह कहेगी कि इस मशक़्क़त से हज़ार गुना मशक़्क़त और तक्लीफ़ बर्दाश्त करने को तैयार हूं लेकिन

मेरा यह बच्चा मुझ से न छिन जाये। ऐसा क्यों कहेगी! इसलिये कि उस औरत को उस बच्चे से मुहब्बत है, और उसकी मुहब्बत की ख़ातिर सख़्त से सख़्त काम करने को न सिर्फ़ तैयार है बल्कि उसको उसी मशक़्क़त और तक्लीफ़ में मज़ा आता है। बिल्कुल इसी तरह जब एक बन्दे को अल्लाह तआला से मुहब्बत हो जाती है, तो फिर अल्लाह की राह में अपने नफ़्स की ख़्वाहिशों को कुचलने में वह लज़्ज़त हासिल होती है जो ख़्वाहिशों के पूरा करने में हासिल नहीं होती।

जन्नत और आख़िरत की दुनिया का मुराक़बा करें

बहर हाल, जन्नत की ये नेमतें जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बयान फ़रमायीं और सारा क़ुरआने करीम इन नेमतों के तज़्किरे से भरा हुआ है। ये इसलिये बयान की गयी हैं ताकि इन्सान उनको हासिल करने की कोशिश करे और कांटों की उस बाड़ को पार करे जो उस जन्नत के इर्द गिर्द लगी हुई है। इसलिये बुज़ुर्गों ने यह तरीक़ा बताया है कि इस दुनिया में रह कर इन्सान जन्नत की उन नेमतों का कभी कभी तसव्वुर और ध्यान किया करे। चुनांचे हकीमुल उम्मत हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि अपने मवाइज़ में फ़रमाते हैं कि "हर मुसलमान को चाहिये कि रोज़ाना थोड़ी देर बैठ कर आख़िरत की दुनिया का तसव्वुर किया करे, और ख़ास तौर पर जन्नत की नेमतों का तसव्वुर किया करे, और यह सोचा करे कि मैं दुनिया से जा रहा हूं, क़ब्र में रख दिया गया हूं, लोग मुझे दफ़न करके रुख़्सत हो गये हैं, फिर आलमे बर्ज़ख़ में पहुंच गया, फिर आलमे आख़िरत शुरू हो गया, यहां हिसाब किताब हो रहा है, तराज़ू लगी हुई है, पुलसिरात लगा हुआ है, एक तरफ़ जन्नत है, दूसरी तरफ़ जहन्नम है, और फिर जन्नत के अन्दर ये नेमतें हैं और जहन्नम के अन्दर इस तरह के अ़ज़ाब हैं। इस तरह थोड़ी देर बैठ कर उन तमाम चीज़ों का तसव्वुर और ध्यान किया करे, इसलिये कि हम सुबह से शाम तक दुनिया की ज़िन्दगी में

मसरूफ़ रहने की वजह से उस आलमे आख़िरत से ग़ाफ़िल हो गये हैं। अल्हम्दु लिल्लाह हम सब का यह अक़ीदा है और इस पर यक़ीन है कि इस दुनिया से एक दिन जाना है, और आख़िरत आने वाली है, लेकिन सिर्फ़ अक़ीदा और यक़ीन काफ़ी नहीं बल्कि उसका ख़्याल करना भी ज़रूरी है, और उसका ध्यान भी ज़रूरी है। यह ध्यान और सोच व फ़िक्र ही इन्सान को इताअ़त पर आमादा करती है, और मासियत और गुनाह से रोकती है। इस वजह से थोड़ा वक़्त निकाल कर आख़िरत का ध्यान और मुराक़बा करो, और इस ध्यान और मुराक़बे के नतीजे में इन्शा अल्लाह आख़िरत का ध्यान पैदा होगा।

दुनिया के कामों के अन्दर आख़िरत का ध्यान और ख़्याल तुम्हें अल्लाह की इताअ़त पर आमादा करेगा और मासियत और गुनाह से बचने में मदद देगा। जन्नत की इन नेमतों के बयान करने का मक़सद यही है जो कुरआन और हदीस में भरी हुई हैं। अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से और अपने फ़ज़्ल व करम से हम सब को जन्नत की नेमतों का ध्यान और ख़्याल अ़ता फ़रमाये, आमीन।

واٰخر دعوانا ان الحمد للہ رب العالمین

आख़िरत की फ़िक्र

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ.

"بَلْ تُؤْثِرُوْنَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةُ خَيْرٌ وَّاَبْقٰى" (سورة الاعلیٰ:١٧٠)

اٰمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظيم وصدق رسوله النبى الكريم ونحن علىٰ ذالك من الشاهدين والشاكرين والحمد للّٰه رب العالمين.

हज़राते उलमा–ए–किराम, बुज़ुर्गाने मुहतरम, प्यारे भाईयो, और कारकुनाने मज्लिसे सियानतुल मुस्लिमीन साहीवाल! यह मेरे लिये बहुत बड़ी सआ़दत का मौक़ा है कि आज अपने मुहतरम बुज़ुर्गों की ज़ियारत और सोहबत से फ़ायदा उठाने का मौक़ा अल्लाह तबारक व तआ़ला ने अ़ता फ़रमाया।

हमारी एक बीमारी

मैंने एक आयत तिलावत की जो सूरः आला की आयत है, और कुरआने करीम का यह ऐजाज़ है कि उसकी छोटी से छोटी आयत ले लीजिये, वह अल्फ़ाज़ के एतिबार से मुख़्तसर होगी, लेकिन उसके मायने और मतलब को देखा जाए और उसकी गहराई में जाया जाये तो तन्हा वह छोटी सी आयत भी इन्सान की पूरी ज़िन्दगी का दस्तूर बन जाती है। यह छोटी सी आयत है इसमें अल्लाह तआ़ला ने इर्शाद फ़रमाया कि:

"بَلْ تُؤْثِرُوْنَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةُ خَيْرٌ وَّاَبْقٰى"

इस आयत में अल्लाह जल्ल जलालुहू ने हमारी आपकी एक बुनियादी बीमारी की तश्ख़ीस फ़रमाई है, कि तुम्हारे अन्दर यह बीमारी पाई जाती है।

और वह ऐसी बीमारी है कि जो ज़िन्दगी के हर शोबे में हमारे लिये तबाही और हलाकत लाने वाली है। वह बीमारी बताई और फिर उस बीमारी का इलाज बताया। दो मुख़्तसर जुम्लों में बीमारी भी बता दी, बीमारी का इलाज भी बता दिया, यह भी बता दिया कि तुम्हारे अन्दर क्या ख़राबी है, और यह भी बता दिया कि उस ख़राबी से बचने का रास्ता क्या है? फ़रमाया किः

"بَلْ تُؤْثِرُوْنَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا"

तुम्हारी बुनियादी ख़राबी यह है कि तुम हर मामले में इस दुनियावी ज़िन्दगी को तरजीह देते हो। दुनियावी ज़िन्दगी के दायरे में रह कर सोचते हो, उसी की भलाई, उसी की कामयाबी, उसी की ख़ुशहाली हर वक़्त तुम्हारे पेशे नज़र रहती है। और उस दुनियावी ज़िन्दगी को तुम किस पर तरजीह देते हो? मरने के बाद वाली आख़िरत वाली ज़िन्दगी पर। उस पर तरजीह देते हो, यह तो तुम्हारी बीमारी है, और अब बीमारी का इलाज क्या है?

इस बीमारी का इलाज

इलाज यह है कि ज़रा यह बात सोचो कि यह दुनिया जिसकी ख़ातिर तुम दौड़ धूप कर रहे हो, तुम्हारी लगातार जद्दोजहद, तुम्हारी दौड़ धूप, तुम्हारी रात दिन की कोशिश, सारी इसी दुनिया की ख़ुशहाली के गिर्द घूम रही हैं। तुम्हारी कोशिश यह है कि मेरा मकान अच्छा बन जाये, मुझे पैसे मिल जायें, मेरी दुनिया में इज़्ज़त हो, लोग मेरा नाम जानें, लोगों में मेरी शोहरत हो जाये, मुझे बड़ा ओहदा मिल जाये, मुझे बड़ा रुतबा हासिल हो जाये, सारी तुम्हारी सोच के घूमने का मर्कज़ यह दुनियावी ज़िन्दगी बनी हुई है।

लेकिन क्या कभी तुमने यह सोचा कि जिसकी ख़ातिर यह सारी

दौड़ धूप कर रहे हो, जिसकी ख़ातिर हलाल व हराम एक कर रखा है, जिसकी ख़ातिर लड़ाइयां मोल ले रहे हो, जिसकी ख़ातिर एक दूसरे के ख़ून के प्यासे बन जाते हो, वह कितने दिन की ज़िन्दगी है?

और उसके बाद मरने के बाद जो ज़िन्दगी आने वाली है वह इसके मुक़ाबले में कैसी ख़ैर की ज़िन्दगी है, और यहां की ज़िन्दगी के मुक़ाबले में बेहतर है, यहां की ज़िन्दगी के मुक़ाबले में कहीं ज़्यादा पायदार और ख़त्म न होने वाली है।

कोई ख़ुशी कामिल नहीं

ख़ूब समझ लीजिये, दुनिया की कोई ख़ुशी कामिल नहीं, हर ख़ुशी के साथ ग़म का कांटा लगा हुआ है। किसी फ़िक्र का, किसी सदमे का, किसी तश्वीश का कांटा लगा हुआ है। कोई ख़ुशी कामिल नहीं, कोई लज़्ज़त कामिल नहीं। खाना अच्छा रखा हुआ है, भूख लगी हुई है, उसके खाने में लज़्ज़त आ रही है लेकिन कोई फ़िक्र दिमाग़ के ऊपर मुसल्लत है, उसकी वजह से सारा खाना अकारत हो रहा है, उसकी लज़्ज़त बेमज़ा हो रही है, दुनिया की कोई ख़ुशी ऐसी नहीं है जो कामिल हो।

लोग समझते हैं कि माल व दौलत जमा कर लूंगा तो इत्मीनान हासिल हो जायेगा, सुकून मिल जायेगा, लेकिन आप ज़रा बड़े बड़े सरमायेदारों, बड़े बड़े मिल के मालिकों की अन्दुरूनी ज़िन्दगी में झांक कर देखिये, बज़ाहिर यह नज़र आयेगा कि मिलें खड़ी हुई हैं, आलीशान कारें, शानदार बंगले हैं, ख़ादिम और नौकर चाकर हैं, राहत व आराम के सारे असबाब मयस्सर हैं, लेकिन साहिब बहादुर को रात के वक़्त नींद नहीं आती। नींद लाने के लिये गोलियां खानी पड़ती हैं। डा. से गोलियां लेकर खा खाकर नींद लाते हैं।

आराम देने वाला बिस्तर और मसहरियां हैं, ऐयर कन्डीशन कमरे हैं, लेकिन नींद नहीं आती। उनके मुक़ाबले में एक मज़दूर है, एक किसान है जिसके पास ये मसहरियां तो नहीं, ये गद्दे और यह बिस्तर

तो नहीं, लेकिन रात के वक़्त में थक कर अपने सर के नीचे अपना हाथ रख कर सोता है, आठ घन्टे की भरपूर नींद लेकर उठता है। बताओ, रात उस सरमायेदार की अच्छी गुज़री या उस मज़दूर और किसान की अच्छी गुज़री? तो अल्लाह तआ़ला ने इस दुनिया का निज़ाम ऐसा बनाया है कि इसकी कोई ख़ुशी कामिल नहीं, कोई लज़्ज़त कामिल नहीं, हर ख़ुशी के साथ कोई ग़म लगा हुआ है, और हर ग़म के साथ कोई ख़ुशी लगी हुई है।

तीन आ़लम

अल्लाह तआ़ला ने इस कायनात में तीन आ़लम पैदा किये हैं। एक आ़लम है जिसमें ख़ुशी ही ख़ुशी है, लज़्ज़त ही लज़्ज़त है, मज़ा ही मज़ा है, ग़म का नाम नहीं, सदमे का गुज़र नहीं। वह आ़लम है जन्नत, उसमें ग़म सदमे का कोई गुज़र नहीं, फ़िक्र और तश्वीश का कोई रास्ता नहीं। एक आ़लम अल्लाह ने वह पैदा किया है जो सदमे ही की जगह है, उसमें ग़म ही ग़म है, तक्लीफ़ ही तक्लीफ़ है, परेशानी ही परेशानी है, सदमा ही सदमा है, उसमें ख़ुशी का गुज़र नहीं, उसमें राहत का गुज़र नहीं, वह जहन्नम है। अल्लाह तआ़ला हम सब को अपनी रहमत से उस से महफ़ूज़ रखे, आमीन।

तीसरा आ़लम पैदा किया यह दुनिया, यह ग़म और ख़ुशी से मिली जुली है। इसमें ग़म भी है, इसमें ख़ुशी भी है। इसमें लज़्ज़त भी है, इसमें राहत भी है, इसमें तक्लीफ़ भी है। यह दुनिया दोनों चीज़ों से मिली जुली है। इसलिये अगर कोई शख़्स यह चाहे कि इस दुनिया में मुझे कोई सदमा न पहुंचे, मुझे कोई तक्लीफ़ न हो, कोई मेरी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ काम न हो तो वह दुनिया की हक़ीक़त से बेख़बर है। इस दुनिया में यह नहीं हो सकता। अरे और तो और अल्लाह के सब से महबूब बन्दे अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम इस दुनिया के अन्दर तशरीफ़ लाते हैं तो उनको तक्लीफ़ों का सामना करना पड़ता है, उनको भी ग़म उठाने पड़ते हैं, उनको भी सदमे झेलने पड़ते हैं।

अगर इस दुनिया में किसी को सिर्फ़ राहत मिलनी होती, सिर्फ़

ख़ुशी मिलनी होती तो अल्लाह के सब से महबूब पैग़म्बरों से ज़्यादा इसका हक़दार कोई नहीं था। लेकिन उन पर भी सदमे आये और उन पर भी तक्लीफ़ें आईं, बल्कि हदीस में नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया किः

"اشد الناس بلاء الانبياء ثم الامثل فالامثل"

इस दुनिया के अन्दर सब से ज़्यादा आज़माइशें अंबिया पर आती हैं, उसके बाद जितना जो क़रीब होता है अंबिया से उतनी ही आज़माइशें उसके ऊपर आती हैं।

मैं अर्ज़ यह कर रहा था कि दुनिया की कोई ख़ुशी कामिल नहीं, कोई लज़्ज़त कामिल नहीं, कोई राहत कामिल नहीं और जितनी भी ख़ुशी मिल जाये पायदार नहीं। और कुछ पता नहीं कि अगले लम्हे यह ख़ुशी हासिल रहेगी या नहीं? हो सकता है कि अगले घन्टे ख़त्म हो जाये, हो सकता है कि कल ख़त्म हो जाये, हो सकता है कि अगले महीने ख़त्म हो जाये, हो सकता है कि एक साल चल जाये उसके बाद ख़त्म, तो न ख़ुशी कामिल और न ग़म कामिल।

आख़िरत की ख़ुशी कामिल होगी

अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि आख़िरत की ज़िन्दगी ख़ैर है, ख़ैर के मायने कामिल है। उसकी लज़्ज़त भी कामिल, उसकी रहमत भी कामिल, उसके अन्दर ख़ुशी भी कामिल और पायदार भी है, यानी ख़त्म होने वाली नहीं जो नेमत मिल गई वह हमेशा के लिये मिलेगी।

हदीस का मज़्मून है, यहां दुनिया में आपको एक खाना अच्छा लग रहा है, दिल चाह रहा है कि खायें, एक प्लेट खाई दो प्लेट खाई, एक रोटी खोई, आख़िर एक हद ऐसी आ गयी कि पेट भर गया, अब अगर खाना भी चाहें तो खा नहीं सकते, उसी खाने से नफ़रत हो गयी, वही खाना जिसकी तरफ़ दिल लपक रहा था, जिसकी तरफ़ आदमी शौक़ से बढ़ रहा था, चन्द लम्हों के अन्दर उस से नफ़रत हो गयी, अब खाने को दिल भी नहीं चाहता, कोई इनाम भी देना चाहे, हज़ार रुपया भी देना चाहे कि खा लो, नहीं

खायेगा। क्यों? इस पेट की एक हद थी वह हद आ गयी, उसके बाद इसमें गुन्जाइश नहीं और नहीं खाता। लेकिन आख़िरत में जो खाना आयेगा या जो भी ग़िज़ा होगी उसमें यह मर्हला नहीं आयेगा कि साहिब अब पेट भर गया, दिल तो चाह रहा है, खाया नहीं जाता, यह मर्हला जन्नत में नहीं। जो लज़्ज़त है वह कामिल है, उसमें कोई बद मज़गी नहीं, तो अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि आख़िरत बेहतर भी है और पायदार भी है। दुनिया बेहतर भी नहीं, और ना पायदार भी है। इसके बावजूद तुम्हारा यह हाल है कि दुनियावी ज़िन्दगी ही को तरजीह देते हो, रात दिन उसकी दौड़ धूप में मगन हो और आख़िरत का ख़्याल नहीं करते।

इस आयत में अब हम ज़रा ग़ौर करें तो यह नज़र आयेगा कि अल्लाह तआला ने इसमें हमारी सारी बीमारियों की जड़ और उसका इलाज भी बता दिया। जड़ क्या है?

मौत यक़ीनी है

इस दुनिया के अन्दर कोई बात इतनी यक़ीनी नहीं है इतनी मानी हुई नहीं है, कि जितनी यह बात यक़ीनी और मुसल्लम है कि हर इन्सान को एक दिन मरना है। कोई बात इस से ज़्यादा यक़ीनी नहीं। यानी यह वह बात है कि जिसको मुसलमान तो मुसलमान काफ़िर भी मानता है कि हां! एक दिन वह ज़रूर मरेगा। आज तक इस कायनात में कोई इन्सान ऐसा पैदा नहीं हुआ जिसने यह नज़रिया पेश किया हो कि इन्सान को मौत नहीं आयेगी। लोगों ने ख़ुदा का इन्कार कर दिया, कहने वालों ने कह दिया कि ख़ुदा को नहीं मानते, लेकिन मौत से इन्कार करने वाला आज तक पैदा नहीं हुआ, बड़े से बड़ा नास्तिक, बड़े से बड़ा बेदीन, बड़े से बड़ा ख़ुदा का इन्कार करने वाला, वह भी यह नहीं कह सकता कि मुझे मौत नहीं आयेगी, और सब बातों में इख़्तिलाफ़, लेकिन यह बात ऐसी है कि इस पर सब मुत्तफ़िक़ हैं कि मौत आनी है, मरना है। इस बात पर भी मुत्तफ़िक़ हैं कि मरने के दिन का पता नहीं कि कब मरेंगे। साइन्स

तरक्क़ी कर गयी, लोग चांद पर पहुंच गये, मिर्रीख़ पर पहुंच गये, कम्प्यूटर ईजाद हो गये, मसनूई आदमी ईजाद हो गये, सब कुछ हो गया लेकिन पूछो उन वैज्ञानिकों से कि बताओ भाई जो सामने बैठा हुआ इन्सान है, उसकी मौत कब आयेगी?

सारी साइन्स, सारे उलूम व फुनून यहां आकर आजिज़ हैं, कोई नहीं बता सकता कि मौत कब आयेगी, लेकिन अजीब मामला है कि जितनी यह बात यक़ीनी है कि मरना है, और जितना इसका वक़्त ग़ैर यक़ीनी है, इतना ही इस मौत से हम और आप ग़ाफ़िल हैं।

ज़रा गिरेबान में हम सब मुंह डाल कर देखें। सुबह जागने से लेकर रात को बिस्तर पर जाने तक इस पूरे वक़्त में क्या कुछ सोचते हैं, क्या क्या ख़्यालात आते हैं, दुनियादारी के, रोज़गार के, मेहनत मज़दूरी के, नौकरी के, तिजारत के, खेती बाड़ी के, काश्तकारी के, ख़ुदा जाने क्या क्या ख़्यालात आते हैं। क्या कभी ख़्याल आता है कि एक दिन क़ब्र में जाकर सोना है? कभी ख़्याल आता है कि क़ब्र में जाने के बाद क्या हालत पेश आने वाली है।

हज़रत बहलूल का वाक़िआ

एक बुज़ुर्ग गुज़रे हैं उनका नाम था बहलूल। "बहलूल मज्ज़ूब" कहलाते थे। मज्ज़ूब क़िस्म के आदमी थे, लेकिन बातें बड़ी हिक्मत की किया करते थे। इस वास्ते उनको लोग बहलूल दाना भी कहते हैं। बहलूल हकीम भी, मज्ज़ूब भी।

हारून रशीद के ज़माने में थे और हारून रशीद उनसे कभी मज़ाक़ भी किया करता था, और ऐलान कर रखा था कि जब बहलूल मज्ज़ूब मेरे पास आना चाहें तो कोई उनके लिये रुकावट न हुआ करे। सीधा मेरे पास पहुंच जायें। एक दिन ऐसे ही हारून रशीद के पास पहुंच गये, हारून रशीद तो मज़ाक़ करते थे। हारून रशीद के हाथ में छड़ी थी, वह छड़ी उठा कर उन्होंने बहलूल को दी और कहा: मियां बहलूल यह छड़ी मैं तुमको अमानत के तौर पर देता हूं, ऐसा करना कि इस दुनिया में जो शख़्स तुम्हें अपने से ज़्यादा

बेवकूफ़ मिले उसको यह छड़ी मेरी तरफ़ से हदिये में दे देना, इशारा इस तरफ़ था कि तुम से ज़्यादा बेवकूफ़ तो कोई दुनिया में है ही नहीं। लो अगर तुम्हें अपने से ज़्यादा बेवकूफ़ मिले उसको दे देना। बहलूल ने वह छड़ी उठा कर अपने पास रख ली। बात आई गई हो गयी। महीने गुज़रे गये, साल गुज़र गये, इत्तिफ़ाक़ से हारून रशीद बीमार पड़ गये। बीमार ऐसे पड़े कि बिस्तर से लग गये, न कहीं आना न कहीं जाना, हकीमों ने कहीं जाने आने से मना कर दिया।

बहलूल मिज़ाज पुर्सी के लिये हारून रशीद के पास पहुंचे। जाकर कहा कि अमीरुल मोमिनीन क्या हाल है? कहा बहलूल क्या हाल सुनाऊं बहुत लम्बा सफ़र सामने है। कहां का सफ़र अमीरुल मोमिनीन? कहा कि आख़िरत का सफ़र, अच्छा तो वहां पर आपने कितने लश्कर भेजे हैं, कितनी छोलदारियां? कितने ख़ेमे? हारून रशीद ने कहा बहलूल तुम भी अजीब बातें करते हो, वह सफ़र ऐसा है कि उसमें कोई ख़ेमा नहीं जाता, कोई आदमी कोई बॉडी गार्ड कोई लश्कर साथ नहीं जाता। अच्छा जनाब वापस कब आयेंगे? कहा कि फिर तुमने ऐसी बात शुरू कर दी, वह सफ़र आख़िरत का सफ़र है, उसमें जाने के बाद कोई वापस नहीं आया करता।

अच्छा इतना बड़ा सफ़र है कि वहां से कोई वापस भी नहीं आता और कोई आदमी भी वहां पहले से नहीं जा सकता? कहा कि हां बहलूल वह ऐसा ही सफ़र है। कहा कि अमीरुल मोमिनीन फिर तो एक अमानत मेरे पास आपकी बहुत मुद्दत से रखी हुई है, जो आपने यह कह कर दी थी कि अपने से ज़्यादा बेवकूफ़ आदमी को दे देना, आज मुझे उस छड़ी का मुस्तहिक़ आप से ज़्यादा कोई नज़र नहीं आता। इस वास्ते कि मैं देखता था कि जब आपको छोटा सा भी सफ़र पेश आता, जहां से जल्दी वापसी होती तो उसके लिये आप पहले से बहुत सा लश्कर भेजा करते थे। वे आपका रास्ता तैयार करते थे, मन्ज़िलें क़ायम करते थे, लेकिन अब आपका इतना लम्बा सफ़र हो रहा है, इसकी कोई तैयारी भी नहीं है, और जहां से वापस

आना भी नहीं है, तो मुझे अपने से ज़्यादा बेवकूफ़ सिर्फ़ आप ही मिले हैं, आपके अ़लावा कोई नहीं। यह छड़ी आप ही को मुबारक हो। हारून रशीद यह बात सुनकर रो पड़े, कहा बहलूल: हम तुम्हें दीवाना समझा करते थे, लेकिन मालूम यह हुआ कि तुम से ज़्यादा हकीम और अ़क्लमन्द कोई नहीं।

मौत को याद करो

वाक़िआ यह है कि इस दुनिया में ज़रा सा कोई मामूल के ख़िलाफ़ सफ़र पेश आ जाये तो उसकी पहले से तैयारियां हैं, उसके तज़्किरे हैं, उसके लिये पहले से क्या कुछ मन्सूबे बनाये जाते हैं। लेकिन जब आख़िरत का सफ़र पेश आता है और वह सफ़र भी ऐसा है कि बैठे बैठे पेश आ जाता है, पहले से मालूम होता है कि साहिब मेरे बग़ैर इस दुनिया की गाड़ी नहीं चल सकती। मैं नहीं हूंगा तो बच्चों का क्या होगा? बीवी का क्या होगा? और कारोबार का क्या हाल होगा? वह वक़्त आ रहा है लेकिन हम और आप उसके बारे में सोचने के लिये तैयार नहीं। अपने हाथों से जनाज़ों को कन्धे देते हैं, अपने हाथों से अपने प्यारों को क़ब्र में उतारते हैं, अपने हाथों से उनको मिट्टी देकर आते हैं। लेकिन यह समझ कर बैठ जाते हैं कि उनके साथ हो गया यह वाक़िआ, हमारा इसके साथ क्या ताल्लुक़? सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़रमाते हैं कि:

"लज़्ज़तों को ख़त्म करने वाली चीज़ यानी मौत को कसरत से याद किया करो"।

ज़रा हम अपना जायज़ा लें कि चौबीस घन्टों में से कितना वक़्त हम उस मौत को याद करने में ख़र्च करते हैं? बहर हाल, इस हदीस के ज़रिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बतला दिया कि तुम्हारी बीमारी यह है कि तुम आख़िरत से ग़ाफ़िल हो, आख़िरत अगर तुम्हारे पेशे नज़र हो जाये, आख़िरत तुम्हारी आंखों के सामने आ जाये और उसकी फ़िक्र तुम्हारे दिल व दिमाग़ पर सवार हो जाये तो तुम्हारी सारी ज़िन्दगी की मुश्किलात ख़त्म हो जायें। सारे जराइम,

सारी बद अम्नी, सारी बद उन्वानियां इस बुनियाद पर हैं कि इसी दुनिया के गिर्द हमारा दिमाग़ चक्कर लगा रहा है। आख़िरत की तरफ़ नहीं देखता। आख़िरत को नहीं सोचता, उसका माल हड़प कर लूं, उसका हक़ ज़ाया कर दूं, उसका ख़ून पी जाऊं, ये सब इसलिये करता है ताकि मेरी दुनिया दुरुस्त हो जाये। मरने के बाद क्या होगा? इसकी कुछ फ़िक्र नहीं।

और यह फ़िक्र सरकारे दो जहां मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पैदा की, और यह जो कुछ आप सीरत के अन्दर अम्न व अमान के, सुकून और इत्मीनान के वाक़िआत पढ़ते हैं, वे हक़ीक़त में उस आख़िरत की फ़िक्र का नमूना हैं, कि दिल व दिमाग़ पर हर वक़्त जन्नत का ख़्याल छाया हुआ है कि अल्लाह के सामने पेश होना है, वह जन्नत नज़र आ रही है और उस जन्नत के ख़्याल में अल्लाह तबारक व तआला के सामने पेश होने के ख़्याल में इन्सान जो काम करता है वह अल्लाह को राज़ी करने वाला करता है।

हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ि. का वाक़िआ

हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु दूसरे ख़लीफ़ा राशिद, आधी दुनिया के हाकिम, वह एक बार सफ़र पर तशरीफ़ लेजा रहे थे, वह फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु जिनके आगे क़ैसर व किसरा के ऐवान थरथराते थे। सादा कपड़ों में मलबूस थे, कोई पहचान भी न सके कि यह आधी दुनिया पर हुकूमत करने वाला जा रहा है। जाते जाते भूख लग गयी। अब वह ज़माना कोई होटलों का, ढाबों का तो था नहीं, कि भाई भूख लगी और जाकर किसी होटल में खाना खा लें, देखा कि एक बकरियों का रेवड़ चर रहा है, सोचा कि इस बकरी वाले से दूध का प्याला लेकर अपनी भूख मिटा लें। उसके पास गये और कहा कि भाई मैं भूखा हूं मुझे एक प्याला दूध दे दो ताकि मैं उस से भूख मिटा लूं। पैसे जो कुछ लेने हों ले लो।

चरवाहे ने कहा कि जनाब मैं आपको ज़रूर दूध दे देता, लेकिन ये बकरियां मेरी नहीं, ये किसी और की अमानत हैं। उसने मुझे इजाज़त नहीं दी, जब तक मैं उस से इजाज़त न ले लूं यह दूध मैं आपको कैसे दे दूं?

फ़ारूके आज़म हाकिम भी थे और मुअल्लिम और मुरब्बी भी थे, और साथ में अपनी क़ौम के एक एक फ़र्द की जांच पड़ताल भी किया करते थे। उस चरवाहे को जांचने के लिये उस से कहा कि मियां अगर तुम मेरी एक बात मानो तो तुम्हें एक बड़े फ़ायदे की बात बता दूं क्या? उसने कहा क्या? आपने फ़रमायाः कि ऐसा करो इसमें से एक बकरी मुझे बेच दो, मैं तुम्हें पैसे देता हूं। मैं बकरी अपने साथ रखूंगा उस से दूध भी पियूंगा और अगर ज़रूरत पेश आयेगी तो उसको काट कर उसका गोश्त भी खाऊंगा, और पैसे तुम रख लो, जब मालिक पूछे कि एक बकरी कहां गयी? तो कह देना कि भेड़िया खा गया। तुम्हारी बात भी बन जायेगी, तुम्हारा फ़ायदा भी हो जायेगा, मेरा भी फ़ायदा हो जायेगा, मुझे भूख के लिये दूध मिल जायेगा।

जैसे ही हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने यह बात फ़रमाई, वह चरवाहा बेसाख़्ता चिल्लाया किः

يا هذا فاين الله

ऐ शख़्स तू मुझे यह कह रहा है, अगर यह काम मैं कर लूं तो बताओ ख़ुदा कहां है? फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु तो ज़ाहिर है महज़ जांचने के लिये यह बात पूछ रहे थे। जब आपने उस चरवाहे का यह जवाब सुना तो फ़रमायाः जब तक तुझ जैसे इन्सान इस उम्मत में बाक़ी हैं उस वक़्त तक इस उम्मत के ऊपर ख़ैर और फ़लाह का ग़लबा रहेगा।

यह है वह आख़िरत की फ़िक्र कि जंगल की तन्हाई में बकरियां चराते हुए चरवाहे के दिमाग़ पर भी यह बात मुसल्लत है कि मुझे अल्लाह के सामने पेश होना है, और वह ज़िन्दगी भी दुरुस्त करनी है, अगर ग़लत काम करके थोड़े से पैसे मेरे हाथ आ भी गये तो

दुनिया का कुछ फ़ायदा शायद हो जाये, लेकिन आख़िरत मेरे हाथ से जाती रहेगी।

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ि. का दूसरा वाक़िआ

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु रात के वक़्त लोगों के हालात देखने के लिये गश्त किया करते थे। एक बार फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु गश्त करते हुए एक घर के क़रीब से गुज़रे, सुबह के झुट पटे का वक़्त था। उस घर में एक मां बेटी आपस में बातें कर रही थीं। मां बेटी से कह रही थी कि बेटी दूध निकालने का वक़्त आ गया, दूध निकाल लो और ऐसा करना कि आजकल हमारी गाय दूध कम दे रही है इसलिये दूध में पानी मिला देना, ताकि वह ज़्यादा हो जाये, बेटी ने कहाः अम्मां जान! मैं दूध में पानी मिला तो दूं, लेकिन अमीरुल मोमिनीन का यह हुक्म आया हुआ है कि कोई शख़्स दूध में पानी न मिलाए।

मां ने कहाः बेटी अमीरुल मोमिनीन का हुक्म ज़रूर है लेकिन वह यहां कहां पानी मिलाते हुए तुझे देख रहे हैं, वह तो कहीं अपने घर में सो रहे होंगे। अगर मिला लेगी तो अमीरुल मोमिनीन को पता भी नहीं चलेगा। बेटी ने कहा कि अम्मां जान! ठीक है, हो सकता है कि अमीरुल मोमिनीन को पता न चले, लेकिन अमीरुल मोमिनीन का जो अमीर है, वह तो देख रहा है, और जब वह देख रहा है तो मैं फिर यह काम कैसे कर सकती हूं?

फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु बाहर खड़े हुए यह गुफ़्तगू सुन रहे हैं, और वापस अपने घर जाने के बाद सुबह के वक़्त उस लड़की के बारे में मालूम किया कि यह कौन है? उस लड़की को बुलाया और अपने लड़के से उनका निकाह कर दिया, और उन्हीं की नस्ल से बाद में अमीरुल मोमिनीन हज़रत उमर बिन अ़ब्दुल अ़ज़ीज़ रहमतुल्लाहि अ़लैहि "उमरे सानी" पैदा हुए।

आख़िरत की फ़िक्र

यह है वह ज़हनियत कि जो जानती है कि "आख़िरत बेहतर

और ज़्यादा पायदार है।" दिल व दिमाग़ पर जब यह बात बैठ गयी तो फिर कोई गुनाह कोई बद उन्वानी करने के लिये हाथ नहीं बढ़ता। हर शख़्स उस काम की तरफ़ लपक रहा है जो जन्नत बनाने वाला है और अल्लाह को ख़ुश करने वाला है, और उस काम से रुक रहा है जो अल्लाह को नाराज़ करने वाला है।

यह है हकीक़त में इस आयत का मन्शा कि अगर तुम अपनी इस बीमारी को पहचान लो कि तुम सारी दौड़ धूप, सारी फ़िक्र, सारी सोच दुनिया के लिये कर रहे हो। कभी बैठ कर यह भी सोचा करो कि इतने आदमियों को मैंने मरते हुए देखा है, क़ब्र में दफ़न होते हुए देखा है, एक दिन मेरे साथ भी वही मामला पेश आने वाला है, और क़ब्र के अन्दर क्या होने वाला है, उसकी तफ़सील सरकारे दो आलम मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम बता गये, कि क़ब्र में क्या होगा? क़ब्र के बाद क्या होगा? पूरा कुरआने करीम आख़िरत के तज़्किरे से भरा हुआ है, और हदीसों में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तफ़सील से बता दिया कि आख़िरत के अन्दर क्या होने वाला है। ताकि आख़िरत का ख़्याल दिलों पर मुसल्लत हो जाये। आख़िरत का ख़्याल दिलों पर बैठ जाये। लेकिन हम और आप अपने चौबीस घन्टों में से कोई वक़्त इस काम के लिये नहीं निकालते जिसके अन्दर हम और आप इस बात को सोचा करें।

यह फ़िक्र किस तरह पैदा हो?

अब सवाल यह है कि यह दुनिया की ज़िन्दगी की फ़िक्र जो ग़ालिब आई हुई है, इसको कैसे मग़लूब किया जाये? और आख़िरत की फ़िक्र को ग़ालिब कैसे किया जाये? कैसे वह बात दिल में बैठे जो उस चरवाहे के दिल में बैठ गयी थी? कैसे वह बात दिल में बैठे जो उस नौजवान लड़की के दिल में बैठ गयी थी, कि अल्लाह मुझे देख रहा है, यह बात किस तरह दिल में पैदा हो?

रास्ता इसका एक ही है, वह यह है कि जिसको आख़िरत की

फ़िक्र हो जिसके दिल में अल्लाह के सामने जवाब देही का एहसास हो, उसकी सोहबत इख़्तियार कर लो, उसके साथ रहो, उसके पास बैठो, उसकी बातें सुनो, तो वह आख़िरत की फ़िक्र तुम्हारे दिल में भी मुन्तक़िल हो जायेगी।

यह सोहबत ही वह चीज़ है जिसने सहाबा–ए–किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम को बदल दिया। आख़िर ये लोग वही तो थे जो दुनिया की मामूली बातों पर एक दूसरे से लड़ रहे थे, मुर्ग़ी के बच्चे की ख़ातिर चालीस साल जंग जारी रही। कुएं की ख़ातिर, ज़मीनों की ख़ातिर, मामूली मामूली बकरियों और जानवरों की ख़ातिर, एक दूसरे के गले काटे जा रहे थे। एक दूसरे की गर्दनें उतारी जा रही थीं। एक दूसरे के ख़ून के प्यासे बने हुए थे। वही लोग तो थे, लेकिन जब सरकारे दो आलम मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सोहबत नसीब हो गयी तो वह सारी दुनिया तलबी ऐसी राख हुई कि सारे घर बार मक्का मुकर्रमा में छोड़ कर दुश्मनों के हवाले करके सिर्फ़ तन के कपड़ों के साथ हिजरत करके मदीना तय्यिबा चले आये।

सहाबा रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम की हालत

अन्सारे मदीना ने पेशकश की कि आप हमारे भाई हैं, इसलिये हमारी ज़मीनें आधी आप ले लें, आधी हम रख लें, लेकिन मुहाजिरों ने कहा कि नहीं, हम वे ज़मीनें इस तरह लेने के लिये तैयार नहीं, लेकिन आपकी ज़मीनों में मेहनत करेंगे, मेहनत के बाद जो पैदावार होगी वह आपस में बांट लेंगे। बताइये कि उनकी वह दुनिया तलबी कहां गयी?

जिहाद के मैदान में जंग हो रही है, मौत आंखों के सामने नाच रही है, उस वक़्त कोई हदीस सुना देता है कि सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि जो शख़्स अल्लाह के रास्ते में शहीद हो तो अल्लाह तबारक व तआला उसको

जन्नत के आला दर्जे अता फ़रमाते हैं। एक सहाबी ने पूछा: क्या वाक़ई यह बात रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से तुमने सुनी? कहा कि हां मैंने सुनी, मेरे कानों ने सुनी, मेरे दिल ने याद रखा। उन सहाबी ने कहा कि अच्छा बस अब तो मेरे ऊपर जिहाद से अलग रहना हराम है। तलवार उठाई और दुश्मन की भीड़ के अन्दर घुसे, तीर आकर सीने के ऊपर लगा, सीने से ख़ून का फ़ुव्वारा उबलता हुआ देख कर जो अल्फ़ाज़ ज़बान से जारी होते हैं वे ये कि "फ़ुज़्तु व रब्बिल् काबा" यानी काबे के रब की क़सम आज मैं कामयाब हो गया, आज मुझे मन्ज़िल मिल गयी।

यह वही दुनिया के तालिब, वही दुनिया के चाहने वाले, दुनिया के पीछे दौड़ने वाले थे, लेकिन नबी-ए-करीम सरवरे दो आ़लम मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सोहबत से आख़िरत दिल व दिमाग़ पर इस तरह छा गयी।

जादूगरों का मज़बूत ईमान

क़ुरआने करीम में हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का वाक़िआ आता है कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने जब फ़िरऔ़न को दावत दी और मोजिज़ा दिखाया, अ़सा यानी लाठी ज़मीन पर डाली, तो वह सांप बन गयी, तो फ़िरऔ़न ने कहा कि इनके मुक़ाबले के लिये जादूगर लाने चाहियें। सारे मुल्क से जादूगर इकट्ठे करके उनसे कहा कि आज तुम्हारा मुक़ाबला एक बड़े जादूगर से है, और आज तुम उनके ऊपर ग़ालिब आकर दिखाओ, अपने फ़न का मुज़ाहरा करो। जादूगर आये, जो फ़िरऔ़न के चहीते जादूगर थे। लेकिन पहले भाव ताव तय किया कि:

"قَالُوْٓا اِنَّ لَنَا لَاَجْرًا اِنْ كُنَّا نَحْنُ الْغَالِبِيْنَ" (الشعرآء:٤١)

पहले यह बताइये फ़िरऔ़न साहिब कि अगर हम मूसा अ़लै. पर ग़ालिब आ गये तो कुछ उज्रत भी मिलेगी या नहीं मिलेगी? कोई इनाम मिलेगा कि नहीं मिलेगा?

"قَالَ نَعَمْ وَاِنَّكُمْ لَمِنَ الْمُقَرَّبِيْنَ"

हां ज़रूर इनाम मिलेगा, और न सिर्फ़ इनाम मिलेगा बल्कि तुम्हें हमेशा के लिये अपना ख़ास और क़रीबी बना लूंगा। जब मुक़ाबले का वक़्त आया, और हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के सामने जादूगर खड़े हुए तो जादूगरों ने अपनी रस्सियां डालीं, लाठियां डालीं तो वे सांप बनकर चलना शुरू हो गयीं। अल्लाह तबारक व तआ़ला ने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को "वही" फ़रमाई और फ़रमाया कि अब तुम अपना अ़सा (लाठी) डालो। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने अपना अ़सा डाला और वह एक अज़्दहा बनकर जितने सांप उन जादूगरों ने बनाये थे उन सब को एक एक करके निगलना शुरू कर दिया। सारे सांपों को निगल गया, जादूगर फ़न जानते थे, समझ गये कि यह जो कुछ दिखाया जा रहा है यह जादू नहीं है, अगर जादू होता तो हम ग़ालिब आ जाते, हमारा जादू मग़लूब हो गया इसलिये यह जादू नहीं है। यह जो बात कर रहे हैं कि वह अल्लाह की तरफ़ से भेजे हुए पैग़म्बर हैं, वह यक़ीनन अल्लाह के पैग़म्बर हैं। दिल में बात आ गयी और जब पैग़म्बर पर ईमान ले आये, और पैग़म्बर के मोजिज़े को आंखों से देख लिया और पैग़म्बर की ज़रा सी देर ज़ियारत कर ली, सोहबत उसकी हासिल हो गयी, एक दम सारे के सारे जादूगर पुकार उठे।

"اٰمَنَّا بِرَبِّ هٰرُوْنَ وَمُوْسٰى" (طٰه: ٧٠)

"हम मूसा और हारून के परवर्दिगार पर ईमान ले आये"।

फ़िरऔन ये सब नज़ारा देख रहा है, वह कहता है:

"اٰمَنْتُمْ لَهٗ قَبْلَ اَنْ اٰذَنَ لَكُمْ"

अरे तुम उसके ऊपर ईमान ले आये, मैंने तुम्हें अब तक ईमान लाने की इजाज़त भी नहीं दी, इजाज़त से पहले ईमान ले आये, और साथ में फिर सज़ा की धमकी भी दी कि याद रखो कि अगर तुम उस पर ईमान लाये तो तुम्हारा हश्र यह होगा:

"فَلَاُقَطِّعَنَّ اَيْدِيَكُمْ وَاَرْجُلَكُمْ مِّنْ خِلَافٍ وَّلَاُوصَلِّبَنَّكُمْ فِىْ جُذُوْعِ النَّخْلِ وَلَتَعْلَمُنَّ اَيُّنَا اَشَدُّ عَذَابًا وَّاَبْقٰى" (طٰه : ٧١)

मैं तुम्हारे हाथ पांव मुख़ालिफ़ सिम्तों से काट दूंगा, और तुम्हें खजूर के शहतीर में सूली पर चढ़ाऊंगा और तब पता चलेगा कि किसका अज़ाब ज़्यादा सख़्त है। यह धमकी दे रहा है फ़िरऔन, अब आप ज़रा ग़ौर फ़रमाइये कि वही जादूगर जो अभी थोड़ी देर पहले भाव ताव कर रहे थे, कि क्या हमें उजरत भी मिलेगी? वही जादूगर जो फ़िरऔन की तलबी पर मूसा अलैहिस्सलाम के ख़िलाफ़ उठ खड़े हुए थे। अब न सिर्फ़ यह कि वह उजरत की तलब बाक़ी न रही, बल्कि अब फांसी का तख़्ता सामने लटका हुआ नज़र आ रहा है। फ़िरऔन कह रहा है कि मैं इस पर चढ़ा दूंगा, हाथ पांव काट दूंगा, लेकिन इसके बावजूद उनकी ज़बान से निकलता है:

"قَالُوْا لَنْ نُّؤْثِرَكَ عَلٰى مَا جَآءَنَا مِنَ الْبَيِّنٰتِ وَالَّذِىْ فَطَرَنَا فَاقْضِ مَآ اَنْتَ قَاضٍ" (سورة طٰه:٧٢)

ऐ फ़िरऔन! ख़ूब समझ लो कि हम तुम्हें और तुम्हारे माल व दौलत को और तुम्हारी हुकूमत को उस मोजिज़े पर तरजीह नहीं देंगे, जो अल्लाह ने हमें खुली आंखों से दिखा दिया। जो तुझे करना हो कर गुज़र। क्यों? इस वास्ते कि जो कुछ फ़ैसला तू करेगा वह इसी दुनियावी ज़िन्दगी का फ़ैसला होगा, तू हमारे हाथ काटे या पांव काटे, सूली पर चढ़ाये, या फांसी पर चढ़ाये, यह दुनिया का फ़ैसला होगा, और हमने जो मन्ज़र देखा है वह आख़िरत का मन्ज़र है, वह हमेशा रहने वाली ज़िन्दगी का मन्ज़र है। देखिये एक लम्हे पहले तो उजरत मांग रहे थे कि पैसे लाओ और अब एक लम्हे के बाद यह हालत हो गयी कि सूली पर चढ़ने के लिये तैयार हो गये। यह काया किसने पलटी? यह ईमान के साथ जब सोहबत नसीब हुई, उसने यह काया पलट दी।

सोहबत का फ़ायदा

बहर हाल, ईमान के साथ, एतिक़ाद के साथ जब सोहबत होती

है तो वह दिलों के अन्दर ये जज़्बे पैदा करती है, फिर दुनिया तलबी मिटती है, आख़िरत की फ़िक्र ग़ालिब आ जाती है। और जब यह ग़ालिब आ जाये तो उस वक़्त इन्सान इन्सान बनता है। जब तक उसके दिल और दिमाग़ पर दुनिया मुसल्लत है वह इन्सान नहीं, दरिन्दा है। इस वास्ते कि वह तो चाहता है कि दुनिया के अन्दर मुझे ख़ुशी मिल जाये, चाहे किसी की गर्दन फलांग कर हो, किसी की लाश पर खड़े होकर हो, और चाहे किसी की गर्दन काट कर हो, लेकिन मुझे किसी तरीक़े से दुनिया का फ़ायदा हासिल हो जाये। वह दरिन्दा बन जाता है। इन्सान बनने का रास्ता सिवाए इसके नहीं कि आदमी मरने के बाद की बात को सोचे। आख़िरत की बात को सोचे और यह सिर्फ़ और सिर्फ़ आख़िरत की फ़िक्र रखने वालों की सोहबत से नसीब होती है। हक़ीक़त में इस दीन को हासिल करने का और अपनी ज़िन्दगियों में इसको रचाने का वाहिद रास्ता यही है कि अल्लाह वालों की सोहबत उठाई जाये, अल्लाह वाला उसी को कहते हैं जो आख़िरत की फ़िक्र रखता हो, उसकी सोहबत में आदमी बैठेगा तो उसको आख़िरत की फ़िक्र हासिल होगी। अल्लाह तबारक व तआला अपनी रहमत से अपने फ़ज़्ल व करम से हमारे दिलों में यह जज़्बा पैदा फ़रमा दे तो सारी मुश्किलें हल हो जायें।

आजकी दुनिया का हाल

आज हमारे ऊपर मसाइल और मुश्किलों का तूफ़ान चारों तरफ़ मुसल्लत है, इसको हल करने के लिये महकमे हैं, पुलिस है, अदालतें हैं, लेकिन सरकारी दफ़्तरों में रिश्वत बहुत ली जाती है। अच्छा भाई इसका यह इलाज किया जाये कि रिश्वत रोकने वाला महकमा बनाया जाए, चुनांचे अब वह महकमा बन गया। इसका नतीजा क्या हुआ कि रिश्वत पहले पांच रुपये होती थी, अब दस रुपये हो गयी। और रिश्वत में अब दो हिस्से लग गये। एक हिस्सा सरकारी अफ़सर का, और एक रिश्वत रोकने वाले महकमे के अफ़सर का भी हिस्सा लग

गया, अब रिश्वत लेने को रोकने के ऊपर एक और निगरां बिठा दो, उस निगरां पर एक और निगरां बिठा दो, और चलते जाओ, रिश्वत का रेट बढ़ता चला जायेगा, लेकिन रिश्वत बन्द नहीं होगी। क्यों? इस वास्ते कि जिसको भी बिठा रहे हो, उसके सामने बस यह दुनिया चक्कर लगा रही है, उसके सामने सिर्फ़ यह है कि किसी तरह दूसरे के बंगले से मेरा बंगला अच्छा बन जाये। दूसरे की कार से मेरी कार अच्छी हो जाये। दूसरों के कपड़ों से मेरे कपड़े अच्छे हो जायें। उसके दिल व दिमाग़ पर हर वक़्त यह भूत छाया हुआ है, अब चाहे कितने ही महकमे बिठाते चले जाओ, अदालतें लगाते चले जाओ, क़ानून बनाते चले जाओ, क़ानून भी दो दो रुपये में बिकता है, मैं दावे के साथ कहता हूं कि अगर ख़ुदा का ख़ौफ़ नहीं, अगर आख़िरत की फ़िक्र नहीं, अल्लाह के सामने जवाब देही का एहसास नहीं, तो फिर हज़ार क़ानून बना लो, हज़ार महकमे बिठा दो, हज़ार पुलिस वाले बिठा दो, लेकिन ख़ुदा के ख़ौफ़ के बग़ैर सब बेकार।

यह अमेरिका दुनिया के अन्दर सब से मुहज़्ज़ब मुल्क कहलाने वाला, बच्चा बच्चा तालीम याफ़्ता, सौ फ़ीसद तालीम, दौलत की रेल पेल, साइन्सी टेक्नालोजी और दुनिया भर के तमाम उलूम और फ़ुनून का मर्कज़, पुलिस हर वक़्त चौकस, कोई रिश्वत नहीं खाता, पुलिस वाले को रिश्वत देकर बाज़ नहीं रखा जा सकता। पुलिस तीन मिनट के नोटिस पर पहुंच जाती है, लेकिन वहां का यह हाल है कि मुझे नसीहत करने वालों ने यह नसीहत की, कि बराए करम जब आप अपने होटल से बाहर निकलें तो बेहतर यह है कि घड़ी हाथ पर न बांधें और आपकी जेब के अन्दर पैसे भी न हों, थोड़े बहुत जो ज़रूरत के हों रख लीजिये। क्योंकि ख़तरा है कि किसी वक़्त भी कोई आदमी घड़ी छीन कर ले जायेगा, कोई आदमी आपकी जेब से पैसे निकाल कर ले जायेगा और उसकी ख़ातिर आपका ख़ून तक कर देगा। यह सब कुछ हो रहा है, और क़ानून बैठा तमाशा देख रहा है। पुलिस तीन मिनट के नोटिस पर पहुंचने वाली बेबस है, महकमे,

अदालतें सब अपनी जगह पर खड़ी हुई हैं। एक तरफ़ चांद पर झन्डे गाड़ रहा है, और अमेरिका का राष्ट्रपति यह बयान दे रहा है कि आज हमारा सब से बड़ा मसला यह है कि जराइम पर कैसे क़ाबू पायें? वह जो इक़बाल मरहूम ने कहा था कि:

ढूंढने वाला सितारों की गुज़र गाहों का
अपने अफ़कार की दुनिया में सफ़र कर न सका
जिसने सूरज की शुआओं को गिरफ़्तार किया
ज़िन्दगी की शबे तारीक सहर कर न सका

दुनिया यह मन्ज़र देख रही है और देखती रहेगी, और जब तक सरकारे दो आलम मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के क़दमों पर सर नहीं रखेगी, और जब तक आपकी रहनुमाई में आख़िरत की फ़िक्र दिल और दिमाग़ पर मुसल्लत नहीं होगी, उस वक़्त तक यह मन्ज़र नज़र आते रहेंगे। हज़ार क़ानून बनाते रहो, हज़ार महकमे बैठाते रहो, तुम्हारे मसाइल का हल कभी नहीं निकलेगा। मसाइल के हल का रास्ता यही है कि अल्लाह वालों की सोहबत इख़्तियार करें, उनके पास बैठें, उनकी बातें सुनें, आख़िरत के हालात मालूम करें।

अल्लाह तआला अपनी रहमत से हमें इसकी हक़ीक़त समझने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आख़िरत की फ़िक्र हमारे दिलों के ऊपर ग़ालिब फ़रमाये और दुनिया तलबी की दौड़ जिसके अन्दर हम मुब्तला हो गये हैं, अल्लाह तआला इस से हमें बचाये और अल्लाह वालों की सोहबत नसीब फ़रमाये, आमीन।

واخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

दूसरों को ख़ुश कीजिये

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

"عن عبد الله بن عمر رضی الله عنهما قال: قال رسول الله صلی الله علیه وسلم: احب الاعمال الی الله سرور یدخله علیٰ مسلم" (المعجم الکبیر)

तम्हीद

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि जो आमाल अल्लाह तआ़ला को पसन्द हैं, उन आमाल में से एक अ़मल किसी मोमिन के दिल में ख़ुशी दाख़िल करना और उसको ख़ुशी से हमकिनार करना है। इस हदीस की सनद अगरचे कमज़ोर है मगर इस हदीस का मज़मून दूसरी हदीसों और दलीलों से साबित है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अनेक हदीसों में और अपने क़ौल व फ़ेल के ज़रिये यह बात वाज़ेह फ़रमाई है कि किसी भी ईमान वाले को ख़ुश करना अल्लाह तआ़ला को बहुत पसन्द है।

मेरे बन्दों को ख़ुश रखो

हमारे हज़रत डा. अ़ब्दुल हई साहिब रह़मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि जब कोई बन्दा अल्लाह तआ़ला की तरफ़ रुजू करता है और अल्लाह तआ़ला से अपनी मुहब्बत का इज़्हार करता है तो अल्लाह जल्ल जलालुहु जवाब में ज़बाने हाल से गोया यों फ़रमाते हैं कि अगर तुम मुझ से मुहब्बत करते हो तो मैं तुम्हारे साथ दुनिया

में मिलने वाला नहीं हूं कि तुम किसी वक़्त मुझ से मुलाक़ात करके अपनी मुहब्बत का इज़हार करो। लेकिन अगर तुमको मेरे साथ मुहब्बत है तो इसका तक़ाज़ा यह है कि मेरे बन्दों के साथ मुहब्बत करो, मेरी मख़्लूक़ से मुहब्बत करो और मेरी मख़्लूक़ से मुहब्बत करने का तक़ाज़ा यह है कि उसको जहां तक मुम्किन हो ख़ुश करने की और ख़ुश रखने की कोशिश करो।

मुसलमान का दिल ख़ुश करना हज्जे अकबर है

इस बारे में हमारे समाज में कमी बेशी पाई जाती है, सही और एतिदाल नहीं है। कुछ लोग तो वे हैं जो किसी दूसरे मुसलमान को ख़ुश करने की कोई अहमियत ही नहीं समझते और उनको यह भी नहीं मालूम कि यह कितनी बड़ी इबादत है। किसी भी मुसलमान को ख़ुश कर दिया या किसी इन्सान को ख़ुश कर दिया तो अल्लाह तबारक व तआला उस पर कितना अज्र और सवाब अता फ़रमाते हैं, इसका हमें एहसास ही नहीं। बुज़ुर्गों ने फ़रमाया किः

दिल बदस्त आवर कि हज्जे अकबर अस्त

यानी किसी मुसलमान का दिल हाथ में ले लेना यानी उसके दिल को ख़ुश कर देना यह हज्जे अकबर है। बुज़ुर्गों ने वैसे ही इसको हज्जे अकबर नहीं कह दिया बल्कि किसी मुसलमान के दिल को ख़ुश कर देना वाक़ई अल्लाह तआला के पसन्दीदा अमलों में से है।

दूसरों को ख़ुश करने का नतीजा

ज़रा इस बात को सोचें कि अगर इस हदीस की तालीम पर हम सब अमल करने लगें और हर इन्सान इस बात की फ़िक्र करे कि मैं किसी दूसरे को ख़ुश करूं तो यह दुनिया जन्नत का नमूना बन जाये, कोई झगड़ा बाक़ी न रहे, फिर कोई हसद बाक़ी न रहे और किसी भी शख़्स को दूसरे से तक्लीफ़ न पहुंचे। इसलिये एहतिमाम करके दूसरे को ख़ुश करो, थोड़ी सी तक्लीफ़ उठा कर और क़ुरबानी देकर दूसरों

को ख़ुश करो, अगर तुम थोड़ी सी तक्लीफ़ उठा लोगे और उसके नतीजे में दूसरे को राहत और ख़ुशी मिल जायेगी तो दुनिया में चन्द लम्हों और चन्द मिन्टों की जो तक्लीफ़ उठाई है उसके बदले में अल्लाह तआ़ला आख़िरत में जो सवाब तुम्हें अ़ता फ़रमायेंगे वह दुनिया की इस मामूली सी तक्लीफ़ के मुक़ाबले में कहीं ज़्यादा बड़ा है।

ख़ुशी के साथ मुलाक़ात करना "सदक़ा" है

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सदक़े की बहुत सी क़िस्में बयान फ़रमाई हैं कि यह अ़मल भी सदक़ा है, फ़लां अ़मल भी सदक़ा है, फ़लां अ़मल भी सदक़ा है, और सदक़ा होने का मतलब यह है कि उस अ़मल पर ऐसा ही सवाब है जैसे सदक़ा करने का सवाब है। फिर उसी हदीस के आख़िर में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"وان تلقی اخاك بوجه طلق"

यानी एक सदक़ा यह है कि अपने भाई के साथ शगुफ़्ता और मुस्कुराते हुए चेहरे के साथ मिलो। जब तुम किसी से मुलाक़ात करो तो तुमको यह एहसास हो कि तुम्हारी मुलाक़ात से उसको ख़ुशी हुई है, और उस मुलाक़ात से उसके दिल में ठंडक महसूस हो। उसको सदक़ा करने में शुमार फ़रमाया है।

इसलिये जो लोग दूसरों से मुलाक़ात के वक़्त और बर्ताव के वक़्त लिये दिये रहते हैं और वक़ार के पर्दे में अपने आपको रिज़र्व रखते हैं, वे लोग सुन्नत तरीक़े पर अ़मल नहीं करते, सुन्नत तरीक़ा यह है कि जब अपने मुसलमान भाई से मिले तो वह अच्छे अख़्लाक़ से शगुफ़्तगी के साथ मिले और उसको ख़ुश करने की कोशिश करे।

गुनाह के ज़रिये दूसरों को ख़ुश न करें

दूसरी तरफ़ बाज़ लोगों में यह बे एतिदालियां पाई जाती है कि वे यह कहते हैं कि चूंकि दूसरे मुसलमान को ख़ुश करना बड़ी

इबादत है, इसलिये हम तो यह इबादत करते हैं कि दूसरों को खुश करते हैं। चाहे वह खुश करना किसी गुनाह के ज़रिये हो या किसी ना जायज़ काम के ज़रिये हो। जब अल्लाह तआला ने कह दिया कि दूसरों को ख़ुश करो तो हम यह इबादत अन्जाम दे रहे हैं, हालांकि यह गुमराही की बात है, इसलिये कि दूसरों को ख़ुश करने का मतलब यह है कि मुबाह और जायज़ तरीक़े से ख़ुश करो। अब अगर ना जायज़ तरीक़े से दूसरों को ख़ुश करोगे तो इसका मतलब यह हुआ कि गुनाह करके अल्लाह तआला को तो नाराज़ कर दिया और बन्दे को ख़ुश कर दिया, यह कोई इबादत नहीं। इसलिये अगर दूसरे की मरव्वत में आकर या उसके ताल्लुक़ात से मरऊब होकर गुनाह का इर्तिकाब कर लिया तो यह कोई दीन नहीं, यह कोई इबादत नहीं।

फ़ैज़ी शायर का वाक़िआ

अकबर बादशाह के ज़माने में "फ़ैज़ी" बहुत बड़े अदीब और शायर गुज़रे हैं। एक बार वह हज्जाम से दाढ़ी मुंडवा रहे थे, एक साहिब उनके पास से गुज़रे, उन्होंने जब देखा कि फ़ैज़ी साहिब दाढ़ी मुंडवा रहे हैं तो उनसे कहा:

आग़ा! रीश मी तराशी?

"जनाब! आप यह दाढ़ी मुंडवा रहे हैं?"

जवाब में फ़ैज़ी ने कहा:

"बले! रीश मी तराशम, वले दिले कसे नमी ख़राशम"

"जी हां! दाढ़ी तो मुंडवा रहा हूं लेकिन किसी का दिल तो नहीं दुखा रहा हूं"

मतलब यह था कि मेरा अमल मेरे साथ है और मैं किसी का दिल नहीं दुखा रहा हूं, और तुमने जो मेरे इस अमल पर मुझे टोका तो इसके ज़रिये तुमने मेरा दिल दुखाया। उस पर उन साहिब ने जवाब में कहा कि:

"दिले कसे नमी ख़राशी, वले दिले रसूलुल्लाह मी ख़राशी (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम)

यानी जो यह कह रहे हो कि मैं किसी का दिल नहीं दुखा रहा हूं, अरे इस अ़मल के ज़रिये तुम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का दिल दुखा रहे हो।

अल्लाह वाले दूसरों को ख़ुश रखते हैं

इसलिये बाज़ लोगों के ज़ेहन में भी और ज़बान पर भी यह बात रहती है कि हम तो दूसरे लोगों का दिल ख़ुश करते हैं, और अब दूसरों का दिल ख़ुश करने के लिये किसी गुनाह का जुर्म भी करना पड़ा तो कर गुज़रेंगे। भाई! अल्लाह तआ़ला को नाराज़ करके, अल्लाह तआ़ला की ना फ़रमानी करके और अल्लाह तआ़ला के हुक्म को पामाल करके किसी इन्सान का दिल ख़ुश किया, तो क्या ख़ुश किया, क्योंकि अल्लाह तआ़ला को तो नाराज़ कर दिया, यह तो कोई इबादत नहीं है। इस हदीस का मन्शा यह है कि जो जायज़ उमूर हैं, उनमें मुसलमानों को ख़ुश करने की फ़िक्र करो। हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इस हदीस की तश्रीह करते हुए फ़रमाया कि:

"यह मामूल सूफ़िया का मिस्ल तबई के है"।

यानी सूफ़िया-ए-किराम जो अल्लाह तआ़ला के दोस्त और अल्लाह के वली होते हैं, हर मुसलमान को ख़ुश करने की फ़िक्र उनकी तबीयत बन जाती है। उनके पास आकर आदमी हमेशा ख़ुश होकर जाता है, गमगीन होकर नहीं। इसलिये कि अल्लाह तबारक व तआ़ला के फ़ज़्ल से उनको इस सुन्नत पर अ़मल की तौफ़ीक़ होती है कि वे अल्लाह तआ़ला के बन्दों को ख़ुश करते हैं। फिर आगे फ़रमाया कि:

ख़ुद गुनाह में मुब्तला न हो

"इसकी एक शर्त है, वह यह कि उस सुरूर को दाख़िल करने से ख़ुद शुरूर में दाख़िल न हो जाये"।

यानी दूसरों का तो दिल खुश कर रहा है और उसको सुरूर देने की फ़िक्र में है, लेकिन उसके नतीजे में खुद शुरूर में यानी ना फ़रमानी और गुनाह में दाख़िल हो गया, यह न करे। आगे फ़रमायाः

"जैसा उन लोगों का तरीक़ा है जिन्होंने अपने मस्लक का लक़ब "सुलहे कुल" रखा हुआ है"।

यानी बाज़ लोगों ने अपना मस्लक "सुलहे कुल" बनाया है। उनका कहना यह है कि हम तो "सुलहे कुल" हैं, इसलिये कोई कुछ भी करे, हम किसी को भी किसी ग़लती पर नहीं टोकेंगे, किसी बुराई को बुराई नहीं कहेंगे, किसी बुराई को रद्द नहीं करेंगे, हम तो "सुलहे कुल" हैं। यह तरीक़ा सही नहीं है, चुनांचे आगे हज़रते वाला फ़रमाते हैं किः

नेकी और अच्छे कामों के हुक्म को न छोड़े

"बाज़ लोग तो इसी वजह से अच्छे कामों के हुक्म और बुरे कामों से नहीं रोकते"

जैसे अगर फ़लां को नमाज़ पढ़ने के लिये कहेंगे तो उसका दिल बुरा होगा। अगर फ़लां को किसी गुनाह पर टोकेंगे तो उसका दिल बुरा होगा, और हम से किसी का जी बुरा न हो। फिर फ़रमाया किः

"क्या उनको कुरआन पाक का यह हुक्म नज़र नहीं आया किः

"ولا تأخذكم بهما رأفة في دين الله"

"कि तुमको अल्लाह तआ़ला के दीन के बारे में उन पर तरस न आये"

यानी एक शख़्स दीन की ख़िलाफ़ वर्ज़ी कर रहा है, गुनाह का इर्तिकाब (जुर्म) कर रहा है, उसके बारे में तुम्हारे दिल में यह शफ़क़त पैदा न हो कि अगर मैं उसको गुनाह करने पर टोकूंगा तो उसका दिल दुखेगा।

नर्म अन्दाज़ से बुराईयों से रोके

लेकिन यह ज़रूरी है कि उसको कहने के लिये तरीक़ा ऐसा

इख़्तियार करे जिस से उसका दिल कम से कम दुखे, दिल को दुखाने वाला तरीक़ा इख़्तियार न करे बलिक नर्मी का अन्दाज़ हो, उसमें हमदर्दी हो, मुहब्बत हो, शफ़्क़त हो, ख़ैर ख़्वाही हो, इख़्लास हो, गुस्सा निकालना मक़सूद न हो। लेकिन यह सोचना कि अगर मैं उसको टोकूंगा तो उसका दिल दुखेगा, चाहे कितने भी नर्म अन्दाज़ में कहूं, तो यह सोच दुरुस्त नहीं, इसलिये कि अल्लाह तआ़ला को राज़ी करना तमाम मख़्लूक़ को राज़ी करने से मुक़द्दम है। इसलिये दोनों इन्तिहाएं ग़लत हैं, कमी भी और बेशी भी। बस अपनी तरफ़ से हर मुसलमान को ख़ुश करने की कोशिश करो, लेकिन जहां अल्लाह की हदें आ जायें, हराम और ना जायज़ उमूर आ जायें तो फिर किसी का दिल दुखे या ख़ुश हो, उस वक़्त बस अल्लाह ही का हुक्म मानना है, उस वक़्त इताअ़त सिर्फ़ अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ही की करनी है, किसी और की परवाह नहीं करनी है। लेकिन जहां तक मुम्किन हो नर्मी का तरीक़ा इख़्तियार करना चाहिये। अल्लाह तआ़ला हम सब को अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

وآخردعوانا ان الحمد لله رب العالمين

मिज़ाज और ज़ौक़ की रियायत करें

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

"عن أبی ذر الغفاری رضی اللّٰه عنه قال: قال رسول اللّٰه صلی اللّٰه عليه وسلم: خالقوا الناس باخلاقهم او كما قال رسول اللّٰه صلی اللّٰه عليه وسلم"
(اتحاف السادة المتقين:٦-٣٥٤)

तम्हीद

हज़रत अबू ज़र गिफ़ारी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः लोगों के साथ उनके मिज़ाज, ज़ौक़ और अख़्लाक़ के मुताबिक़ बर्ताव करो, यह भी दीन का एक हिस्सा है कि इन्सान को जिन लोगों से वास्ता पड़े, उनके मिज़ाज और मज़ाक़ की रियायत करे और वह कोई ऐसा काम न करे जो उनके मिज़ाज और मज़ाक़ के ख़िलाफ़ हो और जिस से उनको तक्लीफ़ पहुंचे, चाहे वह काम अपने आप में जायज़ हो, हराम और ना जायज़ काम न हो, लेकिन यह ख़्याल करके कि इस काम के करने से उनके मिज़ाज पर बार होगा तो वह काम न किया जाये ताकि उस से उनकी तबीयत पर कोई बोझ और नागवारी पैदा न हो।

"दूसरे के मिज़ाज व मज़ाक़ की रियायत" दीनी तरीक़ा-ए-ज़िन्दगी के बाबों में से एक बड़ा बाब है, अल्लाह तआ़ला हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के दर्जों को बुलन्द फ़रमाये, आमीन। उन्होंने इस बाब को वाज़ेह किया है, इसलिये कि यह भी नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत का बड़ा अ़ज़ीम पहलू है।

हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि. के मिज़ाज की रियायत

चुनांचे हदीस शरीफ़ में वाक़िआ़ आता है कि एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अपने घर में तशरीफ़ फ़रमा थे और आप इस हालत में बैठे हुए थे कि आपने एक तहबन्द पहना हुआ था और वह तहबन्द काफ़ी ऊपर तक चढ़ा हुआ था, और बाज़ रिवायतों में आता है कि घुटने तक चढ़ा हुआ था। हो सकता है कि यह वाक़िआ़ उस वक़्त का हो जब घुटने का हिस्सा सतर में दाख़िल क़रार नहीं दिया गया था। बाज़ रिवायतों में आता है कि घुटने ढके हुए थे। इतने में किसी ने दरवाज़े पर दस्तक दी, मालूम हुआ कि हज़रत सिद्दीके अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु तशरीफ़ लाये हैं, आपने अन्दर आने की इजाज़त दे दी, वह अन्दर आकर बैठ गये और आप जिस अन्दाज़ में बैठे हुए थे उसी अन्दाज़ में बैठे रहे और आपके पांव मुबारक खुले रहे। थोड़ी देर के बाद फिर दरवाज़े पर दस्तक हुई, पता चला कि हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु तशरीफ़ लाये हैं, आपने उनको भी अन्दर आने की इजाज़त दे दी, वह भी आकर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास बैठ गये, आप उसी हालत में बैठे रहे और अपने अन्दाज़ में आपने कोई बदलाव नहीं फ़रमाया। थोड़ी देर के बाद फिर दरवाज़े पर दस्तक हुई, आपने पूछा कि कौन हैं? पता चला कि हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु तशरीफ़ लाये हैं, आपने फ़ौरन अपना तहबन्द नीचे करके अपने पांव मुबारक अच्छी तरह ढक लिये। फिर फ़रमाया कि उनको अन्दर बुला लो, चुनांचे वह भी अन्दर आकर बैठ गये।

इनसे तो फ़रिश्ते भी हया करते हैं

एक साहिब यह सब मन्ज़र देख रहे थे, उन्होंने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! जब हज़रत सिद्दीके अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु तशरीफ़ लाये तो आपने अपना तहबन्द नीचे नहीं किया, बल्कि वैसे ही बैठे रहे, जब हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु तशरीफ़ लाये तब भी आप उसी तरह बैठे रहे, लेकिन जब हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु तशरीफ़ लाये तो आपने अपनी हैयत में तब्दीली पैदा फ़रमाई, इसकी क्या वजह है? हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जवाब में इर्शाद फ़रमायाः मैं उस शख़्स क्यों हया न करूं जिस से फ़रिश्ते भी हया करते हैं।

मुकम्मल हया और ईमान वाले

हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु की ख़ास ख़ूबी "हया" थी। अल्लाह तआ़ला ने "हया" में उनको बहुत ऊंचा मकाम अ़ता फ़रमाया था, और आपका लकब "कामिलुल हया वल ईमान" था। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अपने तमाम सहाबा के मिज़ाजों से वाक़िफ़ थे और हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु के बारे में जानते थे कि उनके अन्दर हया बहुत है, अगरचे घुटने तक पांव का खुला होना कोई ना जायज़ बात नहीं थी, इसलिये हज़रत सिद्दीके अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के आने पर भी खुला रखा, और हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु के आने पर भी खुला रखा, लेकिन हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु के आने पर यह सोचा कि चूंकि उनकी तबीयत में हया ज़्यादा है, अगर उनके सामने इसी तरह बैठा रहूंगा तो उनकी तबीयत पर नागवार होगा और उनकी तबीयत पर बार होगा। इस वजह से उनके अन्दर आने से पहले पांव को ढक लिया और तहबन्द को नीचे कर लिया।

वे हज़राते सहाबा जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम

के एक इशारे पर अपनी जानें कुरबान करने के लिये तैयार थे, उनके मिज़ाजों की आपने इतनी रियायत फ़रमाई। फ़र्ज़ करें कि अगर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अन्हु के आने पर उसी तरह बैठे रहते जिस तरह बैठे हुए थे तो उनको हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से क्या शिकवा हो सकता था, लेकिन आपने इस बात की तालीम दे दी कि तुम्हारे ताल्लुक़ वालों में जो शख़्स जैसा मिज़ाज रखता हो उसके साथ वैसा ही बर्ताव करो। देखियेः हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम कितनी बारीक बीनी से अपने साथियों के मिज़ाजों का ख़्याल फ़रमाया करते थे।

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि. के मिज़ाज की रियायत

एक बार हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः एक उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) मैंने एक अजीब ख़्वाब देखा है, मैंने ख़्वाब में जन्नत देखी है और उस जन्नत में आलीशान महल बना हुआ देखा, मैंने पूछा कि यह महल किसका है? मुझे बताया गया कि यह उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) का महल है, उनके लिये तैयार किया गया है। वह महल मुझे इतना अच्छा लगा कि मेरा दिल चाहा कि अन्दर चला जाऊं और अन्दर जाकर देखूं कि उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) का महल कैसा है, लेकिन फिर ऐ उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) तुम्हारी ग़ैरत याद आ गयी कि तुम्हारी तबीयत में अल्लाह तआला ने ग़ैरत बहुत रखी है, मुझे यह ख़्याल हुआ कि उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से पहले उनके महल में दाख़िल हो जाना और उसको देखना उनकी ग़ैरत के मुताबिक़ नहीं होगा, इस वजह से मैं उस महल में दाख़िल नहीं हुआ। जब हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने यह सुना तो रो पड़े और अर्ज़ किया किः

"اوعليك يا رسول الله اغار"

या रसूलल्लाह! क्या मैं आप से ग़ैरत करूंगा। अगर ग़ैरत है भी तो वह दूसरों के हक़ में है, क्या मैं आप पर ग़ैरत करूंगा कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मुझ से पहले महल में क्यों दाख़िल हुए।

एक एक सहाबी की रियायत की

आप इस से अन्दाज़ा लगाइये कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कैसे कैसे लतीफ़ पैराये में अपने सहाबा के मिज़ाजों की रियायत की, यह नहीं था कि चूंकि हम इमाम हैं और ये हमारे मुक़्तदी हैं, हम पीर हैं और ये हमारे मुरीद हैं, हम उस्ताद हैं और ये हमारे शागिर्द हैं, इसलिये सारे हुक़ूक़ हमारे हो गये और उनका कोई हक़ न रहा। लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक एक सहाबी के मिज़ाज की रियायत करके दिखाई।

उम्महातुल मोमिनीन और हज़रत आ़यशा रज़ि. के मिज़ाज की रियायत

एक रिवायत में आता है कि एक बार जब हुज़ूरे अक़्दस सल्ल. ने एतिकाफ़ का इरादा फ़रमाया तो हज़रत आ़यशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! मेरा दिल भी चाहता है कि आपके साथ एतिकाफ़ में बैठूं। वैसे तो औ़रतों के लिये मस्जिद में एतिकाफ़ करना कोई अच्छी बात नहीं है, औ़रतों को एतिकाफ़ करना हो तो अपने घर में करें, लेकिन हज़रत आ़यशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हा का मामला इस लिहाज़ से मुख़्तलिफ़ था कि उनके घर का दरवाज़ा मस्जिद में खुलता था। अब अगर उनके घर के दरवाज़े के साथ ही उनकी एतिकाफ़ की जगह बना दी जाती, और उसके साथ ही हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के एतिकाफ़ की जगह होती तो किसी बेपर्दगी का डर न होता, जब ज़रूरत होती घर में चली जातीं और फिर वापस आकर अपने

एतिकाफ़ में बैठ जातीं। इसलिये अगर वह मस्जिद में एतिकाफ़ फ़रमातीं तो कोई ख़राबी लाज़िम न आती। इसी वजह से जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से इजाज़त तलब की कि मैं आपके साथ एतिकाफ़ करना चाहती हूं तो आपने इजाज़त दे दी।

लेकिन जब २० रमज़ानुल मुबारक की तारीख़ आई तो उस दिन आप कहीं बाहर तशरीफ़ ले गये थे, जब वापस तशरीफ़ लाये और मस्जिदे नबवी में पहुंचे तो आपने देखा कि मस्जिदे नबवी में बहुत सारे ख़ेमे लगे हुए हैं, आपने लोगों से पूछा कि ये ख़ेमे किसके हैं? लोगों ने बताया कि ये उम्महातुल मोमिनीन (हुज़ूरे पाक की पाक बीवियों) के ख़ेमे हैं। जब हज़रत आयशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अन्हा को एतिकाफ़ करने की इजाज़त मिल गयी तो दूसरी बीवियों ने चाहा कि हम भी यह सआदत हासिल कर लें, इसलिये उन्होंने भी एतिकाफ़ के लिये अपने अपने ख़ेमे लगा दिये। अब उस वक़्त हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह एहसास हुआ कि हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा का मामला तो अलग था, इसलिये कि उनका घर तो मस्जिदे नबवी से बिल्कुल लगा हुआ था, और दूसरी पाक बीवियों के मकान तो मस्जिदे नबवी से दूर हैं, अगर उन्होंने भी एतिकाफ़ किया तो उनका बार बार आना जाना रहेगा, इसमें बेपर्दगी का ख़तरा है, और इस तरह औरतों का मस्जिद के अन्दर एतिकाफ़ करना मुनासिब भी नहीं है। इसलिये आपने उनके ख़ेमे देख कर इर्शाद फ़रमायाः

"क्या ये औरतें कोई नेकी करना चाहती हैं?"

मतलब यह था कि इस तरह औरतों को मस्जिद में एतिकाफ़ करना कोई नेकी की बात नहीं।

इस साल हम भी एतिकाफ़ नहीं करेंगे

लेकिन अब मुश्किल यह थी कि हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा को आप एतिकाफ़ की इजाज़त दे चुके थे, अगरचे उनको इजाज़त देने की वजह वाज़ेह थी, और दूसरी उम्महातुल मोमिनीन में

वह वजह मौजूद नहीं थी, लेकिन आपने सोचा कि अगर मैं हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा का ख़ेमा बाक़ी रखूंगा और दूसरी उम्महातुल मोमिनीन को मना कर दूंगा तो उनके मिज़ाज पर बार होगा, कि हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा को तो इजाज़त दे दी और हमें इजाज़त न मिली, इसलिये जब आपने दूसरी उम्महातुल मोमिनीन के ख़ेमे उठवाए तो हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से फ़रमाया कि तुम भी अपना ख़ेमा उठा लो। लेकिन फिर ख़्याल आया कि हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा को चूंकि पहले से साफ़ तौर पर इजाज़त दे दी गयी थी, अब अगर अचानक ख़ेमा उठाने को कहा जायेगा तो उनकी तबीयत पर बार होगा, इसलिये उनका ख़्याल करते हुए आपने यह ऐलान फ़रमा दिया कि इस साल हम भी एतिकाफ़ नहीं करेंगे। चुनांचे उस साल आपने एतिकाफ़ ही नहीं फ़रमाया।

एतिकाफ़ की तलाफ़ी

बहर हाल उम्महातुल मोमिनीन (हुज़ूरे पाक की पाक बीवियों) के मिज़ाजों की रियायत के नतीजे में हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा का ख़ेमा उठवा दिया और फिर हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा के मिज़ाज की रियायत करते हुए अपने साथ यह मामला फ़रमाया कि वह मामूल जो सारी उम्र का चला आ रहा था कि हर रमज़ान मुबारक में आप एतिकाफ़ किया करते थे, महज हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की दिल शिक्नी के अन्देशे में उस मामूल को तोड़ दिया। आपकी पूरी मुबारक ज़िन्दगी में यह साल ऐसा था जिसमें आपने एतिकाफ़ नहीं फ़रमाया, लेकिन बाद में उसकी तलाफ़ी इस तरह फ़रमाई कि उस से अगले साल दस दिन के बजाए बीस दिन का एतिकाफ़ फ़रमाया।

यह भी सुन्नत है

इस से आप अन्दाज़ा लगाइये कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु

अ़लैहि व सल्लम ने कैसी कैसी रियायतें अपने छोटों के साथ फ़रमाईं और एक शरई हुक्म की वज़ाहत के मामले में भी ऐसा तरीक़ा इख़्तियार फ़रमाया, जिस से दूसरे की तबीयत पर बार न हो। हुक्म की वज़ाहत भी फ़रमा दी, उस पर अ़मल भी कर लिया और दूसरों की दिल शिक्नी से भी बच गये। और साथ में आपने अपने अ़मल से यह तालीम भी दे दी कि जो अ़मल फ़र्ज़ या वाजिब नहीं है बल्कि मुस्तहब है, अगर आदमी किसी की दिल शिक्नी से बचने के लिये उस मुस्तहब काम को लेट कर दे या छोड़ दे तो यह अ़मल भी नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत का हिस्सा है।

हज़रत डा. अ़ब्दुल हई साहिब रह. का मामूल

हमारे हज़रत डा. अ़ब्दुल हई साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि का हर रमज़ान में यह मामूल था कि जब अ़सर की नमाज़ के लिये मस्जिद में तश्रीफ़ ले जाते तो मग़रिब तक एतिकाफ़ की नियत से मस्जिद ही में कियाम फ़रमाया करते थे, वहां तिलावत, ज़िक्र और अज़्कार, तस्बीहात और मुनाजात में मश्गूल रहते थे और जो बाक़ी वक़्त मिलता तो आख़िर में लम्बी दुआ़ फ़रमाया करते थे और वह दुआ़ इफ़तार के वक़्त तक जारी रहती थी। हज़रते वाला अपने मुरीदों और अपने से मुताल्लिक़ लोगों को भी यह मश्विरा दिया करते थे कि वे भी अपना यह मामूल बना लें, क्योंकि इसके अन्दर आदमी का वक़्त मस्जिद में गुज़र जाता है, एतिकाफ़ की फ़ज़ीलत भी हासिल हो जाती है और मामूलात भी पूरे हो जाते हैं, और आख़िर में दुआ़ की तौफ़ीक़ भी हो जाती है, और यह दुआ़ तो रमज़ान मुबारक का हासिल है, इसलिये कि उस वक़्त दिन ख़त्म हो रहा होता है, और इफ़तार का वक़्त क़रीब होता है, और उस वक़्त आदमी की तबीयत में शिकस्तगी होती है, और उस शिकस्तगी की हालत में जो दुआ़यें की जाती हैं वे बड़ी ही क़बूल होती हैं। हज़रते वाला अक्सर अपने से ताल्लुक़ रखने वालों को मश्विरा दिया करते थे, बल्कि ताकीद

फ़रमाया करते थे कि ऐसा कर लिया करो। चुनांचे हज़रते वाला के मुरीद और आपसे ताल्लुक़ रखने वालों में इस तरीक़े पर अमल अब भी जारी है।

मस्जिद के बजाए घर पर वक़्त गुज़ारें

एक बार हज़रते वाला से ताल्लुक़ रखने वालों में से एक साहिब ने हज़रते वाला रह्मतुल्लाहि अलैहि से अर्ज़ किया कि हज़रत! मैंने आपके इर्शाद के मुताबिक़ अपना यह मामूल बनाया हुआ था कि असर से लेकर मग़रिब तक का वक़्त मस्जिद में गुज़ारता और वहां पर बैठ कर तिलावत, ज़िक्र और अज़कार अैर तस्बीहात और दुआ में मश्ग़ूल रहता। एक दिन मेरी बीवी ने मुझ से कहा कि आप सारा दिन वैसे भी बाहर रहते हैं, ले देकर असर के बाद का वक़्त होता था, उसमें हम बैठ कर कुछ बातें कर लिया करते थे और इफ़तार के वक़्त एक साथ इफ़तार करने की राहत हासिल होती थी, अब आपने चन्द रोज़ से यह तरीक़ा इख़्तियार कर लिया है कि असर की नमाज़ के बाद आप मस्जिद में जाकर बैठ जाते हैं और मग़रिब तक आप वहीं रहते हैं, और असर के बाद इकट्ठे बैठ कर बात चीत करने का और एक साथ इफ़तार करने का सिलसिला भी ख़त्म हो गया। हज़रत! अब कश्मकश में मुब्तला हो गया हूं कि असर के बाद का वक़्त मस्जिद में गुज़ारने का यह मामूल जारी रखूं या बीवी के कहने के मुताबिक़ इस मामूल को छोड़ दूं और घर पर वक़्त गुज़ारूं। हज़रते वाला ने उनकी बात सुनते ही फ़रमाया कि आपकी बीवी ठीक कहती हैं, इसलिये आप उनके कहने के मुताबिक़ मस्जिद में वक़्त गुज़ारने के बजाए घर पर ही वक़्त गुज़ारा करें, और घर में उनके पास बैठ कर जो तिलावत, ज़िक्र व अज़कार कर सकते हैं कर लिया करें, और फिर एक साथ रोज़ा इफ़तार किया करें।

तुम्हें इस पर पूरा सवाब मिलेगा

फिर ख़ुद ही इर्शाद फ़रमाया कि मैंने जो मामूल बनाया था वह

ज़्यादा से ज़्यादा मुस्तहब अमल है, और जो बात उनकी बीवी ने कही तो उसके हुकूक़ में यह बात दाख़िल है कि शौहर जायज़ हदों में रहते हुए उसकी दिलदारी करे, और कभी कभी यह दिलदारी वाजिब हो जाती है, इसलिये उसका दिल ख़ुश करने के लिये तुम अपना यह मामूल छोड़ दोगे तो इन्शा अल्लाह, अल्लाह तआला इस मामूल की बर्कतों से महरूम नहीं फ़रमायेंगे। इसलिये कि उसका दिल रखने के लिये और उसके मिज़ाज की रियायत करने के लिये यह मामूल छोड़ा है, इन्शा अल्लाह तुम्हें वही अज्र व सवाब हासिल होगा जो उस मामूल के पूरा करने पर हासिल होता।

ज़िक्र व अज़कार के बजाए बीमार की ख़िदमत करें

एक बार हमारे हज़रते वाला ने फ़रमाया कि एक शख़्स ने अपने मामूलात पूरे करने के लिये एक ख़ास वक़्त मुक़र्रर किया हुआ था, उस वक़्त में वह तन्हाई में बैठ कर अल्लाह तआला से अर्ज़ मारूज़ किया करता था। अब अचानक घर में कोई बीमार हो गया, वालिद बीमार हो गये या वालिदा बीमार हो गयीं या बीवी बच्चे बीमार हो गये, अब यह शख़्स उनकी तीमारदारी और ख़िदमत में लगा हुआ है जिसके नतीजे में उसके ज़िक्र व अज़कार और तस्बीहात का मामूल पूरा नहीं हो रहा है, और उसकी वजह से उसका दिल दुख रहा है कि यह वक़्त अब तक तो इबादत और ज़िक्र व अज़कार में गुज़र रहा था और अब यह तीमारदारी और ख़िदमत में गुज़र रहा है।

फ़रमाया कि यह दिल दुखाने की बात नहीं, क्योंकि उस वक़्त लोगों की तीमारदारी और ख़िदमत करना यही इबादत है, और ज़िक्र व अज़कार से ज़्यादा अफ़ज़ल है।

वक़्त का तक़ाज़ा देखिये

फ़रमाया कि दीन असल में वक़्त के तक़ाज़े पर अमल करने का नाम है। देखो इस वक़्त तुम से क्या मुतालबा है? इस वक़्त तुम से मुतालबा यह है कि इस ज़िक्र को छोड़ो और बीमार की ख़िदमत करो

और यह काम करते वक़्त यह मत ख़्याल करो कि जो ज़िक्र और तस्बीह किया करते थे उस से महरूमी हो गयी है। अल्लाह तआला महरूम नहीं फ़रमायेंगे, क्योंकि एक सही जज़्बे के तहत तुमने ज़िक्र व अज़कार छोड़ा है।

रमज़ान की बरकतों से महरूम नहीं होगा

इसी तरह एक बार हज़रते वाला ने फ़रमाया कि फ़र्ज़ करें कि एक शख़्स रमज़ान में बीमार हो गया, या सफ़र पर चला गया और उस बीमारी या सफ़र के उज़्र की वजह से रमज़ान का रोज़ा न रख सका तो बाद में क़ज़ा कर ले। चुनांचे बाद में उसने रोज़े की क़ज़ा कर ली, तो चूंकि शरई उज़्र था इसलिये जब वह शख़्स आम दिनों में रमज़ान के रोज़े की क़ज़ा करेगा, तो जिस दिन में वह क़ज़ा रखेगा उस शख़्स के हक़ में उस दिन रमज़ान ही का दिन वापस आ गया, वे सारे अनवार व बर्कतें जो रमज़ान के दिनों में थे वे सब उस दिन उसके हक़ में लौट आयेंगे, इसलिये कि उज़्र की वजह से जब अल्लाह तआला ने उसको रुख़सत अता की थी तो क्या उसको रमज़ान की बरकतों से महरूम कर देंगे? नहीं, अल्लाह तआला की रहमत से यह बात बओद है कि उसको रमज़ान की बरकतों से महरूम कर दें।

इसलिये अगर कोई शख़्स जायज़ उज़्र की बिना पर अपना कोई मामूल छोड़ रहा है या लेट कर रहा है तो इन्शा अल्लाह उस काम के अन्दर भी उसको वे सारे अनवार व बरकतें हासिल हो जायेंगे। बस वक़्त के तकाज़े पर अमल करने का नाम दीन है, यह न हो कि आप यह कह दें कि यह वक़्त तो हमारे ज़िक्र व अज़कार का है, या तिलावत का है, कोई अगर मर रहा है तो मरे, या अगर कोई बीमार पड़ा है तो पड़ा रहे, यह कोई दीन की बात नहीं है, बल्कि वक़्त के तकाज़े पर अमल करने का नाम दीन है।

बेजा ज़िद न करें

इसलिये मिज़ाजों की रियायत करो और किसी शख़्स के साथ

बर्ताव करते वक़्त यह देखो कि मेरे इस अमल से उस शख़्स के मिज़ाज के पेशे नज़र उसकी तबीयत पर कोई गिरानी नहीं होगी, कोई बार तो नहीं होगा, इसकी रियायत रखो, और यह समाजी ज़िन्दगी के सुधार की तालीम का बड़ा अज़ीम बाब (अध्याय) है। आजकल लोग इसका ख़्याल नहीं करते। जैसे किसी की तबीयत पर कोई काम बहुत बोझ होता है, अब अगर आप उसको उस काम पर इसरार और ज़िद करेंगे तो हो सकता है कि वह बेचारा ज़िद करने की वजह से मग़लूब होकर आपकी बात मान ले, लेकिन आपने उसकी तबीयत पर बोझ डाला और जो गिरानी आपने पैदा की और उस से जो तक्लीफ़ उसको पहुंची उसका सबब आप बने, क्या मालूम उसके सबब आप गुनाह में मुब्तला हो गये हों। अल्लाह अपनी पनाह में रखे।

सिफ़ारिश इस तरह की जाए

जैसे आजकल सिफ़ारिश कराने का सिलसिला चल पड़ा है, किसी दूसरे से ताल्लुक़ात का एक लाज़मी हिस्सा यह है कि ज़रूर वह मेरी सिफ़ारिश करे, और सिफ़ारिश करने के बारे में कुरआने करीम की यह आयत बहुत याद रहती है कि:

"مَنْ يَّشْفَعْ شَفَاعَةً حَسَنَةً يَّكُنْ لَّهٗ نَصِيْبٌ مِّنْهَا"

यानी जो शख़्स अच्छी सिफ़ारिश करे तो अल्लाह तआला उस काम में उसका हिस्सा भी लगा देते हैं। और अच्छी सिफ़ारिश करने की बड़ी फ़ज़ीलत है, और हक़ीक़त में बड़ी फ़ज़ीलत है, लेकिन लोग यह बात भूल जाते हैं कि सिफ़ारिश उस वक़्त फ़ज़ीलत का सबब है जब इस बात का लिहाज़ करते हुए सिफ़ारिश की जाये कि जिस से सिफ़ारिश की जा रही है उसकी तबीयत पर बार न हो। अब अगर आपने एक शख़्स की रियायत और उसकी दिलदारी की ख़ातिर उसकी सिफ़ारिश तो कर दी लेकिन जिसके पास सिफ़ारिश की उसकी तबीयत पर एक पहाड़ डाल दिया, वह तो यह सोचेगा कि

इतना बड़ा शख़्स मुझ से सिफ़ारिश कर रहा है, अब अगर मैं इस सिफ़ारिश को क़बूल करूं तो मुश्किल, इसलिये कि इसकी वजह से अपने उसूल और क़ायदे तोड़ने पड़ते हैं, और अगर सिफ़ारिश क़बूल न करूं तो उसकी दिल शिक्नी होती है। यह सिफ़ारिश न हुई, यह तो दबाव डालना हुआ। इसलिये दूसरे के मिज़ाज की रियायत रखते हुए सिफ़ारिश करनी चाहिये।

हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि का हमेशा का मामूल यह था कि जब भी किसी की सिफ़ारिश करते तो यह इबारत ज़रूर लिखते कि "अगर आपकी मस्लिहत और उसूल के ख़िलाफ़ न हो तो आप इनका यह काम कर दीजिये"। कभी कभी यह इबारत भी बढ़ा देते कि "अगर आपकी किसी मस्लिहत के ख़िलाफ़ हो और आप यह काम न करें तो मुझे मामूली सी भी नागवारी नहीं होगी"। यह इबारत इसलिये लिख देते ताकि उसके दिल पर बोझ न हो। यह है सिफ़ारिश का तरीक़ा।

एक साहिब मेरे पास आये और ताल्लुक़ात की मद में कहने लगे कि देखो भाई! मैं तुमसे एक काम कहना चाहता हूं, मैंने पूछा कि क्या काम है? कहने लगे कि ऐसे नहीं, बल्कि पहले यह वायदा करो कि यह काम करोगे। मैंने कहा जब तक मुझे पता नहीं कि वह काम क्या है, मैं कैसे वायदा कर लूं कि मैं यह काम करूंगा। वह कहने लगे कि नहीं, पहले वायदा करो कि मेरा वह काम करोगे। मैंने कहा कि अगर वह काम ऐसा हुआ जो मेरे बस में न हो तो फिर क्या करूंगा। कहने लगे कि वह काम आपके बस में है। मैंने कहा, बता तो दें कि वह क्या काम है? कहने लगे कि मैं उस वक़्त तक नहीं बताऊंगा जब तक आप यह वायदा न करें कि यह काम करूंगा।

मैंने उनको हज़ार समझाया कि पहले उस काम की तफ़सील तो मालूम हो, तो वायदा करूं, ऐसे कैसे वायदा कर लूं। कहने लगे कि अगर आप इन्कार कर रहे हैं तो यह ताल्लुक़ात के ख़िलाफ़ बात होगी। अब आप बताइये कि क्या यह तरीक़ा सही है? यह तो एक

शख़्स को दबाव में डालना है कि जब तक उस काम को करने का वायदा नहीं करोगे उस वक़्त तक बतायेंगे भी नहीं। चुनांचे आजके ताल्लुक़ात का यह लाज़मी हिस्सा है कि आदमी दूसरे की सिफ़ारिश करे। हालांकि यह बात इस्लामी ज़िन्दगी के तरीक़ों के क़तई ख़िलाफ़ है। इसलिये कि आपने एक आदमी को ज़ेहनी कश्मकश में मुब्तला कर दिया और बिला वजह एक आदमी को कश्मकश और ज़ेहनी परेशानी में डालना गुनाह है।

ताल्लुक़ रस्मी चीज़ों का नाम हो गया है

आजकल ताल्लुक़ और मुहब्बत सिर्फ़ "रस्मी चीज़ों" का नाम हो गया है। अब अगर वे "रस्मी चीज़ें" पूरी हो रही हैं तो ताल्लुक़ात का हक़ अदा हो रहा है, और अगर "रस्मी चीज़ें" पूरी नहीं हो रही हैं तो ताल्लुक़ात का हक़ अदा ही नहीं हुआ। जैसे अगर किसी को दावत दी तो बस अब उसके सर पर बैठे हुए हैं कि ज़रूर उस दावत को क़बूल करें। इसका एहसास नहीं कि उस दावत की वजह से वह कितनी दूर से आयेगा, कितनी तक्लीफ़ उठा कर उस दावत में शिर्कत करेगा, उसके हालात दावत क़बूल करने की इजाज़त देते हैं या नहीं, इस से उस दावत देने वाले को कोई बहस नहीं, उसको तो दावत ज़रूर देनी है और उसको बुलाना है।

हज़रत मुफ़्ती साहिब रह. की दावत

हमारे एक बुज़ुर्ग गुज़रे हैं हज़रत मौलाना मुहम्मद इदरीस साहिब कांधलवी रहमतुल्लाहि अलैहि, अल्लाह तआला उनके दर्जे बुलन्द फ़रमाये, आमीन। यह बुज़ुर्ग मेरे वालिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि के बचपन के ख़ास दोस्तों में से थे। एक बार लाहौर से कराची तशरीफ़ लाये और वालिद साहिब से मुलाक़ात के लिये दारुल उलूम तशरीफ़ लाये, और ऐसे वक़्त तशरीफ़ लाये कि वह खाने का वक़्त नहीं था। उनके आने पर हज़रत वालिद साहिब बहुत ख़ुश हुए और बड़े शानदार तरीक़े से

उनका इस्तिक़बाल (स्वागत) किया, जब वह रुख़्सत होने लगे तो हज़रत वालिद साहिब ने अर्ज़ किया कि "भाई मौलाना इदरीस साहिब! मेरा दिल चाह रहा था कि एक वक़्त का खाना आप हमारे साथ खा लेते, लेकिन मुसीबत यह है कि आपका क़ियाम बहुत दूर है, और आपके पास वक़्त कम है, एक दिन के बाद आप वापस लाहौर जा रहे हैं। अब अगर मैं आप पर इसरार करूं कि आप एक वक़्त का खाना मेरे साथ खायें तो मैं यह समझता हूं कि यह दावत न होगी बल्कि अदावत (दुश्मनी) हो जायेगी। इसलिये कि आपके पास वक़्त कम है, आप इतनी दूर से खाने के लिये आयेंगे तो उसमें चार या पांच घन्टे आपके ख़र्च हो जायेंगे, उसमें आपको मशक़्क़त और तक्लीफ़ होगी, इसलिये मैं आपकी दावत तो नहीं करता अगरचे मेरा दिल दावत करने को चाह रहा है, लेकिन दावत के बग़ैर भी दिल नहीं मानता, इसलिये मैं आपकी ख़िदमत में थोड़ा सा हदिया पेश करता हूं और जितने पैसे मैं दावत में ख़र्च करता उतने पैसे आप मेरी तरफ़ से हदिया कबूल कर लीजिये। हज़रत मौलाना इदरीस साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि ने वह पैसे उनसे लिये और अपने सर पर रख लिये और फ़रमाया कि यह मेरे लिये बड़ी अज़ीम नेमत है। और वाक़िआ यह है कि मेरा दिल भी यह चाह रहा था कि आपके पास हाज़िर होकर आपके साथ खाना खाऊं लेकिन वक़्त मेरे पास इतना कम है कि उसके अन्दर गुन्जाइश नज़र नहीं आ रही थी, और आपने पहले ही मेरे लिये यह रास्ता आसान कर दिया।

अब बताइये! अगर वालिद साहिब उनसे यह कहते कि नहीं, एक वक़्त का खाना आपको मेरे साथ ज़रूर खाना पड़ेगा, और वह जवाब में यह कहते कि मेरे पास तो वक़्त नहीं है, वालिद साहिब कहते कि नहीं भाई! दोस्ती का तक़ाज़ा यही है कि एक वक़्त का खाना आप ज़रूर मेरे साथ आकर खायें। तो इसका नतीजा यह होता कि जिस काम के लिये वह इतना लम्बा सफ़र करके आये हैं वह काम छोड़ते और दावत खाने के लिये पांच घन्टे क़ुरबान करते। यह दावत न

होती बल्कि अदावत (दुश्मनी) होती।

मुहब्बत नाम है महबूब को राहत पहुंचाने का

आज इन रस्मों ने न सिर्फ़ हमारे समाज को तबाह कर रखा है बल्कि दीन के अख़्लाक़ व आदाब से भी हमें दूर कर दिया है। हज़रत मौलाना थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने क्या ख़ूबसूरत बात इर्शाद फ़रमाई है। अगर अल्लाह तआला यह बात हमारे दिलों में उतार दे तो हमारे सारे काम संवर जायें, फ़रमाया कि: "मुहब्बत नाम है महबूब को राहत पहुंचाने का" जिस से मुहब्बत है उसको आराम पहुंचाओ, अपनी मन मानी करने और अपनी ख़्वाहिशों को पूरा करने का नाम मुहब्बत नहीं। अगर मुहब्बत करने वाला आशिक़ नादान और बेवकूफ़ हो तो उसकी मुहब्बत से महबूब को तक्लीफ़ पहुंच जाती है, लेकिन हमारे हज़रते वाला रहमतुल्लाहि अलैहि का ज़ौक़ यह है कि मुहब्बत से तक्लीफ़ पहुंचने के कोई मायने नहीं हैं, अगर तुमको किसी से मुहब्बत है तो उसको तक्लीफ़ मत पहुंचाओ, चाहे अपने जज़्बात को क़ुरबान करना पड़े, लेकिन राहत पहुंचाओ।

यह सब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इस इर्शाद की तश्रीह (ख़ुलासा) हो रही है कि:

"خالقوا الناس باخلاقهم"

यानी लोगों के साथ उनके मिज़ाज के मुताबिक़ मामला करो। जिस से मामला करने जा रहे हो पहले यह देख लो कि उसका मिज़ाज क्या है, उसके मिज़ाज पर यह बात बार तो नहीं होगी, नागवार तो नहीं होगी। और यह चीज़ बुज़ुर्गों की सोहबत के बग़ैर हासिल नहीं होती, हमारा तो यही तजुर्बा है। हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने अपनी ख़ानक़ाह में लोगों की इस तरह तर्बियत फ़रमाई कि लोगों के मिज़ाज की किस तरह रियायत रखी जाती है। लोगों के एक एक अमल पर निगाह रखी और उनको यह तालीम दी कि इस मौक़े पर आपको यह अमल करना चाहिये।

यह समाजी ज़िन्दगी के आदाब के सिलसिले में आख़री हदीस थी, इसमें सारे अहकाम और सारे आदाब की बुनियादें बयान फ़रमाई हैं, कि अपनी ज़ात से दूसरों को मामूली सी तक्लीफ़ भी न पहुंचे। इस बात का आदमी एहतिमाम और ध्यान करे। हर काम करने से पहले आदमी यह सोचे कि इस काम से दूसरों को तक्लीफ़ तो नहीं पहुंचेगी, और दूसरे के मिज़ाज की रियायत करे।

एक शायर गुज़रे हैं जिनका नाम है "जिगर मुरादाबादी मरहूम" यह भी हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि की सोहबत में पहुंच गये थे, उनका एक शेर बड़े काम का है, अगर यह शेर हमारा अ़मल का दस्तूर बन जाये तो यह सारे इस्लामी ज़िन्दगी के आदाब का ख़ुलासा है। वह यह है किः

इस नफ़ा व ज़रर की दुनिया में यह हमने लिया है दर्से जुनूं
अपना तो ज़ियां मन्ज़ूर सही, औरों का ज़ियां मन्ज़ूर नहीं

यानी इस दुनिया में सारे काम अपनी तबीयत और मिज़ाज के मुताबिक़ नहीं होते, लेकिन इस दुनिया के काम अपनी तबीयत के ख़िलाफ़ हो जायें और अपने ऊपर मशक़्क़त उठा लें और अपनी तरफ़ से कुरबानी दे दें, तो यह हमें मन्ज़ूर है, लेकिन दूसरों को हम से कोई माली, जानी, ज़ेहनी, नफ़्सियाती नुक़सान पहुंच जाये, तो यह हमें मन्ज़ूर नहीं। यही सारे दीन की तालीम है, और यही समाजी ज़िन्दगी के आदाब का ख़ुलासा है। अल्लाह तआ़ला मुझे और आप सब को इस पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

واٰخردعوانا ان الحمد للہ رب العالمین